रतननाथ 'सरशार' की अमर कृति

पर्वत की सैर

रूपान्तरकार

बसन्तकुमार माथुर

सरस्वती प्रेस, बनारस

भूमिका

'आज़ाद-कथा' के प्रणेता, उर्दू साहित्य के अमर रत्न रतननाथ 'सरशार' से हमारे पाठक अपरिचित नहीं हैं। 'कामिनी' और 'पी कहाँ तथा हुश्शू' के बाद उनकी एक और अनमोल कृति 'पर्वत की सैर' अपने पाठकों के हाथों में समर्पित करते हुए हमें अत्यन्त हर्ष और सन्तोष हो रहा है।

'पर्वत की सैर' नवाबी युग के अन्तिम चरण और अंग्रेज़ी शासन काल के आरम्भिक दिनों की रचना है। 'सरशार' की कुशल लेखनी ने उस संक्रान्ति काल को साहित्य में सजीव कर दिया है। ध्वन्सोन्मुख सामन्ती समाज के नवाबों के विलास-लोलुप जीवन का जितना सही ख़ाक़ा इस उपन्यास में 'सरशार' ने प्रस्तुत किया है वह अत्यन्त्र दुर्लभ है। अतएव साहित्य के पाठकों के लिए इस रचना का साहित्यिक के साथ ही ऐतिहासिक महत्त्व भी है।

मूल उर्दू में यह उपन्यास बहुत बड़ा है। इसका विस्तार और शब्द-बाहुल्य आज के पाठक के लिए संभवतः प्रीतिकर न हो, इसलिए अनुवाद के समय उस विस्तार का कुछ अनावश्यक अंश हमने निकाल दिया है। परन्तु ऐसा करने में उपन्यास की कहानी, शैली और गठन को कोई क्षति नहीं पहुँचने दी है। हमारा विश्वास है कि हमारे पाठकों को भी 'पर्वत की सैर' का यह रूप अवश्य पसन्द आयेगा।

—प्रकाशक

पहाड़ क्या चीज़ है

नवाब मुहम्मद अस्करी लखनऊ के रईसज़ादे अमीर कबीर के लड़के, पोतड़ों के रईस, मगर नख़ास अनवरगंज और हुसेनाबाद के बाहर क़दम नहीं रखा। दरबार लगा हुआ है, और हवाली-मवाली जमा हैं।

अस्करी—क्यों साहब, गर्मियों में साहब लोग छुट्टियाँ क्यों ज़्यादह लेते हैं? इसका कोई सबब ज़रूर है, क्योंकि यह अपने वक्त के लुक़मान हैं। गर्मी की फ़सल में कम-से-कम फ़ी सदी अस्सी ज़रूर महीने-दो-महीने की छुट्टी लेंगे। आज बड़े साहब छुट्टी पर हैं तो कल छोटे साहब गये, और परसों जरनैल साहब का असबाब लद रहा है। गर्मियों भर यही ताँता बँधा रहता है और सर्दिया में इक्का-दुक्का ही कोई छुट्टी लेता हो तो लेता हो; जिसे देखिये दौरे पर है। यह क्या बात है?

नूर—हुज़ूर, इसका सबब यह है कि गर्मियों में साहब लोग पहाड़ जाया करते हैं। उनका मुल्क तो ठण्डा होता है न? यहाँ की गर्मी उनको बहुत खलती है। बस, इसी सबब से वे कुछ दिनों के लिए पहाड़ चले जाते हैं।

अस्करी—यह पहाड़ है क्या चीज़? पहाड़ का नाम तो बरसों से सुनते आये हैं; मगर कभी जाने का इत्तफाक़ नहीं हुआ। जितनी मुश्किल मिसाले हैं, वे सब पहाड़ों के लिए ही हैं। जैसे लोग कहते हैं कि फलाँ काम करना क्या पहाड़ उठाना है तो हज़रत, इससे तो पाया जाता है कि पहाड़ कोई वज़नी चीज है।

मम्मन—वज़नी तो ज़रूर होगा—मगर आखिर वज़न की भी कोई हद है। बहुत वज़नी होगा तो कोई छः मन का होगा!

अ०—नहीं, छः मन तो क्या होगी ! अगर वाकई छः ही मन होता है तो लाहौलबिला कूव्वत कोई ऐसी भारी चीज़ नहीं है। लोग तो हाथी इतने बड़े जानवर को दुम पकड़कर रोक लेते हैं तो हुमसने नहीं देते। हाथी क्या अब छः मन से भी कम होगा ?

म०—क्यों जनाब, यह पहाड़ आखिर कोई पत्थर है, या सीसा है, या ईंट का बना हुआ है, या रुई का गट्ठर है ? यह है क्या ?

अ०—(कानों पर हाथ रखकर) भई, कोई बड़ी वज़नी शै है, जैसे नाल, जिसे पहलवान लोग उठाते हैं। हमने पहाड़ आज तक कभी नहीं देखे, मगर ऊँचे-ऊँचे टीले ज़रूर देखे हैं। पहाड़ इन टीलों से कोई चौगुने ऊँचे होते होंगे - ज्यादह-से-ज्यादह दसगुने सही।

नूर—जी हाँ, बस इन्तिहा है। और क्या मील भर के होते होंगे ?

अ०—अब यह जानना ज़रूरी है कि यह किस चीज के बने होते हैं। सुना है, पहाड़ों पर पेड़ भी होते हैं, तो इससे तो मालूम होता है कि मिट्टी का मेल ज़रूर है और मेज़ क्या मानी मिट्टी ही के होते होंगे, तभी तो पेड़ उगते हैं।

म०—पेड़ तो पत्थर पर उग नहीं सकते, इसलिए मिट्टी ही समझिये। हुज़ूर मगर किसी पुराने वक्त की मिट्टी होगी। यह बोदी फुसफुसी मिट्टी न होगी कि पानी पड़ा और फिसल गयी। वह मिट्टी भी पत्थर की तरह कड़ी होगी।

अ०—मगर साहब लोग पहाड़ों पर जाते क्योंकर हैं ? हमने तो सुना है कि वहाँ कोई जा ही नहीं सकता, और अगर कोई गया भी तो सख्त मुसीबत से इन्सान जा पाता है, और कई फीट की चढ़ाई चढ़नी होती है। भला, अक्ल में यह बात आ सकती है कि इतनी बड़ी चढ़ाई कोई चढ़ सकेगा ? लाहौल-बिला कूव्वत बहुत हुई भाई साहब। यहाँ तो भाई साहेब, अगर

सीधे ज़ीने हों, तो ४० ज़ीनों के बाद दम टूट जाय। अगर ज़ीने चौड़े हों और सीधे चले गये हों, तो दस भी दूभर हो जायँ, न कि कोसों की चढ़ाई चढ़नी; और वह भी कौन चढ़ाई—पहाड़ों की?

नूर—(मुस्कराकर) हुज़ूर भी उन रईसों में से हैं, जो खुश्के का खेत ढूँढ़ते हैं। पहाड़ों से बिलकुल वाक़िफ़ ही नहीं। पहाड़ों को तो आप बिलकुल खिलौना ही समझे हुए हैं। आप कई फ़ीट की चढ़ाई को रो रहे हैं और यह मालूम ही नहीं कि पहाड़ों की चोटियाँ सात-सात हज़ार फ़ीट ऊँची होती हैं। होश तो उड़ गये होंगे जनाब के? अरे! तुमने देखे ही नहीं नाज़ो-नज़ाकत वाले!

अ०—सात हज़ार फ़ीट, होश उड़े गये वल्लाह! सात हज़ार फ़ीट की ऊँचाई का कुछ ठिकाना है। भाई हमें तो यक़ीन नहीं आता। आप हमें ना वाक़िफ़ समझकर बनाते हैं। सात हज़ार फ़ीट कुछ आपने दिल्लगी मुक़र्रर की है। पहाड़ न हुआ, कोई आसमान हुआ। आसमान भी तो आखिर—

नूर—हाँ, हाँ क्या? आसमान भी तो आखिर क्या? आप कुछ फ़रमाने को थे, मगर दबे-दाँतों कहकर रह गये। सात हज़ार फ़ीट की ऊँचाई तो कोई ऊँचाई नहीं है, भाईजान! उन्तीस-उन्तीस हज़ार फ़ीट की ऊँचाई होती है। पाँच मील—ढ़ाई कोस। आप हैं किस ख्याल में बन्दानवाज़? आपने शहर की चढ़ाई की अच्छी कही, आप एक बार चलके देखते तो कि पहाड़ क्या शै है।

म०—खुदा की पनाह हो तो आदमी कोई सात-आठ घंटे में पहाड़ की ऊँचाई ढाई कोस चढ़ सकता होगा। हम ऐसे तो हाँफ ही जायें।

नूर—(हँसकर) सात-आठ घंटे माशाअल्लाह। अजी जनाब, पहाड़ों की कड़ी चढ़ाई से अभी आप वाकिफ़ ही नहीं। इस

चक्कर के साथ जाना होता है कि कुछ न पूछो। यह थोड़ा ही है कि पहाड़ की चोटी पर आप सीधे ही पहुँच जायँ। यह भी कोई मैदान है कि सीधा चला जाय। चक्कर खाकर जाना पड़ता है। चील को कभी मँडलाते हुए देखा है ?

अ०—आपने भी ग़ज़ब किया वल्लाह, अब क्या चील और कौए को भी उड़ते नहीं देखा है।

नूर—अच्छा, भला चील क्योंकर उड़ती है ? चील को कभी सीधा उड़ते हुए देखा होगा। जब उड़ेगी चक्कर खाकर मँडलाती हुई। अगर सीधी उड़े तो दम टूट जाय। बात यह है कि पहाड़ को देखे बगैर दुनिया के ऊँच-नीच से इन्सान वाक़िफ़ नहीं हो सकता। ऊँच-नीच तो इन्सान तभी देख सकता है, जब कि पहाड़ की चोटी पर चढ़े और फिर नीचे उतरे।

अ०—वाह वा ! क्या बात कही है। तो हज़रत, किसी तरह पहाड़ों की सैर करनी चाहिए।

[२]

पहाड़ के सफ़र का शौक़

मियाँ नूर की बातों से मुहम्मद अस्करी को पहाड़ देखने का शौक़ चर्राया। मुहम्मद अस्करी स्वयं मेधावी और अक्लमन्द थे, मगर हवाली-मवाली-दोस्त, मुसाहिब सब लुच्चे मिले थे। रहन-सहन क़ाबिल अफ़सोस था। इनके यहाँ ११ बजे तड़का होता था-११ बजे तक पड़े सोते रहते थे। ११ बजे करवटें इधर-उधर बदलीं, आँखें मलते हुए उठे और फिर लेट गये। ख़िदमतगार आया और पाँव दाबने शुरू किये तो फिर आँख लग गयी। १२ बजे के बाद आँख खुली। पलँग ही पर बैठे-बैठे मुँह धोया, नौकर पेचवान भर लाया, मुहम्मदअली की दूकान का दुसेरा मुश्कबू तम्बाकू, खास दान में गिलौरियाँ आयीं—सरकार ने लेटे-ही-लेटे खायी।

इतने में मुसाहिब आये, फिकरेबाज़ी शुरू हुई। एक घंटे तक गप्पें उड़ा कीं। एक घंटे बाद चण्डू का शग़ल हुआ। खुद नवाब साहिब और कुल मुसाहिब औंधे पड़े हुए चण्डू उड़ाने लगे। जब कई छींटे पी चुके और खूब धुत हो गये तो थोड़ी देर में खिदमतगार ने अर्ज किया कि खुदावन्द, खासा (खाना) चुना गया। खाने के वक्त गप्पें लड़ने लगे।

अस्करी—इरादा है कि अबके पहाड़ का सफ़र करें।

अख्तर—हुज़ूर पहाड़ का सफ़र करेंगे?

मम्मन—खैर तो है खुदावन्द, यह सफ़र कैसा।

अ०—हमें शर्म आती है कि आज तक पहाड़ नहीं देखा।

म०—इसमें शर्म की क्या बात है, खुदावन्द? पहाड़ देखने से क्या कारूँ का खज़ाना मिल जायगा? खुदावन्द, हरगिज़-हरगिज़ पहाड़ जाने का इरादा न कीजियेगा। तौबा-तोबा। जनाब वालिद को एक बार जाने का इत्तफाक हुआ था। वसीयत कर गये हैं कि बेटा, अगर कोई करोड़-दो-करोड़ रुपया दे तो भी पहाड़ की तरफ़ रुख न करना। खुदावन्द, गुलाम हाथ जोड़कर अर्ज करता है कि खुदा के लिए हुज़ूर यह ख्याल दिल से निकाल डालें।

अख्तर—यह क्यों, आखिर इसका सबब? अरे मियाँ, पहाड़ों ने क्या कुसूर किया है? आखिर कुछ मालूम भी तो हो?

म०—हुज़ूर, बस, यह मुलाहिज़ा फरमावें कि जनाब वालिद ने पहाड़ के सफ़र में वह तकलीफ़ उठायी कि वसीयत कर गये। अव्वल तो हुज़ूर कोसों की चढ़ाई चढ़ना। भला हुज़ूर से चढ़ी जायेगी? दरगाह तक जाते हुए हाँफ जाते हैं हुज़ूर, न कि कोसों की चढ़ाई, और फिर रास्ता इस क़दर खराब कि अलअमाँ। ज़रा-सी पगडण्डी और दोनों तरफ कोसों की नीचाई। नीचे देखा और थरथरा कर आदमी गिर पड़ा। दाहिनी तरफ देखो तो खौफ़,

और बायीं तरफ़ नज़र डालो तो खौफ़। अगर कहीं पत्थरों में आग लगी तो चलिये, बस खतम हुए, जल-भुनकर कवाब हो गये

नूर—वाही हो खासे। और यह जो लखूखा आदमी पहाड़ों पर रहते हैं, ये क्योंकर रहते हैं ?

म० उनकी बात और है भाईजान !

नूर—और बात कैसी, क्या वह इन्सान नहीं हैं ?

म०—भला, हुजूर पहाड़ के सफ़र के क़ाबिल हैं।

नूर—क्यों नहीं, टट्टुओं पर चलेंगे।

म०—टट्टू पर छः कोस की चढ़ाई पर जायेंगे ? होश की दवा करो। और जो टट्टू ठोकर ले ?

अ०- वाह, हमसे न जाया जायगा। बन्दा ऐसे सफ़र से दूर गुज़रा, और जो टट्टू भड़के तो कहीं के न रहे।

म०—गिरे तो हड्डियाँ तक न मिलें। ऐ तोबा चकनाचूर हो जाय। खुदावन्द, ज़रा-सी ऊँचाई पर से इन्सान देखता है तो काँपने लगता है, न कि पहाड़ की चढ़ाई। खुदा की क़सम, ज़रा नीचे की तरफ नजर की और काँप उठा। ऐ हज़रत ! तोबा ही भली।

अ०—हमसे चढ़ाई पर न चढ़ा जायगा—और ऐसी चढ़ाई ! मगर क्या इधर-उधर ईंट या पत्थर की मुंडेरें नहीं बनी हुई हैं ?

नूर—(हँसकर) खुदावन्द, मंज़िलों और बरसों के रास्ते में मुँड़ेर कैसी ? दो सौ मंज़िल तो एक मामूली पहाड़ी का एक हिस्सा होता है।

अख्तर—सुनते हैं हुजूर, कि पहाड़ की औरतें बड़ी हसीन होती हैं।

अ०—वल्लाह, भई जरूर चलेंगे। लाख काम छोड़ के चलें और फिर चलें। चाहे भई इधर की दुनिया उधर हो जाये, हम जरूर चलेंगे।

म०—इन पहाड़िनों का मज़हब क्या है ?

अ०—अजी, इससे क्या बहस है ? वह हिन्दू हों या मुसलमान, हमें तो मतलब हुस्न से है । मेरा बस चले तो मैं इन जाहिल हिन्दू-मुसलमान दोनों को शहर-बदर करा दूँ । अल्लाह अकबर कैसी अदावत है ! यह आख़िर इतनी अदावत है क्यों ?

अख्तर—हुजूर तास्सुब । तक़रीर इख़्तलाफ में क्योंकर बढ़े नहीं ! हिन्दू पढ़े नहीं कि मुसलमान पढ़े नहीं ?

खाने से छुट्टी पायी तो गरमागरम दूधिया चाय आयी, और नवाब साहिब ने मुसाहिबों के साथ पी । हुक्के-पेचवान आये, मुश्क़बू तम्बाकू ने सारी महफ़िल बसा दिया । मुहम्मद अस्करी पलँग पर लेट रहे; ख़सख़ाने को भिश्ती ने तर कर दिया; कुली ने पंखा खींचना शुरू किया । मुसाहिब भी लेटे, खुशगप्पियाँ होने लगीं । एक ने कहा-क्यों हुजूर, मुझे यह हैरत है कि यह आसमान बिना खम्भों के क्योंकर खड़ा है । दूसरा बोला—खुदावन्द, पुलाव खाने के बाद भी वल्लाह क्या दूर की सूझती है । पूछते हैं कि आसमान बेसितून के क्योंकर खड़ा है । बहुत दूर की सूझी, हुजूर ! तीसरा-खुदावन्द, अब तो यह जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाने लगे । इस पर बड़ा क़हक़हा पड़ा । मुहम्मद अस्करी भी खिलखिलाकर हँस पड़े । मुसाहिब ने उठकर तीन बार सलाम किया और कहा—हुजूर, यह सब हुजूर की सोहबत का असर, वरना मैं किस खेत की मूली हूँ ?

[३]

बेगम का रूठना

मुहम्मद अस्करी ने जो यह रंग देखा तो दंग हो गये और मुग़लानी से इसकी वजह पूछी ।

मुग़लानी—हुजूर, किसीने बेगम साहिब से आन के जड़ दी

कि सरकार पहाड़ के सफ़र की तैयारी कर रहे हैं। बस, इत्ता सुनना था कि जैसे हाथों के तोते उड़गये। वह महनामथ मचायी कि तोबा ही भली। कई दफ़ा महरी को भेजा कि जाकर बुला लाओ। हुज़ूर आराम में थे। खिद्मतगार ने कहा कि अभी-अभी आँख लगी है, कच्ची नींद जगाने की किसी ने सलाह नहीं दी। सिर्फ़ यही बात है हुज़ूर!

अस्करी—(मुसकराकर) भई, क्या-क्या बाँधनू लोग बाँधते हैं, और इनकी क्या अक़्ल है वल्लाह; बात का बतंगड़ इसी को कहते हैं। भला, हम और सफ़र करेंगे; और वह भी पहाड़ का? ऐ लाड़ो, बेगम को समझा दो कि किसी ने गप उड़ा दी है।

बेगम—(तिनककर) बस, बहुत बढ़-बढ़कर बातें न बनाओ। गप उड़ायी है, या मैं अपने कानों सुन चुकी हूँ?

अ०—यह बड़े ऐब की बात है। मर्द आपस में न जाने क्या-क्या करते हैं। औरतों का छुप-छुपकर सुनना क्या मानी। मगर तुमसे कौन कहे।

बे०—तुम ऐसे मर्द इसी क़ाबिल हैं। जो इत्तो वह न करूँ, तो तुम तो मेरे सिर पर चक्की दलो। बैठे-बैठे यह उपज कर ली कि पहाड़ पर जायँगे। कोई पूछे मुए कि पहाड़ में क्या है? घर-बार को तजके जंगल में जाना किसने बताया है? यह सूझी क्या अनोखी।

अ०—तो जाता कौन है? इस बात का तो कोई ज़िक्र भी न था। तुम तो ख्वाहमख्वा लड़ने लगीं।

बे०—ऐ लो, और सुनो। ग़ज़ब ख़ुदा, इत्ता झूठ! मैं अपने कानों सुने चली आती हूँ—एक बेचारा कह रहा था कि अब्बा मरते वक्त वसीयत कर गये कि बेटा भूलकर भी पहाड़ों की तरफ़ रुख़ न करना। और तुम कहते हो कि इस बात का ज़िक्र

भी न था। हमारे भी गोइन्दे छूटे रहते हैं। हमको रत्ती-रत्ती ख़बर पहुँचती रहती है। यह न जानना—

अ०—इन सब आदमियों को न एकदम से अलग किया हो तो सही। इधर की उधर लगाते हैं। यह तुमसे आकर किसने ज़टल उड़ायी, उसका नाम तो बताओ, अभी-अभी, इसी दम न निकाला हो तो सही।

बे०—वाह वा! क्या हँसी-ठट्ठा है, निकाल देंगे। तुम तो बस उन्हीं लोगों से खुश रहते हो जो वेसवायें बुलायें। हुजूर, जगदीशपुर की एक देहातिन हैदरगंज में आन के टिकी है। अभी कोई चौदहवाँ साल है, और चेहरे पर बड़ी नमकीनी है। बस, तुम खिल गये कि वाह, क्या अच्छा आदमी है। मैं सब सुना करती हूँ। हमको रत्ती-रत्ती ख़बर मिलती रहती है। तुमने उड़ायी है तो हमने भी भून-भून खायी है। जबसे मैंने सुना है, कलेजा काँप उठा है। वाह! क्या सूझी है।

अ०—क़सम खाकर कहता हूँ, सब बातें-ही-बातें हैं। जाना और आना कैसा? हम-जैसे सफ़र के क़ाबिल हैं भला! और फिर पहाड़ का सफ़र? हम भला अपने वतन को छोड़कर कब जानेवाले हैं—

क्या हक़ीक़त चर्ख़ की हमसे छुड़ाये लखनऊ।
लखनऊ हम पर फ़िदा है हम फ़िदाये लखनऊ।

पहाड़ कोई और ही जाया करते होंगे।

बे०—बन्दी इन बातों में न आने की। शरई क़सम खाओ तो मानूँ। हाँ, हमारे सिर की क़सम खाओ, तो शायद यक़ीन आ जाये।

अ०—(मुस्कराकर) या ख़ुदा! यह बदगुमानी। बड़ी अक़्लमंद हो। बस, तुम्हारी अक़्ल आज़मा ली। ज़रा-सी बात में कोई इतना रूठ जाता है।

बे०—(चुटकी लेकर) यह तुम्हारे नज़दीक ज़रा-सी बात

है। जिस बात में दुश्मनों की जान का ख़तरा हो उसको ज़रा-सी बात समझते हो ?

अ०—बेगम, क़सम से कहता हूँ, पहाड़ जाने का कोई इरादा नहीं है। अब तो हुई तसल्ली ? इस तरह बेगम को तसल्ली देकर नवाब साहिब बाहर चले गये।

[४]

पहाड़ का हाल

दरबार लगा हुआ है, हुक्के पेचवान चल रहे हैं और मियाँ नूर पहाड़ का हाल सुना रहे हैं।

नूर—हुजूर, पहाड़ों की आबोहवा के क्या कहने। उससे दिमाग़ को ताक़त, आँखों को नूर, रूह को सुरूर और दिल को ताज़गी मिलती है। वह ठण्ढी-ठण्ढी हवा के झोंके और बर्फ़ीला पानी। चाहे जितना खाना खाओ फ़ौरन् हज़म, पानी चूरन की ख़ासियत रखता है। पहाड़ों की ऊँची चोटियाँ, उन पर दरख़्त, फूलों की लपट और उनकी बू-बास, सामने झरनों की रवानी और तालाब के साफ़ पानी की झलक—वह लुत्फ़ दिखाती हैं जो देखने के क़ाबिल है। ख़ुशनसीब हैं वे लोग, जो पहाड़ों पर रहते हैं। और यहाँ आजकल यह हाल है कि मारे लू के थपेड़ों के इन्सान झुलसे जाते हैं :—'गर चश्म से निकल के ठहर जाये राह में, पड़ जाये लाख आबले पाये निगाह में।' पहाड़ों के मुकाबिले यह जगह दोज़ख़ है।

मम्मन—आख़िर इसका सबब क्या है कि रात भर का रास्ता और वहाँ इस क़दर सरदी। कोई सबब जरूर होगा, हुज़ूर !

अस्करी—मियाँ, इसका सबब क्या पछते हो। ख़ुदा की

कुद्रत बस यही इसका सबब है। ज़ाहिर तो सबब यही मालूम होता है कि क़ुतुब वहाँ से क़रीब होगा जभी इस क़द्र सर्द है।

नूर—भला हुज़ूर को यह बात कहाँ से मालूम हो गयी? क्या ज़हन ख़ुदादाद पाया है। वाह वा!

अ०—भाई साहिब, बन्दा तो आप लोगों के सामने से हटा भी नहीं, मगर बैठे-बैठे ज़ेहन में एक बात आ गयी, अर्ज़ कर दी; वर्ना हम पहाड़ों का हाल क्या जानें?

म०—ज़ेहन में इतनी बातों का आ जाना कोई हँसी-ठट्ठा है भला? यह भी हुज़ूर ही का हिस्सा है। हर एक शख़्स के ज़ेहन में बरसों ग़ौर करने पर यह बात न आये। वाह, क्या बात है?

नूर—हाँ, तो हुज़ूर! सारी ख़ुदाई की न्यामतें एक तरफ़ हैं और पहाड़ का रहना एक तरफ़। बस, यह समझ लीजिये कि नमूना बहिश्त है। चार-पाँच महीने का रहना बरसों के पुराने मर्ज़ों को खो देता है। ख़ुशगवार मौसम और हाज़िम पानी अक्सीर का काम करते हैं। बूढ़ा आदमी जाय तो जवान हो जाय। अगर दो मन का वज़न हो, तो वहाँ रहने से डेढ़ ही मन रह जाता है।

म०—यह क्या बात। आबोहवा अच्छी है, तो चाहिए था कि हुज़ूर, दो की जगह ढाई मन वज़न हो जाता न कि और एक-आध मन घर से जाय और दो मन का डेढ़ ही रह जाय। यह अजब उलटघाँसी बात है।

नूर—यह बहुत नाज़ुक बात है। इसका समझना ज़रा मुश्किल है। ख़राब मुटापा जाता रहता है और बदन कस जाता है। अब समझे?

साजिद—(बिना समझे हुए) जी हाँ, पीर मुरशिद ने बिलकुल ठीक फ़रमाया। पहाड़ की आबोहवा से इन्सान का भद्दापन जाता रहता है।

मम्मान—हुज़ूर, यह बात तो कुछ समझ नहीं आती कि दो का हो तो डेढ़ मन का रह जाय। अगर ऐसा ही हो तो दिक़ का मरीज़, जिसकी हड्डियाँ तक गल जाती हैं, कोई छटाँक ही भर का रह जाये।

नूर—हज़रत आप वाजबी-ही-वाजबी पढ़े-लिखे हैं। आपको इस बात से क्या सरोकार। आप जाकर बटेर लड़ाइये। हाँ, तो हुज़ूर, मैं अर्ज़ कर रहा था कि एक दिन हम चन्द दोस्त चीना पहाड़ (China Peak) देखने की गरज़ से चले। यह पहाड़ पानी की सतह से नौ हज़ार फ़ीट ऊँचा है।

अ०—इसके क्या मानी। पानी की सतह के क्या मानी ?

नूर—हुज़ूर, दो तरह पर पहाड़ों की ऊँचाई का अन्दाज़ा किया जाता है। एक यह कि मैदान से कितने ऊँचे हैं, और एक इस तरह कि सतह आब से किस क़दर ऊँचे हैं।

साजिद—नौ हज़ार फ़ीट क्या ठिकाना है। बड़ी ऊँचाई हुई।

अ०—और पहाड़- क्या आपके नजदीक कोई खिलौना होते हैं ?

म०—खुदावन्द, मैं सोचता हूँ कि अगर वहाँ से गिरे तो कहाँ जाय ?

अ०—सीधा जहन्नुम को और क्या। यह आपको ख्याल पैदा हुआ है कि वहाँ से ख्वाहमख्वाह गिर ही पड़ेंगे ?

नूर—इतना नहीं समझते कि हजारों पहाड़ दुनियाँ में हैं, और लखूखा आदमी उनमें बसते हैं। अगर योंही गिर पड़ा करते तो पहाड़ सूने हो गये होते, हज़रत !

म०—खुदावन्द, वे लोग तो आदी हैं इसके।

नूर—आप तो वाही हैं पूरे। हाँ, तो हुज़ूर, जब हम चीना पहाड़ पर पहुँच गये तो कुछ धुआँ-सा मालूम हुआ। पहाड़ियों

ने कहा कि नीचे मेंह बरस रहा है। हमको बड़ी हैरत हुई कि यह बकते क्या हैं। मेंह आसमान से बरसता है या अधर से? मालूम हुआ कि पहाड़ इस क़दर ऊँचे हैं कि बादल उनसे नीचे हैं और हमने बखूबी देखा कि हम बादलों से ऊँचे थे।

म०—खुदावन्द, इसका तो किसी पागल ही को यक़ीन आयेगा। क्या बे-पर की उड़ायी है। लाहौलविला कूव्वत। बादलों के ऊपर पहुँच गये। आसमान में थिगली लगाना सुनते थे, सो हमारे नूर साहिब ने आसमान पर थिगली ही लगा दी।

नूर—दुश्मन-अक्ल हो, तुम क्या जानो यह बातें!

म०—अब आप पानी पी-पी के कोसिये, जनाब!

नूर—कुछ-कुछ बदते हो। और जो दिखा दें।

म०—अब मुझे कुत्ते ने तो काटा नहीं है कि इतनी-सी बात के वास्ते पहाड़ के जहन्नुम का सफर करूँ। भई, हँसी आती है कि आप बादलों से ऊँचे चढ़ गये।

मुहम्मद अस्करी के दिल में भी शक था। बादल नीचे हों और इन्सान ऊँचे पर—यह बात उनकी भी समझ में नहीं आती थी। मगर जब नूर ने बार-बार कहा तो यक़ीन आ गया और मम्मन से यूँ कहा—मियाँ मम्मन, जिस बात के बारे में तुमको वाक़फ़ियत नहीं, उसमें बहस करना बेकार है। आखिर नूर क्यों झूठ बोलते? मगर मियाँ मम्मन की तबीअत में खुद-पसन्दी बहुत है।

म०—खुदावन्द, अब हुजूर से तो फ़िदवी ज़बान नहीं मिला सकता।

अ०—मैं तो खुद-पसन्द नहीं हूँ, भाईजान!

म०—यह कौन मरदूद कह सकता है। खुदा गवाह है कि हुजूर के मिज़ाज का एक रईस भी तो यहाँ नज़र नहीं आता।

साजिद—हजार ग़नीमत हैं हमारे हुजूर। हक़ताला ख़िज्र व हलियास की उम्र दे हुजूर को।

म०—आमीन आमीन।

अ०—यह सब तुम लोगों की दुआ का असर है।

म०—हजूर साहिब लोगों से मिलते रहते हैं। भला, किसी से दरयाफ्त तो फरमाइये कि बादल पहाड़ से नीचे होते हैं। बस इसी बात पर हार-जीत है।

नूर—क्या-क्या बदते हो? आओ, बोलो

म०—भई, ज्यादह नहीं। दो-दो मन खरबूजे बदते हैं। मगर अच्छे-से-अच्छे हों।

अ०—अच्छा, इसका भी फैसला जल्दी ही हो जायगा।

[५]

बेगमों की बातें

नवाब नादिर जहाँ बेगम को यक़ीन था कि पहाड़ का सफ़र बहुत ख़तरनाक है, और हर तरह की कोशिश करती थीं कि नवाब इस ख्याल को छोड़ दें। एक दिन उनकी चचेरी बहिन कुल्सूम उन्निसा बेगम उनसे मिलने आयीं, तो इस तरह बातें हुईं।

बेगम—बहिन, हमारे यहाँ मर्दों को जो सूझती है, अल्लाह की इनायत से अनोखी सूझती है।

कुलसूम—क्यों-क्यों; ख़ैर तो है?

बे०—अब मैं क्या कहूँ, कुछ हँसी आती है, कुछ रंज होता है।

कु०—आख़िर हुआ क्या? फिर कोई उपज कर ली? क्या कोई मुई कसबी घर डालनेवाले हैं?

बे०—नहीं, इतनी ही तो ख़ैरियत है। जब से वह निकाली गयी

है, फिर उसका नाम नहीं लिया। वह तो ऐसा इनको अपने बस में ले आयी थी कि तोबा ही भली। उस मुई बेसवा की उस ज़माने में ऐसी चढ़ती कलां थी कि जो कहती थी, वही यह करते थे। एक दिन मैंने महनामथ मचायी और कसम खायो कि अफ़ीम खाकर सो रहूँगी।

लाड़ो—ऐ हुज़ूर, वह बात ही ऐसी थी। हुज़ूर, हमारी बेगम साहिब ने कानों सुना कि वह नवाब साहिब से कह रही थी कि बस-बस, यह ठण्डी गर्मियाँ हमें न दिखाया करो। घर की जुरुआ से यह नखरे बघारो जाके। हम बादशाह वज़ीरों की नहीं सहनेवाले हैं।

कु०—और यह ग़टर-ग़टर सुना किये होंगे।

लाड़ो—कौन? सरकार? अब लौंडी को जबान से निकालना ठीक नहीं। अल्लाह की क़सम जैसे भीगी बिल्ली।

कु०—खुदा जाने मुई मरदुओं पर क्या जादू कर देती हैं कि बिलकुल उनके बस में हो जाते हैं। क्या शक्ल-सूरत की बहुत अच्छी है? हमारी बहिन से अच्छी सूरत थी उसकी?

लाड़ो—इनकी एँड़ो-चोटी पर कुरबान कर दूँ कलमुँही को। है किस काम की।

बे०—इक ज़री जवान तो ज़रूर है।

लाड़ो—आग लगे ऐसी जवानी को। जवान तो यूँ गधी भी कभी होती है।

बे०—उसकी बदौलत उसके कुनवे भर ने खूब चैन किये।

लाड़ो—खुद टुकड़ी पर चढ़कर निकलती थी। भाई मुआ बे-ग़ैरत बहिन की बदौलत दुशाले फड़काता फिरता था। उसकी बूढ़ी ढढ़ो माँ की पाँचों घी में थीं और सिर कढ़ाई में।

कु०—हाँ, इतनी बातें हो गयीं, मगर यह न मालूम हुआ कि अब क्या उपज कर ली।

बे०—एक रोज बैठे-बिठाये किसी ने शिगूफा छोड़ा कि हुजूर चल के पहाड़ की सैर कीजिये। इनको इतनी अक्ल तो है नहीं, राज़ी हो गये।

कु०—और मुए पहाड़ पर रखा क्या है आख़िर ?

बे०—यह तो वह सोचे जिसे अक्ल हो।

लाड़ो—हुजूर, यह सब इन मुसाहिबों की नमकहरामी है। यही रईस को बदनाम कर देते हैं। बेगम साहिब, इनकी बातों में जादू होता है।

बे०—मुझसे लाड़ो ने आनके कहा कि बेगम साहिब यहाँ तो पहाड़ जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। बस, पाँव-तले से मिट्टी निकल गयी; सन्नाटा हो गया। बस इतना सुनना था कि मैं आग-भभूका हो गयी और जैसे ही सुना कि अन्दर आते हैं, मैं कोठे पर चली गयी और दरवाजा बन्द कर लिया। ताड़ गये कि कुछ दाल में काला ज़रूर है। अब हज़ारों कसमें देते हैं, लाड़ो की खुशामदें करते हैं कि दरवाजा खोल दो। बड़ी देर तक खुशामद किया किये, मगर मैंने एक न सुनी। आख़िरकार कसमें खाने लगे कि पहाड़ जाने का इरादा न करूँगा। जब कसमें खिलवा लीं तब मैंने दरवाज़ा खोला।

कु०—अस्करी दूल्हा में इतना माद्दा ही नहीं कि पहाड़ों का सफ़र करें।

बे०—माद्दा न सही। लोग तो माद्दा पैदा करा देंगे।

कु०—हमारे मुहल्ले में एक आया रहती है। वह हर साल अपने साहब के साथ पहाड़ जाया करती है। उससे हाल पूछूँगी।

बे०—अभी न बुलवाओ जो पास रहती हो। मैं अभी महरी को भेजकर बुलवाये लेती हूँ।

[६]

मुहब्बत की बातें

एक दिन नवाब साहब ने बेगम को खुश देखकर मज़ाक करना शुरू किया।

नवाब--जिस तरह हम लोगों की औरतों पर नज़र पड़ती है, तुम लोगों की मर्दों पर पड़ती होगी ?

बेगम—(शर्माकर) तुम्हारी भी क्या बातें हैं।

अ०—मैं एक न मानूँगा। ऐसा ज़रूर होता होगा। चाहे बदी से न देखो, मगर हसीन मरद अच्छा तो मालूम होता होगा।

बे०—वह हसीन कौन शै है, जो अच्छी नहीं मालूम होती ? खुशनुमा फूल कितने अच्छे लगते हैं! हम लोगों को पराये मर्दों के देखने का मौक़ा कहाँ मिलता है!

अ०—दो-तीन तो हवा खाने निकलती हैं। खिड़खिड़याँ चढ़ी हुईं। गोरे-गोरे हाथ और प्यारी-प्यारी उँगलियाँ साफ़ दिखायी देती हैं।

बे०—तुमको सब औरतों के हाथ गोरे ही गोरे सूझते हैं, चाहे काले-कलूटे उल्टे तवा ही के-से क्यों न हों। कहो, अब पहाड़ के सफ़र की कब तैयारियाँ हैं ?

अ०—यह तुमको पहाड़ के नाम से इतनी दहशत क्यों होती है।

बे०—वैसे तो हमने आया से पूछ लिया है कि डर की कोई बात नहीं है। मगर तुम्हारे वहाँ जाने में हमको एक बड़ा खौफ़ है।

अ०—खौफ़! वह क्या ? क्या शेर लगता है वहाँ ?

बे०—सुना है कि वहाँ की औरतें बड़ी जादूगरनी हैं, और सब

से बड़ा जादू यह कि वे हसीन होती हैं, और तुमसे इसका गर्ज़ है। जब मेरे सामने तुम्हारा यह हाल है तो वहाँ तुमको कौन रोकने-वाला है? तिनके की ओट पहाड़। वहाँ तो और भी खुल खेलोगे।

अ०—तुम बड़ी बदगुमान हो, बेगम! अब वह जोश कहाँ?

बे०—ऐ हे! अभी बूढ़े हो गये? यह हमारे बनाने-फुसलाने की सारी बातें हैं। तुम दो सौ बरस के भी हो जाओगे तो भी हमको यक़ीन नहीं कि तुम्हारी आदत जाय।

अ०—अब इस बहस का क्या इलाज करूँ? क़सम तक खायी मगर तुमको यकीन ही नहीं आता।

बे०—तुम मर्दों की बात का ऐतबार ही क्या। और मर्द भी कैसे तुम्हारे-से छटे हुए बदमाश। तुम अगर कुरान भी उठाओ तो भी हमें हरगिज़ यक़ीन न आये।

अ०—सुनो बेगम, दिल्लगी तो हो चुकी। अब असल-असल बात कहें। हमारा बहुत जी चाहता है कि पहाड़ों की सैर करें मगर पन्द्रह दिन से कम-ही-कम में वापिस आ जायेंगे। तीन चार रोज़ आने-जाने के हुये और ग्यारह-बारह रोज़ क़याम के। और .खुदा गवाह है, वहाँ ज़रा भी ख़ौफ़ नहीं है, बरसों की बस्ती है और साहब लोग कसरत से जाते हैं।

बे०—जाने में मुझे सिर्फ़ यही ख्याल है कि वहाँ तुम किसी पर रीझ न जाओ। बड़ा ख़ौफ़ तो तुमसे यही है और तुम भी अल्लाह के फ़ज़्ल से ऐसे वज़ादार हो कि यह मज़ा उमर-भर न छोड़ोगे। तुमको बे उनके चैन ही नहीं आता।

अ०—अल्लाह-अल्लाह! ऐसे बेऐतबार हो गये हम?

बे०—हो तो अपनी करतूतों। मगर यह याद रखो कि अगर पहाड़ गये और वहाँ से किसी को साथ लाये तो मैं जरूर ज़हर खाकर सो रहूँगी।

अ०—क़सम खायो, अब ऐसी बात कभी न होगी। आज़माओ और देखो कि क़सम के मुताबिक चलते हैं या नहीं। अब के आज़माइश तो कर लो।

बे०—मैं तो आज़माइश करते-करते दीवानी हो गयी। हाथ कंगन को आरसी क्या है। देख लेंगे।

[७]

चैमगोइयाँ

दरबार लगा हुआ है और पहाड़ों की तारीफ़ में मिर्ज़ा नूर कुछ कह रहे थे कि उनकी बात काटकर एक मुसाहिब ने, जो पहाड़ के सफ़र के खिलाफ था, नवाब साहब से कहा—

मुसाहिब—हुजूर, हुक्का पोने का वहाँ लुत्फ़ नहीं। तवा पीना तो जानते ही नहीं, सुलफ़ा उड़ा करता है और सबब यह कि वहाँ ढाक और इमली की लकड़ी नहीं मिलती और कोयले ज़रा से ही में भड़क जाते हैं; बल्कि भड़कना क्या मानी ठण्ढे हो जाते हैं। सुलफ़ा तो सुलगता ही नहीं, तवे की कौन कहे।

अस्करी—यह बड़ी बुरी पख है और अफ़ीमची आदमियों के लिए तो मौत है। चाहे पियें चाहे न पियें, मगर तवा दहकता हुआ हर वक्त सामने रहे। जब पीनक से ज़रा आँख खुले तो अंगारे रोशन नज़र आयें। यह बड़ी ख़राबी है। मियाँ मम्मन तो वहाँ मर ही जायँ।

मम्मन—ख़ुदावन्द, मैं दो-तीन मन कोयले पहिले ही रवाना कर दूँगा। सारा खेल रुपये का है। दो की जगह चार ख़र्चे और सारी खुदाई की न्यामत मौजूद हो गयी। अगर ज्यादह जी चाहा तो फ़ी कोयला एक अशर्फ़ी दे दी।

अख़्तर—इसमें क्या शक है। अगर और ज्यादह जी चाहा तो फ़ी कोयला एक गाँव दे दिया। मियाँ मम्मन भी ख़ूब आदमी

हैं। यह भी अपने वक्त के तानाशाह हैं। तो तीन मन कोयले साथ ले जाइयेगा तो उनको कितने कुली उठायेंगे? तीस सेर से ज्यादह एक कुली उठा नहीं सकता। आप पहाड़ का सफ़र तब करें जब चार-पाँच कुली हर वक्त कोयला उठाने के लिए साथ हों।

म०—आप हैं किस ख्याल में। .खुदा हमारे सरकार को हज़रत ख़िज्र की उमर अता करे! हुजूर की बदौलत चैन करते हैं। पाँच कुली किस गिनती में; पचास कुली हरदम और हर घड़ी साथ रहेंगे।

नूर—और कोयले ले जाना और सफ़र करना कौन गवारा करेगा? कोई मम्मन-सा ही अफ़ीमची तीन मन कोयले सफ़र में साथ रखेगा।

अख्तर—मनहूस होता है जनाब! काली बला।

अस्करी—इसमें तो शक नहीं। तेल, अचार, कोयले हरगिज़ सफ़र में साथ न ले जाने चाहिएँ। ऐसी भी क्या तलब है।

नूर—मम्मन की बात दुनिया से अनोखी ही है। हुजूर, पिनक में जो हरदम ग़र्क रहेगा, उसकी यही कैफ़ियत होगी।

म०—हुजूर, यह सब एक तरफ हो जायँगे तो बन्दा चौमुखा नहीं लड़ सकता। जो यह कहें, वही ठीक है। बस और क्या अर्ज़ करूँ? हुजूर, अगर कोयले भेज दिये जायँ तो क्या हर्ज है, जनाब?

अख्तर—आपके मुँह कौन लगे ख्वाहमख्वाह।

म०—सुन लिया, हुजूर? अब यह नौबत है हमारी।

अस्करी—भई, हमको इस लड़ाई-झगड़े से नफ़रत है।

नूर—हुजूर, और इनको इससे मुहब्बत है। .खुदावन्द, यह सब से लड़ा करता है।

म०—अर्ज़ किया था न मैंने कि ये सब दुश्मन हो रहे हैं।

अ०—आखिर दुश्मनी का सबब क्या है? अदावत तो वेसबब नहीं होती है। और यह क्या वजह है कि सारी दुनियाँ को आप ही से दुश्मनी है? इससे तो ज़ाहिर होता है कि तुम्हीं लड़ाकू हो।

म०—(आह भरकर) जी हाँ, खुदावन्द!

अ०—जी हाँ खुदावन्द, क्या मानी? जी हाँ खुदावन्द क्या मानी? जो बात है वही पजोड़ेपन की।

अख्तर—अब जाने दें, हुज़ूर। तरह दीजिये।

अ०—एक बार तरह दें, दो बार तरह दें। सिर ही चढ़ा जाता है।

नूर—दरबार का बड़ा ऐब है कि झगड़ा-बखेड़ा हो। हज़ार बार कह दिया, समझा दिया कि बाबा लड़ो-झगड़ो मत; मगर यह शख्स किसी की सुनता ही नहीं है। हारी मानता है, न जीती।

मम्मन को सब मुसाहिबों ने मिलकर उल्लू बना लिया, और सरकार ने भी खूब ही आड़े-हाथों लिया। यहाँ तक कि मम्मन झल्ला कर उठ गया और मिर्ज़ा नूर ने मैदान खाली पाकर और भी शह दी और चंग पर चढ़ाया। नवाब साहब ने भी दिल में ठान ली कि चाहे कुछ हो, सफ़र ज़रूर करेंगे।

[८]

राज़ो नियाज

दरबार खत्म करके नवाब साहब महलसरा में तशरीफ़ ले गये, तो क्या देखते हैं कि बेगम सो रही है। लाड़ो ने पाँव हिला कर जगाया भी, मगर बेगम ने करवट बदलकर फिर आँखें बन्द कर लीं।

अस्करी—बेगम उठो, अभी तो चिराग़ में बत्ती पड़ी है।

बेगम (हाथ झटककर) सोने दो नवाब, दिक न करो। कच्ची नींद में जगाना कहर है।

अ०—बेगम, कलेजा काँपता है देखकर इस सर्द मुहरी को।
तुम्हारे कमर में आये कि कश्मीर में आये॥
ज़रा आँखें खोल कर बातें तो करो हमसे।

बे०—क्या रतजगा करोगे? आज हमें नींद आती है। इस वक्त क्या जाने किस मुई बेसवा की बगल से आते हो और ऊपर से बातें बनाते हो।

अ०—तुम्हें जो समा गया, समा गया। खुदा गवाह है, इस वक्त ऐसी भली मालूम होती हो कि हमारा दिल ही जानता है। और यह मेंहदी-रचे हाथ।

—कहते हैं लोग पंजये मिरजाँ की फब्तियाँ।
खिलता है दस्त यार में कितना हिना का रंग॥

बे०—जी हाँ, मैं इस तारीफ़ के क़ाबिल नहीं हूँ। उन काली-कलूटी निगोड़ी भुतनियों की तारीफ़ करो, जिन पर रीझे हो।

अ०—तुम तो आज जैसे लड़ने पर तैयार हो। तुम उन पर फब्तियाँ कसती हो और वह तुम घर-गृहस्थिनों पर।

बे०—(झल्लाकर) वह मुई पिछलपाइयाँ (पीछे पाँव वाली) अपने होते-सोतों पर फब्तियाँ कसें।

अ०—(हँसकर) क्यों, किस तरकीब से जगा दिया। बहुत बिगड़ी हुई थीं।

देखिये त्यौरी चढ़ाई तो है तक़सीर माफ़,
गुदगुदा कर भी हँसाते हैं हँसानेवाले॥
क्यों, कैसा फ़िक़रा चुस्त किया।

बे०—(चुटकी लेकर) फ़िकरेबाज़ियाँ बहुत आती हैं।

चुटकी लेकर बेगम ने नवाब के ज़ानू पर सिर रख दिया तो मुहम्मद अस्करी की बाछें खिल गयीं। मस्त होकर यह शेर पढ़ा:—

नींद उसकी है, दिमाग़ उसका है, रातें उसकी हैं,
तेरी ज़ुल्फें जिस के बालों पर परेशां हो गयीं॥

फिर चुपके-चुपके पहाड़ के सफ़र की बातें होने लगीं।

[९]

महरियों की झड़प

एक दिन लाड़ो सोलह सिंगार किये बनी-ठनी बेगम साहबा की फ़रमाइश पर गाना गा रही थी कि बन्नो लौंड़ी उधर से आयी। उसकी लाड़ो से चल रही थी। यह देखकर और भी जल-भुन-कर ख़ाक हो गयी।

बन्नो— हुजूर, मालूम होता है कि लाड़ो कहीं इन्द्र-सभा में नौकर थीं।

लाड़ो—(तिनककर) जी हाँ, हाफ़िज़जी के यहाँ थी। फिर किसी का क्या इजारा है? तुम हमको देख-देखकर क्यों जली जाती हो? अल्लाह बेगम साहबा को सलामत रखे; पहिनने-ओढ़ने, गाने-बजाने के तो हमारे दिन ही हैं। हाँ, बद काम में अगर कभी कोई देखे, तो जो चोर की सज़ा वह हमारी।

बेगम—आज लाड़ो खूब निखरी हैं।

बन्नो—हुज़ूर, हमने यह बात किसी रईस के घर में आज तक देखी ही नहीं। यहाँ चाहे बढ़-बढ़कर जो बातें बनायें, किसी और ड्योढ़ी पर होतीं, तो खड़े-खड़े निकलवा दी जातीं। यह अदबदा कर इस तरह निखरकर रहती हैं जिसमें नवाब साहब की आँख इन पर पड़े।

बेगम—क्या बकती है? ऐ लो, अब नवाब ऐसे गये-गुज़रे हुए कि तुम लोगों पर डोरे डालेंगे। मालूम होता है, तेरी नीयत में ख़ुद फ़ितूर है।

लाड़ो—अब तो हुज़ूर हमें रुखसत कर दें तो अच्छा है।

बन्नो—तुमको काहे के वास्ते। हमको न रुख़सत कर दें।

लाड़ो—बन्नो, तुम तो भठिहारिनों की तरह लड़ती हो।

भठिहारिनों का क़ायदा है कि जब लड़ाई को जी चाहता है तो बैठे-बैठे छेड़खानी करती हैं। आओ पड़ोसिन हम-तुम लड़ें। दूसरी बोली, लड़े मेरी जूती। उसने कहा, जूती लगे तेरे सिर पर। वह बोली, तेरे होतों-सोतों पर। चलो, बस जूती-दाल बँटने लगी।

बन्नो—भठिहारिनों ही में रही हो न, जभी ये बातें याद हैं। जब ऐसी हो तब ऐसी हो। सराय की रहनेवाली शोहदी औरत हमारे मुँह लगे। अल्लाह की शान है, बस।

बेगम साहबा ने बन्नो को डाँट बतायी और कहा—यह सब तुम्हारा क़ुसूर है। सरासर तुम्हारी शरारत है। तुम लाड़ो को देख कर जली मरती हो। अगर अब तुम दोनों लड़ीं तो हम तुमको बेइज़्ज़त करके निकाल देंगे। वाह वा! घर न हुआ भठियारखाना हुआ. जैसे सौतें सौतें होती हैं। यह बनाव-चुनाव करके आती है, तो तुझे क्या? नवाब इस पर रीझेंगे, तो तेरा क्या बिगड़ेगा? नुक़सान तो हमारा है। तू बीच में बोलनेवाली कौन? हमें ये बातें एक आँख नही भातीं। जब देखो, बमचख़ मची हुई है।

लाड़ो—हुज़ूर, यह मुझे देखकर जली मरती है, और बे-सबब।

बन्नो—जले हमारा दुश्मन; हम नौकरी ही छोड़े देते हैं।

बेगम—बिसमिल्लाह, अपने घर का रास्ता लो। नौकरी छोड़ देगी तो क्या दूसरी महरी नहीं मिलेगी?

लाड़ो—सरकार की सलामती से महरियाँ हज़ारों हाज़िर हैं। यह मुई नचनी किसमें है?

नचनी के लफ़्ज़ पर बन्नो आग हो गयी, और अपना असबाब उठाकर जाने की तैयारी करने लगी।

लाड़ो—ऐ लो, हमको तो बदनाम करके न जाओ।

बन्नो—इसमें बदनामी क्या है? नौकरी खुशी का सौदा है।

लाड़ो—तो ऐसी क्या गाढ़ पड़ी है कि भागती हो ?

बन्नो—तुम तो अपने चैन करो। तुमको इससे क्या ?

लाड़ो—जिनकी किस्मतों में लिखा है वे चैन करते ही हैं।

बन्नो—किस्मत का हाल मालूम हो जायगा थोड़े दिनों में। देख ही लोगी।

लाड़ो—हम जैसे हैं, हमारा अल्लाह जानता है।

बन्नो—बड़ी अल्लाह वाली बनी हैं। सत्तर चूहे खाकर बिल्ली हज को चली।

लाड़ो—अपनी बीती कहूँ कि पर-बीती। वही मसल हुई।

बेगम—खुदा की कसम अच्छी कही। मैं बहुत .खुश हुई।

बन्नो—हाँ हुजूर इनकी बातों में क्यों न .खुश होंगी। यह तो लाड़ली हैं।

लाड़ो—तुम जल मरो। खार खाओ। जल-भुनकर खाक हो जाओ।

बन्नो—जले हमारी पापोश ; हमारी जूती की नोक। यह कहकर अपना असबाब उठाया और बेगम साहिबा के पास आकर आँखों में आँसू भर, कहने लगी—हुजूर, आप हँसी-खुशी लौंड़ी को रुख़सत करें। इतने बरसों हुजूर के यहाँ मेरा आबादाना था। सरकार की बदौलत खूब चैन किये। अब जहाँ खुदा ले जायगा, वहाँ जाऊँगी। मगर परवरिश की नज़र रहे सरकार! बेगम को बन्नो को रोते देखकर बड़ा अफ़सोस हुआ।

बेगम—चलो बको मत। असबाब रख दो।

लाड़ो—(असबाब छीनकर) बस, अब नखरे न करो!

बन्नो—लौंड़ी तो हुकुम की ताबेदार है। जो हुकुम हो। मगर रोज-रोज़ की दाँता किलकिल से क्या मतलब। और हुजूर हमीं पर ख़फा होती हैं।

लाड़ो—चलो, अब पिछली बातों पर खाक डालो।

बन्नो ने असबाब बेगम सहबा के सामने रख दिया और क़दमों पर गिर पड़ो।

[१०]

पहाड़ का प्रसाद

मम्मन ने जो यह देखा कि नूर और उनके दोस्त बदर साहब ने नवाब को चंग पर चढ़ा लिया है, तो वह जल मरा। हुजूर ने यह सब हाल तो सुना, मगर मेरे एक दोस्त की ज़बानी भी तो पहाड़ का हाल सुन लीजिये। देखिये तो, वह क्या कहता है।

नवाब—बेहतर है, उनको भी बुलाओ। हम तो चाहते हैं कि जो काम करें, समझ-बूझकर करें, ताकि पीछे से हँसी न हो। सफ़र करने में तो हमें कोई पशोपेश नहीं, मगर है तो यह है कि हमने कभी पहाड़ की सूरत भी नहीं देखी। ऐसा न हो कि वहाँ कोई गुल खिले। आप अपने दोस्त को भी बुलवाइये।

म०—हुजूर, ख़ाकसार का दोस्त यहाँ हाज़िर है; हुकम हो तो बुलवाऊँ। (ख़िदमतगार से) मियाँ ज़री मौलवी साहब को तो बुलवा दीजिये। मौलवी साहब आये, यह सिखाये पढ़ाये थे।

नवाब—कहिये मौलवी साहब! आप पहाड़ पर कितने दिन रहे?

मौलवी—हुज़ूर सात बरस तक वहाँ जलावतन रहा।

नवाब—जलावतन! क्या पहाड़ ऐसी जगह है? लोग तो वहाँ की आबोहवा की बड़ी तारीफ़ करते हैं।

मौलवी—खुदावन्द, जो वहाँ रहा उसे घेंघा ज़रूर होगा। यह तो वहाँ का तमग़ा है और हिन्दू लोग इसे प्रसाद कहते हैं।

नवाब—ऐं! लाहौलवलाकुव्वत, अरे तोबा। खुदा महफ़ूज़ रखे हर बला से। यह बड़ी टेढ़ी खीर है। बन्दा दरगुज़रा ऐसे सफ़र से।

बदर—हुज़ूर, ये सारी बातें झूठ हैं इनकी।

मौलवी—खुदावन्द, जो कोई मेरी बात काट देता है, तो मैं आग हो जाता हूँ। यह अभी साहबज़ादे हैं और बन्दा दुनिया घूमे हुए।

बदर—सरकार, इन्हीं ऐसे लोगों ने तो—

नवाब—अच्छा साहब, आपको दख़ल दर माक़ूलात देने से क्या वास्ता है? आप एक शख़्स के पीछे पड़ गये और यह हमसे कहा ही नहीं कि वहाँ घेंघे की बीमारी बहुत है।

बदर—हुज़ूर, अगर यह बीमारी वहाँ हो, तो मैं नाक-नाक बदता हूँ।

मौलवी—खुदावन्द, यह खास लखनऊ के बच्चों की बातें हैं कि हाथ-हाथ बदता हूँ और नाक-नाक बदता हूँ। बन्दा तो कभी ऐसी सुहबत में बैठा ही न था और न इस गुफ्तगू का आदी ही है। या अल्लाह तोबा!

नवाब—भला यह बीमारी क्योंकर वहाँ पैदा हो जाती है?

बदर—हुज़ूर इतना दरयाफ़्त करें कि साहब लोग जो वहाँ रहते हैं, उनको घेंघा क्यों नहीं हो जाता?

मौलवी—वह लोग ब्रांडी पीने के आदी हैं। हम और आप उनका मुक़ाबिला कर सकते हैं, भला? फिर उनका इक़बाल।

नवाब—हाँ, ये दोनों सबब ठीक मालूम होते हैं।

बदर—हुज़ूर, भला ब्रांडी को घेंघे से क्या वास्ता है? मारूँ घुटना, फूटे आँख। कहाँ ब्रांडी और कहाँ घेंघा। मगर अब क्या अर्ज़ करूँ?

नवाब—डाक्टर तो न आप हैं, न बन्दा। यह कहते हैं और ज़ाहिरा समझ में नहीं आता कि झूठ क्यों कहेंगे। ना साहब, हम तो उधर का रुख़ भी न करेंगे।

मम्मन अपने दिल में निहायत ही खुश हुआ कि नवाब को खूब चंग पर चढ़ाया। क्या फ़िक़रा चुस्त हुआ है कि वहाँ गये और घेंघा हो गया। अब कोई करोड़ रुपया भी दे तो नवाब साहब नहीं जाते। मौलवी भी रँगे स्यार बने हुए थे और लतीफ़ा यह कि मौलवी साहब ने उम्र-भर में कभी पहाड़ की सूरत भी नहीं देखी थी। इन भोलेभाले रईसों की भी अजीब बातें हैं। पहले तो क़सम खाई कि चाहे इधर की दुनियाँ उधर हो जाय, पहाड़ का सफ़र ज़रूर करेंगे, और अब जो मम्मन के यार मौलवी ने घेंघे का फिकरा चुस्त किया तो डर गये। खौफ़ हुआ कि ऐसा न हो कि पहाड़ का पानी लगे और घेंघा हो जाय। एक ही फिकरे ने फड़का दिया। मम्मन खुश था कि सबको नीचा दिखाया। मम्मन को सफ़र के नाम से अदावत थी और सुन-सुनकर नानी मरी जाती थी। इसीलिए मौलवी को सिखा-पढ़ाकर लाया था।

नवाब—हाँ मौलवी साहब! यह तो फ़रमाइये कि और वहाँ क्या-क्या देखा?

मौलवी—"हुजूर, पानी वहाँ का काल है। कुएँ तो हैं ही नहीं। पहाड़ का पानी सब पीते हैं या झील का। सो झील के पानी से परदेशियों को खुजली हो जाती है, और यह खुजली बिलकुल दाद की-सी होती है और इन्सान महीनों तड़पा करता है। पहाड़ का पानी गँदला होता है। सेर भर पानी तो सेर भर रेत। खाना हज़म नहीं होता।

नवाब—लाहौलवलाक़ूवत। यह तो बड़ी टेढ़ी खीर है, मौलवी साहब!

मौलवी—और हुज़ूर, खाने का ज़रा भी पहाड़ पर लुत्फ़ नहीं है। गोश्त तो गलता ही नहीं। लाख-लाख जतन कीजिये पर गोश्त सख्त ही रहेगा और मुमकिन क्या कि हजम हो सके।

नवाब—फिर वहाँ खायँगे क्या? गोश्त ही नहीं, तो फिर खाने का लुत्फ़ क्या?

मौलवी—और हुज़ूर, जान वहाँ हथेली पर रखनी पड़ती है हरदम जोखिम। अभी कोई पाँच बरस हुए कि जलजला आया और पहाड़ फटा, तो यह मुलाहिज़ा फ़रमाइये कि आसमान से गोया जमीन पर आ गया और कई बँगलों, कोठियों और मकानों को लेता हुआ झील को पाट दिया। ताज्जुब है कि मिर्ज़ा साहब ने यह हाल आपसे छुपाया।

नवाब—अलअमां, अलअमां। पहाड़ का हाल सुनकर बहुत मसरूर हुए। कोई मरदूद ही अपने हिसाब उधर का रुख़ करे अब। मैं तो तैयार ही हो गया था। ऐसे मुक़ाम से खुदा महफूज रखे। जाना ही क्या फर्ज है।

मिर्ज़ा—हजूर, लखूखा आदमी जाते-आते और रहते-सहते हैं।

नवाब—वाह वा, लखूखा नहीं, करोड़ों सही। फिर हमें क्या तबाही आयी है कि हम अज़ल के मुह में जायँ?

मिर्ज़ा—अच्छा हुजूर, अपने किसी दोस्त साहब लोगों में से तो दरयाफ़्त करें।

नवाब—हमारा-उनका रहन-सहन एक-सा नहीं है। साहब, हमारी-उनकी कौन बराबरी है? साहब लोगों की भली चलायी। यहाँ इतने वजीरजादे, नवाबज़ादे रईस हैं। भला किसी को भी आपने सुना है कि नैनीताल गया है। फिर वहाँ जाने की ज़रूरत ही क्या है? साहब लोगों की अमलदारी है, हुकूमत है, हमारा उनका मुक़ाबिला? थोड़ी देर बाद नवाब साहब ने फिर फ़रमाया, पहाड़ पर सैकड़ों आफ़तों का सामना रहता है।

पहाड़ फटे तो गये-गुज़रे, पानी लगा तो घेंघा हो गया, खड्ड में गिरे तो हड्डी-पसलियों का पता न लगे और झील में किश्ती उलटे, तो जिस्म मछलियों की नजर हो। ऐसे मुक़ाम पर तो वह जाय, जो घर से फालतू हो, 'आगे नाथ न पीछे पगहा।'

मौलवी—खुदावन्द, सैर तो उस वक्त होती है जब जरा-सी पगडण्डी होती है और दोनों तरफ खड्ड। इधर भी एक मील का गढ़ा और उधर भी। जिधर नजर जाती है, रूह काँप उठती है। थरथराने लगता है इन्सान कि खुदा बचाइयो, और हम परदेशियों का तो हुजूर कदम नहीं उठता। और हुजूर, पिस्सू और खटमल और मच्छर इतने परेशान करते हैं कि अलअमाँ। खाना खाना मक्खियों की भिन-भिन के सबब से मुश्किल हो जाता है, और खटमल के काटे का तो मन्तर ही नहीं। धूप निकलती ही नहीं है। अब फरमाइये कि पलँग और बिस्तर को क्योंकर गरम कीजिये। और धूप की तो महीनों सूरत ही नजर नहीं आती और बदली के बाद जब धूप निकलती है तो इस क़दर तेज कि खोपड़ी चिटखने लगती है, और आदमी बिलबिला उठता है। घोड़े की सवारी हुजूर, वहाँ जान-जोखिम है, बग्घी वहाँ चल नहीं सकती, फीनस को चढ़ाये कौन और डाण्डो लेडियों और औरतों की सवारी है, पैदल चले तो हाँफ जाय। अब फ़रमाइये हुजूर, इन्सान क्या करे?

इधर मौलवी साहब पहाड़ की बुराई कर रहे थे कि चोबदार ने अर्ज किया कि सरकार, छुट्टन साहब आये हैं। इतने में आ ही गये। मुसाहिबों ने खड़े होकर ताज़ीम की और नवाब साहब ने मसनद पर बिठाया। नवाब छुट्टन जहाँदीदा आदमी और मिर्ज़ा के दोस्त थे। पूछा—कहिये क्या शग़ल हो रहा है?

नवाब मुहम्मद अस्करी ने कहा—मौलवी साहब से नैनीताल पहाड़ का हाल सुन रहे थे। मौलवी साहब वहाँ की आफ़तों का हाल

बयान कर रहे थे। नवाब छुट्टन को मिर्ज़ा ने पहिले ही सब बता दिया था। मौलवी साहब को देखकर कहा, यार अस्करी! सुनते हैं, वहाँ घेंघा बहुत होता है। और सुना है कि वहाँ का पानी बड़ा खराब है। एक चपाती खाइये और पानी पी लीजिये तो बस दो दिन तक बदहजमी रहेगी। गोश्त गल जाये क्या मजाल। मौलवी को गोया लाखों रुपये मिल गये और भी अकड़ गया, नवाब भी खुश थे कि मम्मन और मौलवी ने बचा लिया वर्ना लोग हँसते। और नवाब छुट्टन यह देखकर दिल ही दिल में हँसते थे।

छुट्टन—आप कितने अर्से तक रहे हैं वहाँ, जनाब मौलवी साहब ?

मौलवी—हुजूर, कोई चार बरस तक वहाँ कयाम रहा।

मिर्जा—और अभी थोड़ी देर हुई, सात बरस बताते थे। यह फ़र्क।

छुट्टन—आप किस मुहल्ले में तशरीफ़ रखते थे, मौलवी साहब

मौलवी—(गिड़गिड़ा कर) जी, हुजूर, बंदा, मैं...।

छुट्टन—और क्यों मौलवी साहब, आबोहवा तो वहाँ की बिलकुल ही खराब होगी ?

मौलवी—जी हाँ, सब अमराज़ (रोग) का घर है। अल्लाह पनाह में रखे।

अख्तर—और खुदावन्द सुना, वहाँ महीने में दो-चार आदमी ज़रूर खड्ड में गिरते हैं। यह बड़ी मुसीबत है।

छुट्टन—महीने में दो-चार ? अजी, हर रोज दस-पाँच गिरते हैं। मौलवी साहब भी तो कई बार गिर पड़े थे।

अख्तर—(हँसकर) हुजूर, यह तो चीना पहाड़ से गिरे थे। मगर बड़ी सख्त जान है मौलवी साहब की। खूब बचे। दूसरा होता तो पता भी न लगता। मगर खूब बचे।

मिर्ज़ा—कौन ख़ूब बचे ? मौलवी साहिब ? इनकी रस्सी दराज़ है। और एक बार झील में भी तो डूब गये थे।

अख्तर—डूब चुके। ग़ैरतदार को चुल्लू-भर पानी काफ़ी है। मगर हमारे मौलवी साहब को असर पहुँचे क्या मजाल। मौलवी साहब, आपने यह नहीं फ़रमाया कि आप नैनीताल में रहते कहाँ थे ? बोलो न, भाई जान।

मिर्ज़ा—मालूम होता है, चकले में जाकर रहते थे मौलवी साहब। सबने कहकहा लगाया, मौलवी कट गये।

मम्मन का रंग फ़क हो गया। नवाब अस्करी ने जो यह रंग देखा तो बद-दिमाग़ हो गये ; झल्लाकर कहा, मौलवी साहब, आख़िर आप यह क्यों नहीं बताते कि नैनीताल में आप कहाँ रहते थे ? मौलवी की और भी नानी मर गयी।

मिर्ज़ा—कभी नैनीताल गये हों, तो बतायें। हुज़ूर, अगर यह नैनीताल गये हों तो हजार रुपये हारता हूँ।

अस्करी—क्या ? क्या ? नैनीताल कभी गये नहीं ? वाह वा ! जनाब मौलवी साहब, हुजूर वहाँ कहाँ रहते थे ?

मौलवी—ख़ुदावन्द, पहाड़ पर रहता था और कहाँ रहता था ? अब मुझे इतने बरसों के बाद याद है कि कहाँ रहता था ? वहाँ पहाड़ पर रहता था और कहाँ रहता था ?

अख्तर—भला, मकान मिट्टी के बने हैं या ईंट के ? लकड़ी के मकान भी पहाड़ पर आपने देखे थे ?

मौलवी—पत्थर के भी हैं, ईंट के भी हैं। लकड़ी के नहीं हैं, फूल के हैं। भला पहाड़ पर लकड़ी कहाँ ?

छुट्टन—यार अस्करी, तुम तो बिलकुल बछिया के ताऊ हो। मैं कहता हूँ, वल्लाह यह साहब कभी नैनीताल गये ही नहीं। यह वहाँ की आबोहवा को ख़राब बताते हैं ग़ज़ब ख़ुदा का। भला, जरा यह तो सोचा होता कि अगर आबोहवा ख़राब

होती तो गवर्नर साहब बहादुर वहाँ क्यों रहते ? मुझे हँसी आती है कि नैनीताल और बीमारी का घर। खुदा की शान है। और घेंघे वाला फ़िकरा सबसे चुस्त हुआ।

अस्करी—भई, इन्हीं लोगों ने जानकर कहना शुरू किया। मुझसे कहा कि पहाड़ का पानी बीमारियाँ पैदा करता है। भई, मैं क्या जानता था कि ऐसे बद आदमी हैं।

छुट्टन—उन्होंने सब कुछ कहा। आपकी अक़्ल क्या गुद्दी में थी ? उन्होंने कहा और आपने मान लिया। मौतबर नाई घर से आया था। लाहौल है तुम्हारी अक़्ल को। तुम बड़े भुलक्कड़ आदमी हो। तुम्हें इतना भी याद नहीं कि मैं तीन-चार बार नैनीताल रह आया हूँ। आपकी इस अक़्ल के क़ुरबान। आपके जो मुसाहिब हैं उनका बायाँ क़दम ले।

अस्करी—ख़ैर, साहब, अब तो सीख गये। अब कान पकड़े कि किसी के कहने-सुनने में हरगिज़-हरगिज़ न आयेंगे।

[११]

शाने रईसी

नवाब छुट्टन साहब ने एक रोज़ अपने दोस्त मुहम्मद अस्करी से वायदा किया कि अबकी नौचन्दी जुमेरात को मय दोस्तों के अब्बास की दरगाह जायगे और वहाँ से बाग़। वहाँ चलकर नैनीताल के सफ़र के बारे में कुछ तै करेंगे। इसी वायदे के मुताबिक़ अपने एक दोस्त के साथ, जो बाहर से आये थे और वकील थे, गाड़ी पर सवार होकर दरगाह को चले। रास्ते में बड़ा धक्कमधक्का, भीड़-भड़क्का। दोनों साईस घोड़ों के आगे 'हटो', 'बचो'करते जाते हैं और कन्धे से कन्धा छिलता है।

वकील—आज तो कोई बड़ा मेला है आपके शहर में ?

छुट्टन—जी, मेला नहीं रजब की नौचन्दी है। सफ़ेद-पोशों का जमाव देखिये, परियों का बनाव-चुनाव देखिये। ज़न मर्द का हुजूम है, नौचन्दी की धूम है।

गली तक तो नवाब साहब गाड़ी पर गये, फिर वहाँ उतर पड़े। इस मुकाम पर बड़ी चपकलश और कशमकश थी। वह रेल-पेल कि तोबा भली। नवाब साहब को देखकर एक कॉन्सटेबिल झपटकर आया और भीड़ को हटाने लगा। आगे-आगे कॉन्स-टेबिल 'हटो', 'बचो' करता था, उसके पीछे नवाब साहब और उनके दोस्त वकील, बाद को दो मुसाहिब और उनके बाद एक चोवदार और एक ख़िदमतगार। ख़िदमतगार के पास गुड़गुड़ो ख़सदान और पानी की सुराही। रोशनी की चमक से दर-गाह जगमगा रही है, दोनों तरफ दूकानों की क़तार है, नौबत की टकार दिल को लुभाती है। दरगाह में दाखिल हुए तो आँखें खुल गयीं।

इतने में क्या देखते हैं कि एक रईस बाविक़ार (प्रतिष्ठित) एक महबूब को साथ लियेआते हैं और दोनों मुस्कराते जाते हैं। उस माशूक़ तरहदार ने किसी बात के जवाब में अजब दिलरुब अदा से कहा, ना, साहब, बन्दी न जाने की। पीच पो हज़ार न्यामत खाई, कान पकड़े तोबा की। उस दिन गये तो क्या आप ने निहाल कर दिया कि अब फिर हविस बाकी हो? तुम हर देगी चम्चों से अल्लाह पनाह में रखे।

रईस—वल्लाह, बेवफ़ाई तो हम लोगों की घुट्टी में पड़ी थी।

माशूक़—(तिनककर) अच्छा साहब, फिर 'काई अहले वफ़ा ढूंढ़ो अगर इक बेवफ़ा निकले'।

रईस—अच्छा अब्बासी याद रखना। चलो और लाखों में चलो, बीच खेत चलो। हम तुम्हारी नस पहचानते हैं।

अब्बासी—घर की पुटकी बासी साग। हम तुम्हारा जात-बुनियाद से वाकिफ हैं। ताँव बाजी राग बूझा।

रईस—खैर से आपको मूसीकी (गान-विद्या) में भी दख़ल है?

अ०—अजी, हमें किसमें दख़ल नहीं है? हर फ़न में हैं उस्ताद, हमें क्या नहीं आता?

र०—खुदा ने यह हुस्न न दिया होता तो हम रईस लोग काहे को आपकी खुशामदें करते?

अ०—(क़हक़हा लगाकर) खैर से आप भी अपने-तईं रईसों में शुमार करते हैं। अपने मुँह आप मियाँ-मिट्ठू। और हमारे हुस्न में शक ही क्या है, 'धूम है आज हमारी भी परीजादों में'।

इतने में नवाब मुहम्मद अस्करी मुसाहिबों के साथ आये और छुट्टन साहब से मिले।

छुट्टन—आपसे मिलिये। आप हैं मेरे दोस्त जनाब मुहम्मद काज़िम। आप वकील हैं।

अस्करी—(बग़लगीर होकर) मिज़ाज शरीफ। (छुट्टन से) इस वक्त एक माशूक देखने में आया है। वल्लाह अजब हुस्न खुदादाद पाया है। वल्लाह उभरे हुए सीने पर फूलों की बध्धियाँ क्या जोबन दिखाती हैं, और कानों की बिजलियाँ दिल पर बिजली गिराती हैं।

छुट्टन—मैं देख चुका हूँ, जनाब। यार, आज किसी तरह बाग में बुलवाओ तो जानें। वैसे तो मुश्किल है, पर तुम कोशिश करो तो मुमकिन है। वल्लाह बड़ा लुत्फ होगा।

वकील—बड़ी टेढ़ी खीर है। आसान काम नहीं।

अस्करी—इससे आपको क्या बहस है, साहब? देखते जाइये।

नवाब अस्करी ने मम्मन को बुलाकर कान में कुछ कहा। "बहुत खूब हुजूर, अभी बन्दोबस्त करता हूँ।"

मम्मन ने खुदा जाने क्या पढ़ा दी कि अब्बासी और रईस में चख चल गयी और अब्बासी अपनी महरी को लेकर फीनस पर सवार हो- कर चल दी। मम्मन फ़ीनस के साथ हो लिये और नवाब मुहम्मद अस्करी, छुट्टन साहब तथा वकील साहब गाड़ी पर सवार होकर बाग को चले।

दरगाह के बाहर क़दम रखा ही था कि क्या देखते हैं कि एक मशाल रोशन है और तीन-चार सफेद-पोश रईस एक औरत को साथ लिये हुए चले आते हैं। यह देखकर वकील साहब ने कहा, आपके शहर में यह बड़ी खराब रस्म है महज़ बदतहज़ीबी। ऐब भी करने को हुनर चाहिए।

छुट्टन—हमको आपकी राय से इत्तफ़ाक़ है। वाक़ई यह बड़ी शर्म की बात है। कसबी के साथ सरे बाज़ार निकलना और मशाल रोशन। यह कौन-सी रियासत है!

अस्करी—इसमें ऐब क्या है, साहब? यह तो ऐन रियासत है। हज़रत हम तो इस भोंड़ी तहज़ीब के क़ायल हैं।

वकील—हाँ, अब तहज़ीब तो इसी में रह गयी है कि ज़नाने बाज़ारी के साथ गली-कूचों में मारा-मारा फिरे।

अस्करी—मारा-मारा फिरना क्या मानी? इस ठस्से से बाहर निकलना रईसों-अमीरों का काम है या टकलचों टुकरगदों का? दो-चार खिदमतगार पीछे हैं, दो-एक दोस्त-मुसाहिब साथ हैं, मशालची है और एक महबूब हसीन है। भला और किसी को नसीब हो सकती हैं ये बातें? और इन बातों को हुजूर बदतहज़ीबी क़रार देते हैं? शान खुदा।

वकील—पर हमने इसी शहर में रस्म देखी है।

अस्करी—क्या और कहीं आदमी भी बसते हैं सिवाय लखनऊ के ?

वकील—जी नहीं। और तो सब कहीं जानवर बसते हैं। मुझे इस शहर की गुफ़्तगू और बोलचाल बहुत पसंद है। लखनऊ और अहले लखनऊ (लखनऊ-निवासियों) का क्या कहना। इतने में गाड़ी बाग़ में पहुँच गयी, और सब उतरकर बी अब्बासी की फ़ीनस का इन्तज़ार करने लगे।

[१२]

सूत न कपास

नवाब छुट्टन साहब के नाम उनके एक दोस्त का ख़त नैनीताल से आया कि चन्द रोज़ के लिए यहाँ चले आओ। आजकल लुत्फ़ आ रहा है और खूब जलसे हो रहे हैं। उसी वक्त मुहम्मद अस्करी के पास आये और कहा—भाई साहब, आपको अब ज़रूर चलना होगा। हमारे एक दोस्त ने नैनीताल से बुलाया है। अब बस, तैयारी कीजिये।

अस्करी—अच्छा भई, तो अब तैयारी कर ही दूँ ? मगर यार हमने तो पहाड़ की सूरत भी आज तक नहीं देखी है। हमें तो वाक़ई में बड़ा ख़ौफ़ मालूम होगा। सुनते हैं, इधर उधर दोनों तरफ़ खड्ड हैं और ज़रा-सा पाँव फिसला कि बस अंटाग़फ़ील हो गये, गोया पैदा ही नहीं हुए थे। यह तो हमने बहुत-से आदमियों की ज़बानी सुना है। अगर ख़ौफ़ है तो इसी बात का।

छुट्टन—भई, ऐसी बातें कहाँ नहीं होती हैं। आपके शहर में भी जिस साल बरसात बहुत होती है, अक्सर मकान गिर जाते हैं या नहीं, और आदमी दबकर मर जाते हैं।

अस्करी—भला, अपने घोड़े लेते चलें या नहीं ?

छुट्टन—वाही हो। गाड़ियाँ वहाँ कहाँ चल सकती हैं ? सब लोग पैदल या पहाड़ी टट्टू पर जाते हैं। पैदल चलना वहाँ बहुत मुफ़ीद है और सब आदमी एक या दो घण्टे के लिए हवा खाने जाते हैं। झील के किनारे घूमना बहुत मुफ़ीद है।

अस्करी—क्या झील बहुत लम्बी-चौड़ी है ? कोई टिकैतराय के तालाब के बराबर ?

छुट्टन—टिकैतराय का तालाब आप लिये फिरते हैं। यह नहीं कहते कि गोमती के पाट से चौगुना पाट है। एक मील लंबी और पौन मील चौड़ो और गहरी इस क़दर कि थाह कहीं मिलती ही नहीं। इस झील में भी पहाड़ हैं। लोग डोंगियों और बजरों पर सैर करते हैं।

अस्करी—हमने सुना है कि अगर कोई शख्स बजरे पर सवार न हो, तो उस पर वहाँ वाले हँसते और बनाते हैं। यह बड़ी खराबी है।

छुट्टन—अजीब बेवक़ूफ़ आदमी हो। भई किसी को क्या पड़ी है कि ख्वाहमखाह आपको मजबूर करे।

अस्करी—अच्छा, भला अब्बासी को भी साथ लेते चलें तो क्या हर्ज है इसमें ? दो घड़ी की दिल्लगी ही रहेगी।

छुट्टन—आप तमाम चौक को साथ ले चलें, अख्यार है।

इस सलाह के बाद नवाब साहब ने बड़ी धूमधाम से सफ़र की तैयारियाँ करनी शुरू कर दीं। एक अंग्रेज़ी कोठी में जाकर गरम कपड़े खरीदे और पश्मीने के कोट व पतलून बनवाये। इसमें दो-एक मुसाहिबों ने खूब माल चीरा और हाथ गरमाये। नवाब साहब ने शान में इतना कपड़ा ख़रीदा, जिसका दसवाँ हिस्सा सारी उम्र के लिए काफ़ी था। मुसाहिबों और नौकरों

के लिए भी गरम कपड़े जी खोलकर बनवाये, ताकि लोग दिलों में सोचें कि जिसके मुसाहिब इस ठस्से से रहते हैं वह खुद कैसा अमीर न होगा। पहाड़ पर चाय पीने के लिए एक हज़ार रुपये के बर्तन सोने-चाँदी के और गङ्गा जमुनी के बनवाये, हालाँकि मौजूदा सामान ज़रूरत से कहीं ज्यादा था। मगर रुपये के चोचले, 'ज़रदार सभी ठगते हैं, वे ज़र का खुदा हाफ़िज़।'

एक अफ़ीमची ने सलाह दी, हुजूर, ढाक और इमली के सच्चे कोयले ज़रूर लेते चलियेगा। अव्वल तो हुक्का बे कोयले के मज़ा न देगा और बे-हुक्के के हम लोगों से रहा नहीं जाता। हम लोग तो खैर बर्दाश्त भी कर लेंगे, मगर सरकार को सख्त तकलीफ़ होगी और हुज़ूर बेचैन हो जायँगे। बस, कोई चार मन कोयले काफ़ी होंगे।

दूसरा—हाँ हुजूर, फिर चाय के लिए भी कोयलों की ज़रूरत होगी। वहाँ की आग बिलकुल ठण्ढी होती है। ज़रा भी नहीं ठहरती इसलिए अच्छा यही है कि कील-काँटे से दुरुस्त रहें। कोई ऐसा-वैसा आदमी हो तो खैर; मगर हुज़ूर जैसे शाहज़ादों को तो ज़रूर आला दरजे के सामान के साथ जाना चाहिए, ताकि कोई तकलीफ़ न होने पाये।

मम्मन—खुदावन्द, वहाँ हुजूर के क़ाबिल मेज, कुर्सी, शीशे वगैरा मिलेंगे या नहीं? अगर न मिलें तो यहाँ से लेते चलें। हुजूर, वह दो आईने, जो हुज़ूर परसों बहरामजी के यहाँ से खरीदकर लाये हैं, ज़रूर लेते चलियेगा। शहज़ादा मिर्ज़ा फ़रुख़-बख्त फ़रमाते थे कि ऐसे शीशे सिवाय बादशाह के यहाँ के और किसी के यहाँ शाही के ज़माने में भी न थे। जिस कोठी में हुजूर फ़रोकश होंगे, उसकी इन आँखों से रौनक हो जायगी। और साहब लोग जो हुज़ूर से मिलने आयेंगे, देखकर लोट जायँगे कि हाँ, लखनऊ के कोई रईस-आज़म आये हैं।

पहिला मुसाहिब—सरकार लछिमी हथिनी को जरूर लेते चलें। वहाँ कभी किसी ने हाथी की सूरत काहे को देखी होगी। जिस वक्त हुजूर सवार होकर निकलेंगे और गंगा-जमुनी हौदा चमकेगा, वह शान नजर आयेगी कि सुभानअल्लाह। और हुजूर, वह कमख्वाब वाली झूल भी लेते चलियेगा। एक नक़ीब साथ हो। आगे-आगे डंका बजता हो।

मम्मन—हुजूर, हमारी सलाह तो डंके की नहीं है। यह अंग्रेज़ियत के ख़िलाफ़ है।

अख्तर—अच्छा, जाने दो। हाथी के गले में घण्टा जरूर हो। ठनाठन की आवाज दूर से इत्तला दे।

मिर्ज़ा—हुजूर, नौबतख़ाना ज़रूर हो। बड़ी शान हो जाये। और अगर शाही मरातिब भी साथ हो, तो क्या कहना है!

अस्करी—भई, ऐसा न हो कि लोग ख्वाहमख्वाह को हँसे और हमारी मुफ्त की जगत-हँसाई हो।"

[१३]

पहाड़ पर जाने का जल्सा

अस्करी—भई छुट्टन साहब, अब तो हमने जाने का तै कर लिया है। अब हम ज्यादह नहीं टाल सकते। मगर जनाब रवानगी से पहले एक दिन जल्सा जरूर होगा और ऐसा-वैसा नहीं, इन्शाअल्लाह इस धूम-धाम से जल्सा हो कि जो मिसाल हो जाये। अच्छा, तो फिर परसों जल्सा हो जाय; और हम साहब लोगों को भी बुलाना चाहते हैं।

छुट्टन—बेहतर है, मगर परसों ही हो जाय यानी न जाने किस रोज तैयारी हो जाय। तरसों ही शायद चल दें।

नवाब अस्करी ने जल्सा बड़ी धूमधाम से करना तै किया,

जिसमें लखनऊ और देहात के चुनी-चुनी तवायफें थीं–कोई हुस्न व जमाल में लासानी, कोई गाने में बे-नजीर, कोई लगावट में बेमिस्ल, कोई नाच में लासानी, कोई बताने में ताक़। अलग़रज़ कुल तवायफें अपने-आप ही नज़ीर थीं, क्योंकि नवाब साहब ने साहब लोगों को भी बुलाया था;इसलिए उनको बड़ी फ़िक्र थी कि ऐसा न हो कि कोई काम साहब लोगों की राय के ख़िलाफ़ हो। लिहाज़ा छोटे साहब को चिट्ठी लिखी कि आप किसी वक्त आन-कर इंतज़ाम की जाँच कर लीजिये। छोटे साहब नवाब साहब के मकान पर आये; यह उस वक्त आराम में थे। गाड़ी रोककर कहा—नवाब साहब को सलाम दो। दारोगा ने कहा—हुज़ूर, नवाब साहब तो आराम में हैं। साहब ने ताज्जुब से पूछा, सोते हैं? यह कौन-सा वक्त आराम करने का है? अब शाम में थोड़ी ही कसर है।

दारोगा ने बात टालने को कहा—हुज़ूर, आज दोपहर ढले से सरकार की तबीअत नासाज़ है। खाना भी कम खाया, मगर इससे भी कोई फ़ायदा न निकला। अभी-अभी आँख लग गयी है।

साहब—देखो, साहब लोगों का खाना यहीं पकेगा। बावर्ची, खानसामा और बैरे का हमने इन्तज़ाम कर लिया है। और एक फेहरिस्त हम लाये हैं, उसके मुताबिक़ सब चीज़ें मँगवा लेना। कुल चीज़ें अव्वल नंबर हों। हम सवेरे फिर आयेंगे।

नवाब साहब जब सोकर उठे और छोटे साहब के आने का हाल मालूम हुआ तो बड़ा अफसोस करने लगे और सारे नौकरों को खूब डाँटा। अब दूसरे दिन का हाल सुनिये। दूसरे रोज तड़के धुँधलके छोटे साहब अपने अरबी पर सवार नवाब की महलसरा में आ मौजूद हुए और दरयाफ़्त किया कि नवाब साहब महल में हैं, या बाहर सैर को चले गये?

ख़िदमतगार—हुज़ूर, टमटम पर सवार होकर हवाखोरी को तशरीफ़ ले गये हैं, मगर कह गये हैं कि अगर हुज़ूर साहब बहादुर तशरीफ लावें तो उनको गोल कमरे में बिठाना। हम अभी-अभी आते हैं। थोड़ी दूर हवाखोरी को जाते हैं। यह कह ही रहा था कि दरोगा ने आनकर कहा, खुदावन्द, सरकार आराम में हैं। अगर हुक्म हो तो जगा दिये जायें। अब साहब की अक्ल दंग कि खिदमतगार कुछ कहता है और दरोगा कुछ। इतने में मियाँ मम्मन आये। साहब को अदब से सलाम किया और कहा, हुज़ूर, नवाब साहब की तलाश में हैं? नवाब साहब को कल शब एक दोस्त ने जल्से में तलब किया था। इस वक्त नवाब साहब ने मुझे दौड़ा दिया कि अगर साहब बहादुर तशरीफ लायें तो तुम साथ-साथ रहो। और सरकार आज कच-हरी में या हुज़ूर के बँगले पर किसी वक्त हुज़ूर से मिलेंगे। अब तो साहब और भी चकराये कि यह भेद क्या है। खिद-मतगार कहता है, हवा खाने गए हैं; दारोगा कहता है घर ही पर हैं और आराम फरमा रहे हैं; और तीसरे उनको घर ही पर नहीं बताते। साहब ज़िन्दा-दिल और हँसमुख आदमी थे, इस बात से उनको दिल-ही-दिल में हँसी आ गयी। एक औरत से जो महलसरा से निकली थी, उन्होंने पूछा—नवाब साहब अन्दर क्या करता है? तुमको हम हवालात भेज देगा। एकदम से तुम बोलो कि नवाब साहब कहाँ है? औरत ने तंग आकर जवाब दिया, ऐ! क्या दौड़ लाये हो? और यह कहकर वह महलसरा में घुस गयी।

उसने अन्दर जाकर महरी से कहा, कुछ दाल में काला-काला-सा मालूम होता है। अल्लाह खैर करे! एक फ़िरंगी घोड़े पर सवार फाटक को घेरे खड़ा है और नवाब साहब को पूछ रहा है। दारोगा, दरबान, खिदमतगार और मम्मन सब-के-सब

थर्रा रहे हैं। न जाने क्या सबब है। महरी ने दुअआजी से कहा। उन्होंने बेगम साहबा को खबर दी। वह सुनते ही काँप उठीं और फौरन् नवाब साहब को जगाया। वह आँखें मलते हुए उठे और फिर लेट गये। मगर बेगम की घबराहट देखकर खुद भी घबरा गये और उठ बैठे। बेगम साहबा ने कहा, ज़री दरयाफ़ तो करो, आज सबेरे-सबेरे यह कौन अंग्रेज तुम्हारी तलाश में इधर-से-उधर मँडला रहा है? ज़री पर्चा लिखकर दरोगा से पूछ तो लो।

नवाब साहब ने पर्चा लिखना चाहा; मगर क़लम, दावात, कागज़ सब नदारद। कोठी में आदमी दौड़ा गया, महरी ने दरबान से कहा, दरबान ने खिदमतगार से। उसने दारोगा से कोठी का वह कमरा खुलवाया, जिसमें लिखने-पढ़ने का सामान सिर्फ़ दिखाने के लिए रखा था, कभी काम नहीं आता था। खिदमतगार ने वहाँ से कलम, दावात, और कागज़ लेकर दरबान को दिया; उसने आवाज़ देकर महरी को बुलवाया। महरी ने ऊपर ले जाकर नवाब साहब को दिया। अभी लिख ही रहे थे कि याद आया कि छोटे साहब आये होंगे। फौरन् मुँह-हाथ धोकर कपड़े पहिने और बाहर आये। इधर साहब अपने दिल में हँसते थे कि इतनी देर हो गयी, अभी तक यही नहीं मालूम हुआ कि नवाब साहब घर में हैं या नहीं।

साहब—आपको नवाब साहब बड़ी तकलीफ़ हुई।

अस्करी—जी नहीं, आप कबसे आये हुए हैं?

साहब—एक घण्टा हुआ होगा हमको।

अस्करी—इन लोगों ने मुझे ज़रा इत्तला तक न दी। (दरोगा से) क्या झक मारते हो? ग़लती सरासर तुम्हारी है। एक घण्टे से साहब तशरीफ़ लाये हैं और तुमको ख़बर ही नहीं। सख़्त अफ़सोस का मुक़ाम है। वल्लाह, और तुम्हीं-जैसे लोग मालिक

को बदनाम करते हैं। छोटे साहब, मैं आपसे माफ़ी चाहता हूँ।

साहब—वेल, कुछ परवा नहीं। आप हमारे साथ चलिये उस जगह पर जहाँ दावत होगी। साहब ने घोड़े से उतरकर नवाब साहब से हाथ मिलाया, और दोनों उधर चले गये जहाँ दावत का इन्तज़ाम था।

[१४]

ज़माने का रंग

नवाब साहब ने इस शान से सफ़र की तैयारियाँ शुरू कीं कि सारे शहर में मशहूर हो गया कि नवाब साहब दोस्तों और मुसाहिबों के साथ नैनीताल जानेवाले हैं। जल्से के दिन मि० फ्रेज़र, आई० सी० एस०, असिस्टेंट कमिश्नर से वायदा हो गया कि साथ ही चलेंगे और परसों हज़ार काम छोड़कर रवाना हो जायँगे। मुंशी महराजबली म्युनिसिपल-कमिश्नर ने भी वायदा कर लिया कि हम भी ज़रूर आपके साथ चलेंगे।

दूसरे दिन रवानगी का दिन क़रार पाया था। नवाब साहब ने फ्रेज़र साहब को लिख भेजा कि स्टेशन का रास्ता इसी तरफ़ से है। आप इधर ही तशरीफ़ लाइये, बन्दा तैयार रहेगा।

अब सुनिये कि कोई दो बजे के क़रीब चोबदार ने अर्ज़ किया, हुज़ूर को बेगम साहबा ने थोड़ी देर के लिए बुलाया है। नवाब साहब महलसरा में गये, तो उनकी बड़ी साली उफ्त-आरा बेगम ने कहा—मैं सुनती हूँ, अस्करी दूल्हा, तुमने सफ़र की तैयारियाँ कर दीं?

नवाब—जी हाँ, आज शब को इरादा है।

उफ्तआरा—उई, आज ही शब को? वाह वा! ऐसा नहीं होने

का। मैं एक न मानूँगी। बड़े भैया की मूँछों का कोंड़ा होने वाला है और तुम न होगे? यह भी कोई बात है, भला।

अस्करी—अगर पहिले से मालूम होता, तो इरादा न करता। ख़ुदा मुबारिक करे, मुझे तो ज़रा भी इत्तला न थी।

उफ़्तआरा—ऐ, तो ऐसी लाचारगी की कौन-सी बात है?

बेगम—हाँ-हाँ, इस हफ़्ते में सफ़र न हो तो क्या हरज है? क्या सायत टली जाती है?

अस्करी—सुभानअल्लाह, मैं एक फ़िरंगी साहब से वायदा कर चुका हूँ। वायदा पूरा करना मेरा फ़र्ज़ है।

उफ़्तआरा—ऐसे-ऐसे वायदे हुआ ही करते हैं। हम न मानेंगे। मूँछों का कोंड़ा हो ले तो चले जाना।

अस्करी—मैं क्या कहूँ कि मैं किस क़दर मजबूर हूँ' वल्लाह।

उफ़्तआरा—साहब की तो इत्ती खातिर, और हमारी ख़ातिर नहीं मंजूर है?

अस्करी—मैं आख़िर साहब से कहूँ क्या? उज्र क्या करूँ?

उफ़्तआरा—कह दो कि हमारी बड़ी साली के भैया की मूँछों का कोंड़ा है। हम अभी एक हफ़्ते तक नहीं चल सकते। बस, छुट्टी हुई।

अस्करी—(हँसकर) बात क्या मुख़्तसिर कर दी है आपने। बस छुट्टी होने की एक ही कही। ऐसा हो सकता है, भला? मुमकिन नहीं, वल्लाह। तुम लोग तो बाहर निकलती-बैठती नहीं हो। साहब लोगों के ख्यालात तुम्हें क्या मालूम।

बेगम—उई अल्लाह, आख़िर उसके कोई लड़का-बाला है, या निगोड़ा नाठा है मुआ? जो बात है अनोखी। ऐ हाँ, कहने लगे साहब लोगों के ख़्यालात तुम्हें क्या मालूम। इसमें मालूम

और ग़ैर-मालूम क्या मानी। त्यौहार तक़रीब हिन्दू-मुसलमान सभी के यहाँ होते हैं।

अस्करी—अब कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ती हमसे।

उफ्तआरा—हम हरगिज़-हरगिज़ जाने न देने के। ख़ातून जन्नत की क़सम हमें बड़ा मलाल होगा। तुम्हीं लोगों से महफ़िल की रौनक़ है। ऐसी तक़रीब पर और चले जाओ। यह भी कोई बात है, भला?

अस्करी—अब तो साहब को लिख भेजने का भी मौक़ा नहीं है: तीन बज गये हैं और चार का अमल है। मेरा सब असबाब बँध चुका है। सब नौकरों, ख़िदमतगारों और मुसाहिबों को पेशगी रुपया दे चुका हूँ। साहब से वायदा कर लिया है। एक और दोस्त हैं महराजबली, उनसे भी वायदा हो चुका है। बड़ी हेठी होगी।

उफ्तआरा—फिर चाहे जो हो। हरचै बादाबाद। जाना तो किसी तरह नहीं हो सकता। यह तो मुमकिन ही नहीं। और ऐसा कौन ज़रूरी काम है? मुए, नैनाताल में कौन लड्डू धरे हैं? हमने तो आज तक नाम भी नहीं सुना था। मगर अल्लाह जाने क्यों यह धुन लगी है।

अस्करी—आख़िर नैनीताल में लोग रहते हैं कि नहीं रहते?

बेगम—रहने को तो लोग जेहलख़ाने में भी रहते हैं।

अस्करी—मैं क्योंकर सफ़र मुल्तवी कर सकता हूँ, भला? बड़ी बदनामी होगी, मगर तुम औरतों को समझाये कौन? जो बात ज़ेहन में जम गयी, पत्थर की लकीर हो गयी। अल्लाह गवाह है, बड़ी ही जगत-हँसाई होगी। लोग क्या कहेंगे? अच्छा, अब इन्साफ़ आप ही के हाथ है, मगर हठधर्मी न कीजियेगा।

उफ्तआरा—यह हठधर्मी ही सही। मगर आप जाने न

पाइयेंगा। चाहे जो हो, आप जाने नहीं पाते अब।

नवाब साहब बड़े परेशान हुए कि अब क्या करूँ। न जाऊँ तो फ्रेज़र साहब गुस्सा हो जायँगे, और मुंशी महाराजबली क्या कहेंगे? अगर चला जाऊँ तो बीवी से झगड़ा पैदा हो, साली अलग मुँह फुलाये और रिश्तेदार ख़फ़ा हो जायँगे। यह सोचते हुए नवाब साहब बाहर तशरीफ़ ले जाने के लिए खड़े हुए तो उफ्तआरा बेगम ने रोका और कहा, हम हरगिज़-हरगिज़ न जाने देंगे। पहिले वायदा कर लीजिये और हमारी क़सम खा लीजिये। फिर जहाँ जी चाहे, जाइये।

अस्करी—अच्छा, एक घण्टे की मुहलत चाहता हूँ। बाद एक घण्टे के साफ़-साफ़ कह दूँगा कि जाऊँगा या नहीं।

उफ्तआरा बेगम बद-दिमाग़ होकर बोलीं, जाने का तो नाम न लो। जाना तो नामुमकिन है, चाहे साहब ख़फ़ा हों या इधर की दुनिया उधर हो जाये। मामले की बात तो यह है कि हफ्ते भर बाद चले जाना।

बेगम—अच्छा, एक घण्टा दूर नहीं है। एक घण्टे की मुहलत सही।

नवाब साहब बाहर गये तो मुसाहिबों से गप्पें लड़ाने लगे। फ्रेज़र साहब को ख़बर करना वग़ैरा भूलकर मुसाहिबों से ख़ुश-गप्पियाँ करने लगे। चुहल होने लगी, दिल्लगी-मज़ाक़ में वक्त ज़ाया हो गया। इसी हँस-बैस में शाम हो गयी, जाने का वक्त करीब आ गया। बेगम साहब ने महरी को भेजकर नवाब साहब को महलसरा में बुलवाया, दरवाजे बन्द करवा दिये और दरबान से कह दिया कि दारोगा को हुक्म दे दो कि अगर कोई साहब नवाब साहब को बुलाने आये तो कह दें कि नवाब साहब आराम में हैं। खाना ज़रा देर से खाया था, इसलिए दुश्मनों की तबीअत कुछ यूँ ही-सी किसलमन्द है। उफ्तआरा बेगम ने जो मीठी-मीठी बातें करनी शुरू कीं तो आठ का गजर बज गया।

मिस्टर फ्रेजर ठीक वक्त पर पालकी गाड़ी में सवार होकर आये और साईस ने उतरकर कहा, साहब आये हैं। नवाब साहब को इत्तला दो कि बाहर तशरीफ़ लायें। दारोगा साहब बौखलाये हुए आगे बढ़े और झुककर सलाम करके कहा—ख़ुदावन्द, नवाब साहब ने खाना आज कोई पाँच बजे खाया था, सो आँख लग गयी है और तबीअत किसी क़दर किसलमन्द है आज। हुज़ूर वह इस वक्त बाहर नहीं आ सकते।

फ्रेजर—(ताज्जुब से) तुम यह क्या बोलता है? नवाब साहब तो आज नैनीताल जानेवाला था।

दारोगा—ख़ुदावन्द, हमको इसका ठीक-ठीक हाल नहीं मालूम है। (सिर खुजलाकर) कुछ ख़बर तो थी। पीर मुरशिद इस नागहानी अमर को कोई क्या करे।

फ्रेज़र—नाईं-नाईं, सब झूठ बात है। शर्म का बात है। एकदम झूठी बात। तुम सब बदमाश है। दाल न गलती देखकर फ्रेज़र साहब गुस्से में तमतमाते हुए चले गये। उनके जाते ही नवाब छुट्टन आये। पूछा, नवाब साहब तैयार हैं?

दारोगा—हुज़ूर, दो बजे तक तो पूरी तैयारी थी। सब लँद-फँदके लैस। सामान और दो घोड़े भी स्टेशन भेज दिये गये। मगर शाम को नवाब साहब के नाम महलसरा से वारंट आया और हुज़ूर के जाते ही अन्दर से हुक्म आया कि जो कोई आये, उससे कह दो कि नवाब साहब ने खाना देर से नोश फरमाया था, तबीअत ज़रा बे-लुत्फ़ हो गयी है, आराम फ़रमाते हैं और इस वक्त किसी से न मिलेंगे। फ्रेज़र साहब आनके फिर गये। बहुत ही बद-दिमाग़ और नाराज़ होकर गये हैं। मैं तो काँप उठा था, वल्लाह।

छुट्टन—इन्हीं बातों से तो हिन्दुस्तानी बदनाम हैं। अभी दरयाफ़्त करो कि नवाब साहब अब कैसे हैं? दारोग़ा ने ड्योढ़ी

पर जाकर आवाज़ दी, तो एक खिलाई ने जो वहाँ खड़ी थी, कहा—सरकार आते हैं, बातें कर रहे हैं। इतने में नवाब साहब उपस्थित हुए। पूछा—क्या फ़ेजर साहब आये थे ?

दारोगा ने जवाब दिया—खुदावन्द, क्या अर्ज़ करूँ, इस क़दर ख़फ़ा हुए कि अलअमाँ। बहुत ही क्रुद्ध हुए। फाड़े खाते थे। पाते तो कच्चा ही खा जाते।

अस्करी—लाहौलवलाक़ुवत, मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ। भई, क्या कहूँ, क्या कहूँ, कुछ कहा ही नहीं जाता, और चुप भी नहीं रहा जाता। लेकिन इसमें मेरा कुछ भी कुसूर न था। वह सबब ही ऐसा हो गया कि मेरा कुछ भी बस न चल सका; बल्कि मुफ़्त की बदनामी हुई। खैर; अफ़सोस, हज़ार अफ़सोस।

नवाब साहब और छुट्टन साहब की जो मुलाक़ात हुई तो मुहम्मद अस्करी शर्मिन्दा और छुट्टन साहब बिफरे हुए थे। नवाब साहब की गर्दन नीची; छुट्टन साहब का चेहरा मारे क्रोध के लाल और सभी मुसाहिब चुप थे। "यार, आज बड़ा सितम हो गया, भाई छुट्टन साहब !"

छुट्टन—आज से मुझे 'भाई' न कहना, खबरदार!

अस्करी—भाई पहले जरा हाल तो सुन लो।

छुट्टन—सब सुने हुए हैं। सुन चुके सब।

अस्करी—इसमें हमारा रत्ती भर भी कुसूर नहीं है। अगर ज़रा भी कुसूर हो तो जो चोर की सजा वह हमारी सजा। भई, अब तो जो हुआ सो हुआ, आइए जरा दिल बहलायें। इस वक्त बड़ा रंज है। शायद गाना सुनने से ग़म ग़लत हो जाये।

वेश्या की बला दूर हुई। चलिये फ़िक़रेबाज़ी शुरू हो गयी। गो नवाब छुट्टन तो बड़े रंज में थे कि मुहम्मद अस्करी ने अपनी हरकत से सब रईसों को ज़लील किया, फिर भी वह इस रंग में रँग गये।

[१५]

दो अंग्रेजों का वार्त्तालाप

मिस्टर फ्रजर बड़े क्रोध में भरे हुए स्टेशन पर आये और टिकट लेकर रवाना हो गये। उनके दर्जे में एक दूसरे युरोपियन भी थे—मेजर बार्लो। उन दोनों का रास्ते में इस प्रकार वर्त्तालाप प्रारम्भ हुआ।

बार्लो—आपका इरादा कहाँ तक जाने का है?

फ्रज़र—मैं तो नैनीताल जाऊँगा।

बार्लो—हमारा और आपका कहाँ तक साथ रहेगा। आप नैनीताल में कहाँ ठहरेंगे ?

फ्रेज़र—मैं स्वयं नहीं जानता, क्या जवाब दूँ। मैं चकमे में आ गया। एक नवाब साहब ने वायदा किया था कि वह मेरे साथ नैनीताल चलेंगे। वहाँ वह अपने एक दोस्त की सजी-सजायी कोठी में ठहरेंगे। नवाब ने मुझे लिखा कि स्टेशन का रास्ता इसी तरफ से है, मुझे लेते चलियेगा। मैं जो इस वक्त वहाँ गया तो सुना कि नवाब साहब जनानखाने में हैं और उनकी तबीअत कुछ खराब है, क्योंकि उन्होंने खाना देर से खाया था।

बार्लो—आपने बड़ी भारी गलती की जो हिन्दुस्तानियों की बातों का विश्वास किया। मैं यह नहीं कहता कि सभी हिन्दुस्तानी बेईमान होते हैं; किन्तु यह अवश्य कहूँगा कि हिन्दुस्तानी अपने वादे को पूरा करने की परवाह नहीं करते।

फ्रेज़र—मुझे तो इतना क्रोध है कि वर्णन नहीं कर सकता। मुझे सूचना तक न दी, लिखा तक नहीं। भला, इन लोगों के वादों का कोई क्या एतबार करेगा।

बार्लो—यह सब तालीम की खराबी है। तालीम पायें तो सारी बुराई जाती रहे। यह सब जहालत का नुक्स है।

फ्रेज़र—आला दर्जे की तालीम की बाबत आपकी क्या राय है?

बार्लो—बिलकुल खिलाफ। यह लिबरल जुहला की हिमाक़त है जो हिन्दुस्तानियों को आला दर्जे की तालीम देना फ़र्ज समझते हैं। पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी गुस्ताख, मुँहजोर और बे-अदब हो जाते हैं। बंगाल की हालत देखिये। म्युनिसिपल कमेटी के सदस्यों ने गवर्नमेंट की एक न सुनी। सब खिलाफ़ हो गये।

फ्रेज़र—आप ठीक फर्माते हैं। इन लोगों को उतनी ही अँग्रेजी पढ़ानी चाहिए जिससे कि ये क्लर्क का काम कर लें। हाँ, अरबी, फ़ारसी और संस्कृत की तालीम में कोई हर्ज नहीं है। ऐतिहासिक और राजनैतिक बातें सिखलाना बड़ी भारी गलती है। इससे हम लोग अपने रास्ते में काँटे बो रहे हैं। हम तो पुराने फैशन के ही हिन्दुस्तानियों से खुश हैं। वे लोग जब मिलते हैं तब झुककर सलाम करते हैं, जूता उतारकर कमरे में आते हैं और बातचीत में बग़ैर 'हुजूर' कुछ कहते नहीं। हम उन लोगों से नहीं खुश हैं, जो टोपी उतारकर, जूता पहिने हुए आते हैं और इस बात की उम्मीद करते हैं कि हम उनसे हाथ मिलायें।

बार्लो—हमीं ने इनको सिखाया है कि हमसे लड़ो। आजादी और हकूक ऐसे अल्फ़ाज सिखाकर इन लोगों को हमने कहीं का न रखा। अभी से इन लोगों ने ग़ुल मचाना शुरू कर दिया है कि हममें और फिरंगियों में क्यों फर्क किया जाता है?

फ्रेज़र—बहुत ठीक है। हम लोगों ने बहुत बड़ी ग़लती की। इसका नतीजा एक दिन हमें जरूर भोगना पड़ेगा, जब कि हिन्दुस्तान हमारे हाथ से निकल जायगा।

[१५]

दो अंग्रेजों का वार्त्तालाप

मिस्टर फ़जर बड़े क्रोध में भरे हुए स्टेशन पर आये और टिकट लेकर रवाना हो गये। उनके दर्जे में एक दूसरे युरोपियन भी थे—मेजर बार्लो। उन दोनों का रास्ते में इस प्रकार वर्त्तालाप प्रारम्भ हुआ।

बार्लो—आपका इरादा कहाँ तक जाने का है?

फ़ज़र—मैं तो नैनीताल जाऊँगा।

बार्लो—हमारा और आपका कहाँ तक साथ रहेगा। आप नैनीताल में कहाँ ठहरेंगे?

फ़ेजर—मैं स्वयं नहीं जानता, क्या जवाब दूँ। मैं चकमे में आ गया। एक नवाब साहब ने वायदा किया था कि वह मेरे साथ नैनीताल चलेंगे। वहाँ वह अपने एक दोस्त की सजी-सजायी कोठी में ठहरेंगे। नवाब ने मुझे लिखा कि स्टेशन का रास्ता इसी तरफ से है, मुझे लेते चलियेगा। मैं जो इस वक्त वहाँ गया तो सुना कि नवाब साहब ज़नानखाने में हैं और उनकी तबीअत कुछ खराब है, क्योंकि उन्होंने खाना देर से खाया था।

बार्लो—आपने बड़ी भारी गलती की जो हिन्दुस्तानियों की बातों का विश्वास किया। मैं यह नहीं कहता कि सभी हिन्दुस्तानी बेईमान होते हैं; किन्तु यह अवश्य कहूँगा कि हिन्दुस्तानी अपने वादे को पूरा करने की परवाह नहीं करते।

फ़ेज़र—मुझे तो इतना क्रोध है कि वर्णन नहीं कर सकता। मुझे सूचना तक न दी, लिखा तक नहीं। भला, इन लोगों के वादों का कोई क्या एतबार करेगा।

बार्लो—यह सब तालीम की खराबी है। तालीम पायें तो सारी बुराई जाती रहे। यह सब जहालत का नुक्स है।

फ्रेज़र—आला दर्जे की तालीम की बाबत आपकी क्या राय है?

बार्लो—बिलकुल ख़िलाफ़। यह लिबरल जुहला की हिमाक़त है जो हिन्दुस्तानियों को आला दर्जे की तालीम देना फ़र्ज़ समझते हैं। पढ़े-लिखे हिन्दुस्तानी गुस्ताख़, मुँहजोर और बे-अदब हो जाते हैं। बंगाल की हालत देखिये। म्युनिसिपल कमेटी के सदस्यों ने गवर्नमेंट की एक न सुनी। सब खिलाफ़ हो गये।

फ्रेज़र—आप ठीक फ़र्माते हैं। इन लोगों को उतनी ही अँग्रेजी पढ़ानी चाहिए जिससे कि ये क्लर्क का काम कर लें। हाँ, अरबी, फ़ारसी और संस्कृत की तालीम में कोई हर्ज नहीं है। ऐतिहासिक और राजनैतिक बातें सिखलाना बड़ी भारी ग़लती है। इससे हम लोग अपने रास्ते में काँटे बो रहे हैं। हम तो पुराने फैशन के ही हिन्दुस्तानियों से खुश हैं। वे लोग जब मिलते हैं तब झुककर सलाम करते हैं, जूता उतारकर कमरे में आते हैं और बातचीत में बग़ैर 'हुजूर' कुछ कहते नहीं। हम उन लोगों से नहीं खुश हैं, जो टोपी उतारकर, जूता पहिने हुए आते हैं और इस बात की उम्मीद करते हैं कि हम उनसे हाथ मिलायें।

बार्लो—हमीं ने इनको सिखाया है कि हमसे लड़ो। आज़ादी और हक़ूक ऐसे अल्फ़ाज सिखाकर इन लोगों को हमने कहीं का न रखा। अभी से इन लोगों ने ग़ुल मचाना शुरू कर दिया है कि हममें और फिरंगियों में क्यों फ़र्क किया जाता है?

फ्रेज़र—बहुत ठीक है। हम लोगों ने बहुत बड़ी ग़लती की। इसका नतीजा एक दिन हमें ज़रूर भोगना पड़ेगा, जब कि हिन्दुस्तान हमारे हाथ से निकल जायगा।

वालों—मगर अब पछताने से क्या होता है। हमने खुद अपने हाथों से अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी है।

इसी तरह की बातें मिस्टर फ्रेज़र और मेजर वालों में होती रहीं।

[१६]

रेल गायब गुल्ला

मुंशी महाराजवाली ने नावब साहब के भी कान काटे! सफ़र वाले दिन शाम को चार बजे तक सफ़र सिर पर सवार था। चार बजे तक मुहल्ले में म्युनिसिपल-कमिश्नर की हैसियत से मौके की तहक़ीक़ात के लिए गये। अब वहाँ जमीन पर क़दम ही नहीं रखते। मुहल्ले भर की नाक में दम कर दिया। जब घर तशरीफ़ ले गये तो जोरू से कहने लगे—आज एक मुकदमे की जाँच के लिए गया था। एक और कमिश्नर हमारे साथ थे। हमारे सिवा और किसी को कुछ आता-जाता तो है नहीं, हमने जो चाहा सो किया। दारोगा को डाँट बतायी और अब उसे हम मौकूफ करा देंगे। साहब हमसे बहुत खुश हैं। हम सिवा 'हाँ' के और कुछ नहीं कहते।

बीबी ने मुंशीजी को आड़े-हाथों लिया और खूब सुनायी। पिटे-से मुँह मुंशी जी बाहर आये और एक दोस्त से बातें करने लगे। सात बजे तक शेर-शायरी की चर्चा होती रही। किसका सफ़र और कैसा नैनीताल—सब भूल गये। थोड़ी देर बाद याद आया कि रेल-घर जाना है। असबाब बँधा रखा था; किराये की गाड़ी मँगवायी। इतने में नौ का अमल हो गया। एक बार ख़िदमतगार वापस आया और बोला—हुजूर, अव्वल दर्जे की गाड़ी मिलती है, सिकन किलास की नहीं मिलती। मुंशी जी ने कहा—अच्छा, रेल-घर तक का आठ आने दे देंगे।

नौकर फिर वापस आकर बोला—हुज़ूर, वह बारह आने माँगता है। मुंशीजी—अच्छा भई, लाओ।

आदमी गया। गाड़ी निकालने, घोड़े जोतने और साज लगाने में काफी देर लगी। गाड़ी आयी, असबाब लादा गया। मुंशी जी मकान के अन्दर गये और जनानखाने से लगभग पौन घण्टे में निकले। गाड़ी पर सवार हुए, तो दस मिनट तक तो नौकरों को यही हुक्म देते रहे कि यह करना, वह करना।

ख़ुदा-ख़ुदा करके रवाना हुए और स्टेशन पर पहुँचकर प्लैटफ़ार्म पर टहलने लगे। उन्हें न तो यह मालूम कि रेल किस वक्त आती है, और न यही मालूम कि इस वक्त क्या समय है—कितने बजे हैं।

थोड़ी देर बाद घंटी बजी तो आपने एक क्लर्क से पूछा—बाबू साहब, नैनीताल के लिए रेल किस वक्त आती है?

क्लर्क ने जवाब दिया—रेल काठगोदाम तक जाती है, नैनीताल नहीं। आप कहाँ तक जानेवाले हैं यहाँ से?

मुंशीजी—हम तो इस वक्त की रेल से नैनीताल जायँगे।

क्लर्क—रेल तो गयी, बरेली की रेल चली गयी।

मुंशीजी—अरे लाहौलवलाकूवत। बुरी हुई वल्लाह। हमसे किसी ने कहा ही नहीं कि नैनीताल की रेल चली गयी, वर्ना हम पहिले ही से आ जाते। भला इस रेल पर नवाब मुहम्मद अस्करी साहब भी थे?

क्लर्क—जी नहीं।

मुंशीजी अपना-सा मुँह लेकर स्टेशन से बैरंग रवाना हुए। असबाब घर भेजा और स्वयं नवाब साहब के मकान पर तशरीफ़ ले गये। जब गाड़ी कोठी में पहुँची तब नवाब साहब ने समझा कि मिस्टर फ्रेज़र आ गये। झट एक कमरे में घुस रहे और

वालों—मगर अब पछताने से क्या होता है। हमने खुद अपने हाथों से अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी है।

इसी तरह की बातें मिस्टर फ्रेज़र और मेजर वालों में होती रहीं।

[१६]

रेल गायब गुल्ला

मुंशी महाराजवाली ने नावब साहब के भी कान काटे! सफ़र वाले दिन शाम को चार बजे तक सफ़र सिर पर सवार था। चार बजे तक मुहल्ले में म्युनिसिपल-कमिश्नर की हैसियत से मौके की तहकीकात के लिए गये। अब वहाँ जमीन पर क़दम ही नहीं रखते। मुहल्ले भर की नाक में दम कर दिया। जब घर तशरीफ़ ले गये तो जोरू से कहने लगे—आज एक मुकदमे की जाँच के लिए गया था। एक और कमिश्नर हमारे साथ थे। हमारे सिवा और किसी को कुछ आता-जाता तो है नहीं, हमने जो चाहा सो किया। दारोगा को डाँट बतायी और अब उसे हम मौकूफ करा देंगे। साहब हमसे बहुत खुश हैं। हम सिवा 'हाँ' के और कुछ नहीं कहते।

बीवी ने मुंशीजी को आड़े-हाथों लिया और ख़ूब सुनायी। पिटे-से मुँह मुंशी जी बाहर आये और एक दोस्त से बातें करने लगे। सात बजे तक शेर-शायरी की चर्चा होती रही। किसका सफ़र और कैसा नैनीताल—सब भूल गये। थोड़ी देर बाद याद आया कि रेल-घर जाना है। असबाब बँधा रखा था; किराये की गाड़ी मँगवायी। इतने में नौ का अमल हो गया। एक बार ख़िदमतगार वापस आया और बोला—हुजूर, अव्वल दर्जे की गाड़ी मिलती है, सेकिन किलास की नहीं मिलती। मुंशी जी ने कहा—अच्छा, रेल-घर तक का आठ आने दे देंगे।

नौकर फिर बग़ल आकर बोला—हुज़ूर, वह बारह आने माँगता है। मुंशीजी—अच्छा भई, लाओ।

आदमी गया। गाड़ी निकालने, घोड़े जोतने और साज लगाने में काफी देर लगी। गाड़ी आयी, असबाब लादा गया। मुंशीजी मकान के अन्दर गये और जनानखाने से लगभग पौन घण्टे में निकले। गाड़ी पर सवार हुए, तो दस मिनट तक तो नौकरों को यही हुक्म देते रहे कि यह करना, वह करना।

ख़ुदा-ख़ुदा करके रवाना हुए और स्टेशन पर पहुँचकर प्लैटफ़ॉर्म पर टहलने लगे। उन्हें न तो यह मालूम कि रेल किस वक्त आती है, और न यही मालूम कि इस वक्त क्या समय है—कितने बजे हैं।

थोड़ी देर बाद घंटा बजी तो आपने एक क्लर्क से पूछा—बाबू साहब, नैनीताल के लिए रेल किस वक्त आती है?

क्लर्क ने जवाब दिया—रेल काठगोदाम तक जाती है, नैनीताल नहीं। आप कहाँ तक जानेवाले हैं यहाँ से?

मुंशीजी—हम तो इस वक्त की रेल से नैनीताल जायँगे।

क्लर्क—रेल तो गयी, बरेली की रेल चली गयी।

मुंशीजी—अरे लाहौलवलाक़ूवत। बुरी हुई वल्लाह। हमसे किसी ने कहा ही नहीं कि नैनीताल की रेल चली गयी, वर्ना हम पहिले ही से आ जाते। भला इस रेल पर नवाब मुहम्मद अस्करी साहब भी थे?

क्लर्क—जी नहीं।

मुंशीजी अपना-सा मुँह लेकर स्टेशन से बैरंग रवाना हुए। असबाब घर भेजा और स्वयं नवाब साहब के मकान पर तशरीफ़ ले गये। जब गाड़ी कोठी में पहुँची तब नवाब साहब ने समझा कि मिस्टर फ्रेज़र आ गये। झट एक कमरे में घुस रहे और

मुसाहिबों से कह दिया कि कह देना कि अभी तक आँख नहीं खुली, आराम में है। इतने में महाराजबली ने कोठी में प्रवेश किया। मुसाहिबों ने आदाबअर्ज़ किया। इतने में नवाब साहब तशरीफ लाये। कहा—भई वल्लाह, मैंने समझा था कि मिस्टर फ्रेज़र भी तुम्हारे साथ आये हैं। मुझसे ऐसी वादा-खिलाफ़ी हुई कि अब मैं उनको मुँह नहीं दिखा सकता। मैं तो भई, असबाब और घोड़े स्टेशन भेज चुका था। घोड़े तो नैनीताल गये और सामान का ठेला वापस आ गया। इस वक्त हम यहाँ बैठे दनदना रहे हैं।

सफ़र मुल्तवी करने की वजह पूछने पर नवाब साहब ने सारा हाल कह सुनाया कि किस प्रकार उनकी साली ने उनको नैनीताल जाने से रोक लिया। नवाब साहब ने कहा—भई, उन्होंने लाखों कसमें दीं कि हरगिज-हरगिज न जाओ। अगर तुम जाओगे, तो मैं उमर भर तुमसे न बोलूँगी। मुझे बड़ा ही रंज होगा। भई, बिलकुल मजबूर कर दिया। बस, बन्दा घर में छिप रहा। फ्रेज़र साहब आये और बहुत ही क्रुद्ध हुए। अब आप अपना हाल बयान कीजिये।

मुंशी महाराजबली—पहिले तो मौका मुआइने को गये; वहाँ चखचख रही। वहाँ से घर आये। सामान बँधवाने, लदवाने और किराये की गाड़ी मँगवाने में देर लगी। घर की गाड़ी खुली पड़ी है। स्टेशन पर पहुँचे तो मालूम हुआ कि गाड़ी रवाना हो चुकी थी। ऐं, चलिये! अपना-सा मुँह लेकर रह गये। आपके बारे में पूछा तो मालूम हुआ कि नहीं गये। इसलिए असबाब घर वापस भेज कर यहाँ हाजिर हो गया हूँ।

अस्करी—भई, दोनों एक से ही मिले। अब तो जो हुआ सो हुआ। साहब बहादुर अपनी भुगत लेंगे।

[१७]

मूछों का कोंडा

नवाब उफ़तआरा बेगम के साहबज़ादे बुलन्द इकबाल के मूछों के कोंडों की तकरीब की धूमधाम यादगार ज़माना और ख़ुद एक अफ़साना है। उनकी महरी मुन्नी सात सुहागिनों को जाकर एक एक लौंग देकर कह आयी थी कि जुमेरात के दिन बेगम साहबा के यहाँ सहनक है। आप नूर के तड़के गजरदम तशरीफ़ लाइएगा। बेगम साहबा ने ताकीद कर दी है कि जरूर-ज़रूर आइएगा। इधर सुनार को हुक्म दिया गया कि चाँदी की सात तरकारियाँ तैयार करे। सोने की एक प्याली बनवायी गयी। सात नथें तैयार करायी गयीं, जिनमें सच्चे मोती और चुन्नियाँ थीं। करेब के सुर्ख़-सुर्ख़ सात दुपट्टे मँगवाये गये, जिनमें पट्टा लगा हुआ था। चूड़ियों के सात सच्चे जोड़े आये।

जुमेरात पीरों की करामत का दिन; इधर सुबह की सफेदी दिखायी दी, उधर ख़ासपुज ने आनकर अछूते पानी से जर्दा पकाया। लगन और देग को गोता देकर अलग रख दिया। हाथ की बटी हुई सेवइयाँ पकायी गयीं। बेगम साहबा की ज़बर्दस्त ताकीद थी कि ढेंकली की न हों। उस पर नियाज़ नहीं दी जाती। खासपुज ने देगें महलसरा में भेजीं। सात कोरे तबाक़ आये, इसी गरज से एक कमरे में फर्श बिछा था। उस फ़र्श पर नया दस्तरख्वान बिछाया गया। महरी ने तबाक़ और देगें रख दीं। सुहागिनों ने सहनक के तबाक़ निकालने शुरू किये। बेगम साहबा ने पेश खिदमतों को हुक्म दिया कि चाँदी की तरकारी को हौज में गोता देकर पाक करे। चूड़ीवाली ने सात सच्चे जोड़े

चूड़ियों के निकाले, मछली और गोखरू के बन्द थे और बाँक की करेली।

सातों तबाक़ पर चूड़ी के जोड़े रखे गये और चाँदी की एक रकाबी में आटा मँगवाया गया। उसमें चाँदी की चौक रखी गयी, घी डाला गया और नारे की चार बत्तियाँ डाली गयीं, सुहाग के इत्र की शीशी रखी गयी। बेगम साहबा ने सील का कूँड़ा मँगवाया। उसमें से सेंवइयाँ निकालीं। कूँड़े को मलाई से ढक दिया और उस पर कन्द छिड़की।

सन्दल की टिकियाँ सोने की प्याली में भीगी हुई थीं। उफ़्त-आरा बेगम ने संदूकचे से एक अशर्फ़ी निकाली और प्याले में डाली। और पाँच अशर्फ़ियाँ चौक में चिराग़ की रखीं। बेगम साहबा अलग खड़ी हो गयीं। सुहागिनों ने नथें पहिनी और सुर्ख़ करेब के दुपट्टे ओढ़े। सातों ने नियाज़ दी। इसके बाद सबने अपनी-अपनी सहनक से ज़र्दा खाया, पानी सहनक को जुठलाया। इसके बाद मौलवी साहब बुलाये गये कि सील के कूँड़े पर नियाज़ दें। मौलवी साहब ने नियाज दी और उसमें रखी हुई पाँच अशर्फ़ियाँ जेब में डालीं।

नियाज के बाद लड़के की सगी और चचाजाद बहिनों ने लड़के की मूछों पर सन्दल लगाने का क़स्द किया, मगर नेग के लिए तकरार हुई। बेगम साहबा ने मुग़लानियों को हुक्म दिया कि किश्तियाँ लगायें। इन किश्तियों में भारी-भारी जोड़े थे और सच्ची चूड़ियाँ व नथें। जब नेग की तकरार हुई, तो बेगम साहबा ने पचीस अशर्फ़ियाँ और बढ़ा दीं। कहा—बेटी, जल्दी लगा दो, जिसमें ऐसा न हो कि कोई छींक-छाँक दे।

बहिनों ने कटोरी में मुक्कैश की मूछें रखीं और अशर्फ़ी में सन्दल भरकर लड़के की मूछों पर लगा दिया। माँ ने सेहरा हटाकर बलाएँ लीं। फूफी और ख़ाला ने भी बलाएँ लीं, और

सबने रुपये निछावर उतारकर मेहतरानी, धोबिन और कुँजड़िन को दिये। महरी बाहर दौड़कर चोबदार को हुक्म दे आयी कि नौबत बजवाओ। फौरन ही मुबारकबादी बजने लगी। इधर चोबदारों और चपरासियों ने मुन्नी महरी से कहा कि हमारी तरफ से सरकार में मुबारकबादी अर्ज कर दो और कह दो कि हम लोग भी इसी दिन के मुन्तजिर थे। आज इनाम पायें। महरी ने आकर दस्तबस्ता अर्ज की—सरकार, अमले ने मुबारकबादी अर्ज की है और कहते हैं कि हम भी इसी दिन के मुन्तजिर थे। हुक्म हुआ कि अमले को पाँच अशर्फियां दिलवायी जायँ।

इधर महलसरा में डोमनियों का नाच शुरू हुआ, उधर महरी ने आकर अर्ज की—हुजूर, सात डोलियां हाज़िर हैं। सातों सुहागिनों ने नयनसुख के नये रूमालों में मेहनकी बाँधी और चूड़ी के जोड़े वगैरह सारे सामान लेकर बेगम साहबा से रुख़सत हुईं।

[१८]

छुरी दिल पर चल गयी

रस्म के वक्त, उफ आरा बेगम ने किसी जरूरत से नवाब मुहम्मद अस्करी को अन्दर बुलवाया तो नवाब साहब चूड़ीवाली को देखकर लोट गये। 'होश जाता रहा निगाह के साथ। सब्र रुख़सत हुआ इक आह के साथ।' बातें तो उफ्तआरा बेगम से करते हैं, मगर नजर उसी क़त्ताला की तरफ है। बेगम साहब भी उनकी चितवनों की बेक़रारी और वहशत की गुफ्तगू से समझ गयीं कि 'रुख मेरी तरफ, नजर कहीं और।' नवाब साहब ने पीने को पानी माँगा। चाँदी के कटोरे में ढककर पानी आया। इस कदर ठण्ढा कि दाँत बजने लगे। गिलौरी खाकर बाहर चले, मगर

कदम नहीं उठता। जी चाहता है कि इस चूड़ीवाली के सदेक़े हो जायँ, कुरबान हो जायँ, अपने को निसार कर दें। इसी अर्से में चूड़ीवाली ने यह देखकर, कि नवाब साहब रीझे हुए हैं, सौकड़ों ही करवटें बदली होंगी। कभी दुपट्टे के आँचल को हटा दिया, कभी गोरी-गोरी गर्दन दिखायी, कभी मुसकराने लगी, कभी शोखी के साथ हँस दी। उसकी हर अदा ने नवाब के दिल पर नश्तर का काम किया।

नाज को उनके हैं सब जिन्दा करनेवाले।
ढूँढ़ लेते हैं बहाना कोई मरनेवाले॥

बाहर आकर नवाब साहब ने आह सर्द भरकर अपने हम-जुल्फ़ नवाब रौनकजंग के कान में कहा, भाई साहब, आज तो बन्दा क़त्ल हो गया जिन्दा। वल्लाह वह सूरत देखी है कि परिस्तान की परी की क्या असल और हक़ीकत है। सुभान-अल्लाह, खुदा गवाह है। साँचे का ढला हुआ सरापा है। हाय क्या सूरत है!

रौनकजंग—वल्लाह, तुम बड़े नालायक़ आदमी हो। बहू-बेटियों को तकते हो।

अस्करी—भाई साहब, वह बहु बेटी नहीं है। मैं आपके यहाँ की चूड़ीवाली का ज़िक्र करता हूँ।

रौनकजंग—(हँसकर) तो यह कहिये कि आप उस छोकरी पर लट्टू हो गये। क़यामत की सूरत है, वल्लाह। उस पर बहुतों का दाँत है। हुजूर को भी उसकी निगाहे नाज़ ने घायल कर दिया, और शोख़ी का तो उस छोकरी पर खा़त्मा है।

अस्करी—मैं कोई पाँच मिनट से ज्यादा नहीं बैठा हूँगा, मगर इतनी ही देर में उसने हज़ारों ही करवटें बदलीं। भई, उसको तो हम अपनी चूड़ीवाली कहा करेंगे।

रौनकजंग—अच्छा साहब, मुबारक हो, हमने इस्तीफ़ा दिया।

अस्करी—आपकी भी नजर पड़ी थी। अहो हो! यह कहिये।

रौनकजंग—यानी आप मुझे कोई जानवर समझे हुए हैं। अच्छी शै पर सभी की नजर पड़ती है।

अस्करी—अब मैं इस फ़िक्र में हूँ कि वह हत्थे क्योंकर लगे।

रौनकजंग—भई, रुपया अजीब शै है, वल्लाह। रुपया ख़रचो, शाम को मौजूद है, और इन नीच कौमों का मिलना क्या दुश्वार है? ख़ासकर वे जो बाहर निकलती हैं।

इतने में चूड़ीवाली महलसरा से निकली तो पतली कमर को सैकड़ों बल देती हुई। ड्योढ़ी में ज़रा रुककर दुपट्टे को सीने के पास खूब कस लिया। एक तो कुदरती हुस्न, उस पर बनावट ने और भी हाशिया चढ़ाया। मुहम्मद अस्करी ने जो देखा तो और भी लोट हो गये और अपने एक दोस्त आग़ा मुहम्मद अतहर को साथ लेकर उसके पीछे-पीछे चलने लगे। आग़ा अतहर के पूछने पर आपने फर्माया—यार, यह चूड़ीवाली जा रही है। वल्लाह कत्ताला आलम है और मैं इस पर फ़रेफ़्ता हो गया हूँ।

आगा साहब—भला चूड़ीवाली के पीछे घूमना कौन शराफ़त की बात है? आप तो हैं पागल। बन्दा वापिस जाता है।

नवाब अस्करी—अच्छा, तुम ज़रा सूरत तो देख लो यार! ज़रा क़दम बढ़ाकर चलो।

आगा साहबा ने जो सूरत देखी तो क़रीब था कि ग़श आ जाय। अभी तो शराफ़त की डींग हाँक रहे थे, और अब दिल हाथ से ऐसा जाता रहा कि खड़े होकर उस शोख़ से सरे बाज़ार बातें

करने लगे; शराफ़त का ख़याल भी न आया।—बी चूड़ीवाली, ज़रा दो बातें तो कर लो :—

ओ जानेवाले मुड़कर ज़रा देख इस तरफ़।
मानिन्द साया हैं, हम भी तेरे क़दम के साथ॥

चूड़ीवाली—मुझसे कुछ फ़रमाया है?

आग़ा—भला हमारे भी हाथ की चूड़ियाँ हैं?

चूड़ीवाली—जी हाँ, मगर मेरे पास नहीं हैं। हुज़ूर, पुलिस के तिलंगों के पास मिलेंगी।

अस्करी—(मुसकराकर) भई, तुम्हारी सज़ा अच्छी तजवीज़ी। बहू-बेटियों को सरे बाजार छेड़ोगे, तो हाथों में हथकड़ी पड़ेगी ही। (चूड़ीवाली से) हमारी तो तुम पर जान जाती है; यह तो बताओ कि अब मिलोगी कहाँ? जान जाती है तुम पर। ख़ुदा गवाह है कि तुमने क़त्ल कर डाला।

चूड़ीवाली—एक तुम्हीं क्या, मुझ पर तो आधा शहर जान देता है। जान देने से क्या होता है? मगर हम जिला लेंगे। घबराइये नहीं। मेरे पास मुर्दों को भी ज़िन्दा कर देनेवाली दवा है। बस, अब आप जायँ और मुझे अपनी लौंडी समझें।

अस्करी—तो मिलोगी कहाँ, यह तो बताती जाओ?

चूड़ीवाली—घबराओ नहीं। मैं सब बन्दोबस्त कर लूँगी।

मुहम्मद अस्करी और आग़ा साहब वापस आये तो तीरे नज़र से घायल। लौटकर आये तो बातें होने लगीं।

अस्करी—यार, ख़ुदा गवाह है, तुम्हारी चूड़ीवाली की-सी सूरत और ऐसा हुस्न ख़ुदादाद वल्लाह आज तक नहीं देखा। हाय! क्या भँवें हैं, और क्या आँखें हैं! और नज़ाकत की तो वल्लाह क़सम खानी चाहिए। बस, इससे ज़्यादा नज़ाकत ख़ुदा का नाम है। फूलों की पंखड़ी की क्या हक़ीक़त है? वाह वा!

रौनकजंग—मगर यह तो बतलाइये कि उस पर आगा साहब का दिल आया है या आपका, या दोनों लट्टू हो गये हैं ?

आगा—इसमें कोई शक नहीं कि मेरा भी दिल मेरे क़ाबू में नहीं है। मगर चूँकि हमारे भाई का दिल आया है, इसलिए अब हमें समझ-बूझकर काम करना चाहिए। हम सिर्फ़ दो-एक बार उसके मकान की तरफ़ चक्कर लगाया करेंगे।

अस्करी—(मुसकराकर) भई, नमकहरामी का सनद नहीं। अब तुम इसे हमारा माल समझो।

आगा—आपका माल समझें, अच्छा। और तुम दोस्त हो—तो तुम्हारा माल दोस्तों का माल है।

अस्करी—बँडियाबेग की गढ़ैया में जाकर मुँह धो आओ। दो-ही चार दिनों में यह मेरी महलसरा में होगी। आप और रौनकजंग ये दोनों आदमी महीने में दो-एक बार देखने पायेंगे, सो वह भी मेरे हमराह, बस।

[१९]

पायमे-वस्ल

गिलहरी जल्दी ही रंग लायी थी; क्योंकि आग थी दोनों ओर लगी हुई। इधर इश्क़ की, उधर नक़दी की। चूड़ीवाली ने वादा पूरा किया और शाम को नवाब मुहम्मद अस्करी के पास पैग़ाम भेजा। जब कोई आध घड़ी दिन बाक़ी रहा और शाम का वक्त हो गया तो आदमी के साथ चूड़ीवाली के घर तशरीफ़ ले गये। वहाँ दाख़िल हुए तो क्या देखते हैं कि एक कमरे में दरी बिछी हुई है, उस पर ग़लीचा है और एक बूढ़ी बैठी गिलौरियाँ बना रही है। बुढ़िया ने नवाब साहब को ग़लीचे पर बिठाया और कहा—तुम्हारा मिज़ाज अच्छा है, बेटा ? यह हमारी ख़ुश-

नसीबी है कि तुम-जैसे शाहज़ादे हमारे झोंपड़े में आयें। ऐ माम
ज़री इनको भेज दो। कहो, देखो कौन साहब तुम्हारी मुलाक़
के लिए आये हैं। तुम अच्छी तरह बैठो, बेटा ! हम मखमल
संजाफ़ किसके यहाँ से लावें, ग़रीबामऊ अपनी बसर
लेते हैं।

अस्करी—आपके पास अल्लाह के फज़्ल से वह दौलत
कि जवाहरात और रुपये-पैसे की क्या हक़ीक़त है
सामने।

बुढ़िया—तुम जौहरी हो। अल्लाह तुम्हारी हजारी उमर करे
तुम लोगों से हम ग़रीबों की कद्र है। 'कद्रे गौहर शाह दानद य
बिदानद जौहरी।' तुम शहज़ादे हो, खरे-खोटे को खूब परख
सकते हो।

चूड़ीवाली इठलाती हुई, चमकती हुई बाँकेपन के
आयी तो इस क़द्र बनी-ठनी थी जैसे चौथी की दुलहन य
चौदहवीं का चाँद। एक हुस्न हुस्न, सौ हुस्न कपड़ा, हज़ार
गहना, लाख हुस्न नखरा। नाचती, बल खाती आयी तो; मगर
आकर पट के पास खड़ी हो गयी।

बुढ़िया—आओ बेटा, देखो शहज़ादे अमीरज़ादे हैं हमारे
मुल्क के। शर्माओ नहीं बेटा।

चूड़ीवाली—अम्मी, हमें तो शर्म आती है।

बुढ़िया—बुला तो खुद आयीं, अब शर्माती हो ? ऐसी
हया थी तो बुलाया ही क्यों ?

इतने में चूड़ीवाली की बड़ी बहिन ने कहा—अम्मीजान,
हम भी आयें ?

बुढ़िया—यह हमारी बड़ी पोती है। नाज़ो, तुम भी आओ
और इनको भी ले आओ।

नाज़ो ने छोटी बहिन का हाथ पकड़ा और कमरे में दाखिल

हुई। बस, मालूम हुआ कि चाँद-सूरज दोनों एक ही मर्तबा नमूदार हो गये।

अस्करी—हमारे पास आकर बैठो, साहब !

नाज़ो—जाओ, जाओ। इनको तो इतनी दूर से बुलवाया, अब इतनी भी खातिर न करोगी ? जाओ।

चूड़ीवाली—वाह वा, तुम्हीं न जाओ।

बुढ़िया—हाय बेटा ! यह बड़े ऐब की बात है। तुम रईसों व रईसज़ादों की सोहबत के काबिल नहीं हो।

इस नाराज़गी पर चूड़ीवाली की आँखों में बेसाख्ता आँसू डबडबा आये, और वह रोने लगी।

बुढ़िया—ऐं, यह रोने लगी ! कैसी पलकमुतनी है !

नाज़ो—पलकमुतनी नहीं, यह बड़ी घौताल होती जाती है।

मामा—सबेरे क्या कम हुड़दंगा किया ? मैं तो खाना पकाती थी और यह चूल्हे से लकड़ी निकालती थी।

चूड़ीवाली—तुम हमारे बीच में न बोला करो, मामा ! अम्मीजान अब तलक हमें आधी बात भी नहीं कहती थीं। जब से यह घर में दाखिल हुई है, रोज लड़वाती है।

बुढ़िया—अच्छा, अब इस वक्त यह झगड़ा-बखेड़ा तह करके रखो।

अब दिल्लगी देखिये कि चूड़ीवाली रूठकर दूसरे कमरे में चली गयी तो नवाब साहब के कलेजे पर साँप लोटने लगा। गजब हो गया, सितम हो गया, जान निकल गयी। नाजो को उसे मनाकर लाने को भेजा। बड़े नाज से नाजो उठीं और दूसरे कमरे में जाकर दोनों बहनें खूब हँसीं। नवाब साहब को सुनाने के लिए नाज़ो ने कसमें भी देनी शुरू कीं। थोड़ी देर में आकर कहा—नवाब साहब, वह तो बड़ी जिद्दी है। अब आप ही

तकलीफ करके मनायें तो शायद मान जाय। हमें तो वह मूँग के बराबर भी नहीं समझती।

नवाब साहब तो यह चाहते ही थे। मुँहमाँगी मुराद पायी। उठकर कमरे में गये। चूड़ीवाली खुर्राट बुढ़िया की सिखायी-पढ़ायी थी। पलँग से उठकर एक तरारा भरा तो वह पहुँची।

चूड़ीवाली—देखो नवाब, हाथापाई की सनद नहीं। धींगा-मुश्ती मालजादियों से करो।

अस्करी—क्या मजाल। मगर जरा यहाँ तक आओ। तुम पर जान जाती है। कत्ल हो गया, हाय!

चूड़ीवाली—ऐसे मर्दों में कोई और आती होंगी।

अस्करी—अच्छा, पास तो आओ। इनाम देंगे, कसम है।

चूड़ीवाली—आपके इनाम के जो भूखे हों, उन्हें इनाम दीजिए। मैं इनाम लेकर क्या करूँगी?

अस्करी—जो कहोगी वह इनाम दूँगा। हार गये कौल।

नाज़ो—(बाहर से) कुछ तो कह दो बहिन, फिर ऐसा वक्त हाथ न आयेगा।

चूड़ीवाली—अच्छा, हमें सोने के छड़े बनवा दो।

अस्करी—परसों तक जरूर-जरूर आ जायँगे। इसमें फर्क न पड़ेगा। तुम्हारे सिर की कसम।

चूड़ीवाली—अब ऐसा न हो कि तुम झाँसा देकर चल दो। चकमेबाजी हमसे न करना।

अस्करी—खूब याद रखो, मैं वह शख्स हूँ जो कौल के सामने जान अज़ीज़ नहीं करता। अगर तुम मेरी होकर रहोगी, तो वल्लाह सारी खुदाई की न्यामतें तुम्हारे लिए हाजिर हैं।

चूड़ीवाली—ऐं, पौंचा देते ही हाथ पकड़ लिया। आपने तो खूब पेट से पाँव निकाले। बनिया तोलता नहीं। आप कहते हैं पूरा

तोल। मेरा तो निकाह हो चुका है। हाँ, इतना हो सकता है कि तुम कभी-कभी आकर हमें देख जाया करो और मुँहनुमाई दे जाया करो। बस, इतना क्या थोड़ा है?

नवाब साहब तो यह चाहते ही थे कि किसी तरह आमदरफ्त का दरवाजा खुले, और इसको तथा इसकी माँ को कुछ चटा दूँ तो फिर पौ बारह है। इतने में नाज़ो आयी और बोली—हुज़ूर, इनको ससुराल जाने को देर होती है। अगर इनकी ससुराल से कोई आ गया तो बड़ा फजीता होगा। अब इनको जाने दीजिए। नवाब साहब ने भी सोचा कि पहिला दिन है। आज इसी तरह गुफ्तगू काफ़ी है। खुदा हाफ़िज कहकर खड़े हो गये।

दोस्तों, नवाब साहब ने नैनीताल का सफर इसलिए मुल्तवी कर दिया था कि साली के लड़के की मूँछों का कोंडा है और उसमें शरीक होना जरूरी है। मगर वहाँ की महफिल छोड़कर चूड़ीवाली के यहाँ दनदना रहे हैं।

[२०]

शैतान की खाला

आपको याद होगा कि चूड़ीवाली तिनककर दूसरे कमरे में चली गयी थी, और अब नाज़ो समझाने-बुझाने के लिए भेजी गयी तो दोनों बहनें हँसने लगीं। ये दोनों पहिले ही से सिखायी-पढ़ायी थीं। नवाब साहब के चले जाने के बाद बुढ़िया ने इनको और भी शान पर चढ़ाना शुरू किया—बेटा, नवाब साहब को तुम सोने की चिड़िया समझो, और जहाँ तक मुमकिन हो सके, इनसे रुपया ऐंठो। यह मर्दुआ इन पर लट्टू हो रहा है, तुम तो ताड़ गयी हो नाओ। मगर देखो बेटा, तुम इनसे अलग ही अलग रहा करो। जब वह आकर बैठ जायँ तो थोड़ी देर के बाद आओ, घड़ी-दो-घड़ी बैठो और चल दो। फिर एक झलकी

दिखाकर चम्पत हो जाओ। जमकर कभी न बैठो। कोई बात ऐसी न कहना जिससे इनको यकीन हो जाय कि निकाह ज़रूर होगा। और न कोई ऐसा ही लफ़्ज़ कहो जिससे मायूस हो जायँ। कभी इन्कार, कभी इकरार। मगर चोंगों से न चूको। मेवा-मिठाइयों की फरमायश कर बैठो, सर्दी के कपड़े की फरमायश कर दो। बस, इसी का नाम चोंगा है। जहाँ तक हो सके, कोशिश करो कि इनको लूट लो। वह तो तुम पर इस कदर लट्टू हो गया है कि जो कहोगी वही करेगा। सोने के छड़ों का चोंगा किया तुमने, उसने मञ्जूर कर लिया और वह भेजेगा भी। दिल का आना क़यामत का आना है।

यह गुफ्तगू हो ही रही थी कि एक आदमी ने दरवाज़े पर आवाज़ दी। पूछने पर उसने आहिस्ते से कहा—नवाब साहब ने भेजा है और कुछ कहलाया है। बुढ़िया ने उसे फ़ौरन् अन्दर बुला लिया। उसने कहा—नवाब साहब ने मुझे भेजा है और पूछा है कि छड़े लीजियेगा या छड़ों की कीमत?

बुढ़िया इतना सुनते ही फूलकर कुप्पा हो गयी, बाछें खिली जाती थीं। उस आदमी की बड़ी ख़ातिरदारी की। गिलौरी बनाकर खिलायी। नाजो हैं कि इलायची लिये हुए चली आती हैं। चूड़ीवाली की आँखों में तितलियाँ नाचने लगीं।

बुढ़िया—अच्छी तरह बैठो, मियाँ। नवाब साहब से हमारा बहुत-बहुत सलाम कह देना। वह उनकी मेहरबानी है।

खिदमतगार—नवाब साहब के मिजाज में एक बात है। वह यह कि है और इनको आप याद रखिये कि वह जो कहते हैं, उसे करते हैं। उन्होंने छड़े बनवाने को कहा था। अगर छड़े बनवाइये तो मैं चौक जाऊँ और क़ीमत लेनी हो तो मैं हाजिर हूँ। यह पाँच सौ रुपये हैं। इसका फैसला उन्होंने आप ही पर छोड़ दिया है।

बुढ़िया—अच्छा, हम खुद ही बनवा लेंगे। रुपये ही दे दो।

खिदमतगार—लीजिये, हाजिर हैं। पाँच सौ गिन लीजिए।

बुढ़िया—आज नवाब साहब को ले न आओ। कहो कि चुपके से चले आयें। आज ये दोनों यहीं रहेंगी। मगर अकेले ही आयें, भीड़ साथ में न लायें। ऐसा न हो कि वह न आवें।

खिदमतगार—आयेंगे और बीच खेत आयेंगे। न आने के क्या मतलब ?

बुढ़िया—तुम अपना पैग़ाम कह दो, बेटा !

चूड़ीवाली—यह सर्दी की फ़सल खत्म हो रही है और नवाब साहब ने हमारे लिए अङ्गूर भी न भेजे।

खिदमतगार—(मुसकराकर) आज ही लो, अभी-अभी। वह तो इस घर पर सोना बरसा देंगे।

बुढ़िया—हाँ-हाँ मियाँ, क्यों नहीं, रईस हैं कि ठट्ठा ?

खिदमतगार—अच्छा, अब मैं चलूँ। नवाब साहब मुन्तजिर होंगे।

बुढ़िया ने पचीस रुपये देकर कहा—यह अपना इनाम लेते जाओ।

खिदमतगार ने रुपये लेकर वन्दगी की और कहा—हम तो तुम्हारी बढ़ती के ख्वाहाँ हैं। अगर तुमको ज्यादा मिलेगा तो हमको भी मिलेगा।

बुढ़िया—तुम तो माशाअल्लाह खुद समझदार हो। तुम्हें सिखलाना जैसे लुकमान को सिखलाना।

इधर नवाब साहब राह में आँखें बिछाये इन्तजार में थे। हर घड़ी खिदमतगारों से दरियाफ्त करते थे कि हुसेनअली आया या नहीं ? वह बड़े बेकरार थे। जब लोगों ने इत्तला दी कि हुसेन-अली आता है, फाटक के पास आ गया तब उन्होंने हुक्म दिया

कि दौड़कर आये। हुसेनअली कोठरी में अपने रुपये रखने गया तो कोई छः खिद्मतगारों, चपरासियों और चौकीदारों को हुक्म दिया कि अभी लाओ।

अस्करी—कहो साहब, काम बनाकर आये या खुदा-न ख्वास्ता बिगाड़कर ?

हुसेनअली—रुपये जो मैंने दिये तो बड़ी खुश हुईं। सैकड़ों दुआएँ कीं। सब-की-सब खुश हो गयीं और दुआएँ देने लगीं।

अस्करी—लाहौलवलाकूवत, असल मतलब की बात कहो। सैकड़ों ही दफा कह चुके कि दुआएँ दीं।

हुसेनअली—हुजूर, कुमरिन ने मुझसे पूछा कि नवाब साहब आज आयेंगे ? न आयेंगे तो हम खफा हो जायँगे। जरूर आयें, नहीं तो हम बहुत खफा होंगे।

अस्करी—लाहौलवला कूवत। सुन चुके, सुन चुके। एक-एक बात को हजार बार कहते हो।

हुसेनअली—मैं वादा कर आया हूँ हुजूर कि आज उनको लाऊँगा। जरूर चलिएगा।

अस्करी—हजार काम छोड़कर, हजार काम छोड़कर चलूँगा।

हुसेनअली—हुजूर की रियासत की सभी बड़ी तारीफ करते थे। और कुमरिन ने कहा है कि सर्दी की फ़सल खतम हो रही है, हमको विलायती अनार और अङ्गूर भी भेज दें।

अस्करी—अभी भेजो। दारोगा साहब, पाँच रुपये के अनार और चार पिटारियाँ अंगूर तथा सेर-सेर भर किशमिश, पिस्ते, अखरोट और बीस अदद बड़े-बड़े सेब मँगवाओ—इसी दम।

दारोगा—बहुत अच्छा। अभी लें हुजूर, इसी दम।

अस्करी—तो कुमरिन नाम है—यह कहिये। यह नाम तो

बड़ा प्यारा है और नाज़ो तो नये तरह का नाम सुनने में आया।

हुसेनअली—वह भी थीं, हुजूर। अरज नहीं कर सकता। वह भी अच्छी है। (डरते हुए)। हुजूर, कुमरिन का तो फिर कहना ही क्या है!

अस्करी—बेमिस्ल है। ऐसी खूबसूरत औरत पैदा ही नहीं हुई।

नवाब/साहब को ऐसी खुशी हुई कि गोया उन्हें कारूँ का खजाना ही मिल गया। दिन काटे खाता था। दुआ माँगते थे कि कब शाम हो।

[२१]

इश्क टेंटें

मुंशी महाराजबली ने जो नाज़ो और कुमरिन के हुस्न के चर्चे सुने, तो इनका भी मन ललचा उठा। यह महाकञ्जूस व मक्खीचूस थे। मगर नाजो पर डोरे डालने शुरू किये। एक महरी के जरिये बुढ़िया के पास पैगाम भेजा और नाजो को फुसलाने के पूरे बन्दोबस्त कर लिये। महरी बुढ़िया के घर गयी और कहा—हम मुंशी के घर में नौकर हैं, तौन चलके चूरियाँ पहिराय देव। बहिनी, चली चलो, बरा जरूरत का काम है, जो कहिहौ सो देइहैं।

बुढ़िया के मिजाज तो सातवें आसमान पर थे। ओछे के घर तीतर आया था। औकात भूल बैठी। कहा—लेने-देने की बात नहीं है, मगर इतनी दूर जाया किससे जायगा?

महरी ने कहा—दूर नहीं नगीच है, और नहीं कहो तो मैं जाकर किराये की गाड़ी कर लाऊँ।

बुढ़िया की इजाजत पाकर नाजो चली। महरी के साथ नाजो चली तो रास्ते में महरी ने मठारना शुरू किया। वह वह सब्ज बाग दिखाये कि नाजो भी झाँसे में आ गयी। महरी बोली—जहाँ तुम मेरे साथ चलती हो, वह दिल की बैड़ी चालाक हैं। उनका घरवाला बड़ा देनेवाला आदमी है और मुफत देता है। अब तुमको देखेंगे। अगर सूरत अच्छी लगी और तुम्हारी कोई बात उनके दिल में खुब गयी तो बस, जेब से दो-चार रुपये निकाले और तुमका दे दीने। अब चल के देख ही लीजो।

नाजो दिल में दुआ माँगने लगी कि अल्लाह करे नवाब साहब-जैसे हों तो फिर लुत्फ है। उधर कुमरिन उनको (नवाब साहब को) लूटे और इधर मैं इन (मुंशी जी) पर कम्बल डालूँ।

मुंशी महाराजबली ने इसीलिए एक मकान किराये पर ले लिया था। वहाँ मुहल्ले की एक अधेड़ औरत बिठा दी थी। जब नाजो उस औरत को चूड़ियाँ पहनाकर, दाम लेकर चली तो मुंशीजी ने उसे बाहर के कमरे में बुलाया।

मुंशी—बी नाजो साहबा, जरा इधर तो आइये। मेरा नाम मुंशी महाराजबली है। नाजो, मैं सच कहता हूँ, बदवज़ा आदमी नहीं हूँ; मगर हुस्न-परस्त हूँ। अच्छी सूरत देखी और लट्टू हो गया। तुम भी अल्लाह के फ़ज़ल से ख़ूबसूरत हो। तुम पर हमारा दिल आ गया है।

नाजो दिल में खुश हो गयी कि मारा कम्पा, मगर जाहिरदारी के लिए कहने लगी—हुजूर, मुझ बुढ़िया पर किसी का दिल काहे को आने लगा? जवान होती तो सैकड़ों खरीदार होते।

महाराजबली रेशा ख़त्मी हो गये—खाने में तुम्हें कौन-सी शै पसन्द है?

नाजो—शीरमाल और कबाब बहुत पसन्द हैं।

मुंशीजी—बहुत अच्छा, आज ही अलीबखश से पकवाकर भेजूँगा।

नाजो—और एक थान गुलबदन का भेज देना।

मुंशीजी—जान हाजिर है,एक थान पर क्या फर्ज है। एक बोसा दे दो तो जिला लो। तुमने मुझे कत्ल कर डाला।

नाजो—होश की दवा कर मर्दुए। बोसा लेना क्या दिल्लगी है ? मजे में आ गये।

मुंशीजी—अच्छा, एक बोसे का जो कहो देते हैं नक़द।

नाजो— नगद नहीं तो क्या उधार ? 'नौ नगद न तेरह उधार', क्या यह मसल सुनी नहीं है ?

मुंशी—जी अच्छा ,एक रुपया बोसा देते हैं। कहो, मंजूर है ?

नाजो—गेहूँ पिसाओ उस रुपये के २० सेर। बोसा तो न लेने दूँगी। हाँ, अगर बीस रुपए बायें हाथ से गिनकर रख दो तो इसी बात पर राजी हो जाऊँगी कि दूर से हाथ से गाल छू लो और अपने हाथ को चूम लो।

इतना इशारा पाना था कि मुंशी महराजबली ने बढ़कर गाल सहलाया और अपनी उँगलियों को चूम लिया।

मुंशीजी—इस बोसे का मजा कोई हमारी जबान से पूछे। बोसा दो हमें बगैर माँगे, इतनी हिम्मत तुम्हें खुदा दे।

नाजो—और वह बीस रुपये तो लाइये; फिर बातें बनाइये।

मुंशीजी—ऐ है ! तकाजा करती हो। रुपया हाथ का मैल है। मुहब्बत अजब शै है।

मुंशी महाराजबली बड़े फिक़रेबाज आदमी थे। वादा कर लेने के हातिम, मगर उसे पूरा करना सीखा ही न था।

नाजो—ऐ, अब हमें देर होती है, मुंशी साहब !

मुंशीजी—अच्छा, आज शाम को हम आयेंगे तब देंगे।

नाजो—अलसेठ कर ली तुमने। बिसमिल्ला ही गलत हुई।

मुंशीजी—अच्छा, तुम अपने दस रुपये ही लोगी या किसी की जान ?

नाजो—ऐं, दस रुपये ? यह दस कैसे ? बड़े ही उठाईगीर हो तुम। कह के मुकरना क्या ? बीस रुपये कहे थे कि दस ?

मुंशी महाराजबली ने बड़ी हुज्जत के बाद बीस रुपये का एक नोट दिया और कहा—इस नोट पर क्या फर्ज है; जान तक हाजिर है।

नाजो खुश हो गयी और तीर की तरह वह पहुँची और कस्में दे गयी कि आज शाम को अवश्य आना।

[२२]

खरमस्तियाँ

नवाब साहब का दरबार गर्म है। हवाली-मवाली सभी जमा हैं। खुशगप्पियाँ हो रही हैं। इतने में मसखरा, जो किसी काम से घर चला गया था, दौड़ता व हाँफता हुआ आया और कहने लगा—हुजूर, कुछ सुना ? सभी कान लगाकर सुनने लगे खुदावन्द, एक आदमी ने मुझसे कहा कि लोहे का पुल बह गया। मैं जो दौड़ता हुआ गया, तो क्या देखता हूँ कि दरिया-का-दरिया भागा चला जाता है।

इस पर मुंशी महाराजबली ने हैरत से कहा—दरिया भागा जाता है—इसके क्या मानी ?

मसखरा—हुजूर इसके मानी क्या ? दरिया भाग गया, किसी बात पर खफा हो गया, बस भाग खड़ा हुआ। दरिया ही तो है।

मुंशीजी गोल आदमी थे, मजाक को न समझे। भई, हमारी समझ में नहीं आया कि लोहे का पुल बह गया तो बह गया। मगर यह दरिया का दौड़ना और भाग जाना क्या मानी ?

नवाब—मुंशी महाराजबली को अक्ल से दुश्मनी है।

मम्मन—हुजूर,सुना है कि मियाँ अल्मास पर ज़िना बिल जब्र (बलात्कार) का मुकद्मा दायर हुआ है। मालूम नहीं, इसकी असलियत क्या है ?

नवाब—मियाँ अल्मास कौन हैं ? वह ख्वाजासरा (नपुंसक) या कोई और ?

मम्मन—जी हाँ हुजूर, सुना है, लन्दन से बारिस्टर बुलाये गये हैं। बड़ा रुपयेवाला आदमी है।

मुंशीजी—मियाँ अल्मास ख्वाजासरा पर और ज़िना का मुकद्मा ? गलत है, हो नहीं सकता। किसी ने गप उड़ा दी होगी।

अख्तर—अजब नहीं, दूर-दूर से लोग गवाही के लिये बुलवाये जायँ। और सुना है कि इसमें हजरत शेखशादी की भी गवाही होगी।

मम्मन—वह तो कल मर गये। बैठे-बैठे बातें करते-करते दम टूट गया।

मुंशीजी—ऐं ! कौन मर गये? शेखसादी ? कौन शेखसादी ?

मम्मन—वही गुलिस्तां वाले शेखसादी और कौन ? कैसी उठतीजवानी थी ! अफसोस।

अख्तर—कल मर गये। कल क्योंकर मर सकते थे, भला ?

मुंशीजी—क्या कोई हुक्म जारी हो गया है कि कल कोई न मरने पाये ? हमने तो सुना ही नहीं।

मसखरा—हुजूर, कल बुध था। फिर बुध और जुमेरात के दिन भी कोई मरा है आज तक ? और अब सरकार के हुकम से ढिंढोरा पिट गया है कि खबरदार। जुमेरात और बुध के दिन कोई न मरे ! अगर मालूम हो कि कोई मरनेवाला है तो फ़ौरन पुलिस का पहरा बिठा दिया जाय।

मुंशीजी—भई, हमारी समझ में आज की गुफ्तगू नहीं

आयी। शेखसादी ने कल इन्तकाल किया—इसके क्या मानी? और यह ढिंढोरा पीटा गया कि कोई मरने न पाये। और जो किसी का दम निकल जाय?

मसखरा—तो क्या? फ़ौरन् फाँसी होगी। मर क्योंकर सकता है कोई? गवर्मेंट के हुक्म के खिलाफ कोई कुछ कर सकता है भला?

मुन्शीजी—तो मौत से भी गवर्नमेंट लड़ सकती है?

नवाब—सच कहना, इतना बड़ा गौरवा भी कहीं देखा है?

मम्मन—फ़रमायशी पागल है। लाखों में एक। जिस वक्त अक्ल बँट रही थी, यह ग़ैर-हाजिर थे।

अख्तर—मञ्झिलों इनका पता नहीं था। बिलकुल गोल आदमी।

ये गप्पें लड़ ही रही थीं कि नवाब साहब उठ गये और जलसा बर्खास्त हो गया।

[२३]

जूते पड़े

रात को जब नवाब साहब कुमरिन के घर गये तो बुढ़िया ने अपनी अमीरी की धाक जमाने के लिए वह नोट निकालकर नवाब साहब को दिया, जो महाराजबली ने बी नाजो को दिया था। नवाब साहब ने नोट देखकर कहा—पाँच रुपये का है।

बुढ़िया—ऐं, पाँच रुपये का है? हमसे तो उन्होंने बीस रुपये कहे थे। जरा गौर करके पढ़ो।

नवाब—यह पाँच का ही है और तुर्रा यह है कि आधा नोट १२७९६ नम्बर का है और आधे का १२७९८ नम्बर है।

दो टुकड़े अलग-अलग नोटों के हैं। यह नोट चल नहीं सकता, यह किसी ने धोखा देने की कोशिश की है।

बुढ़िया ने नाज़ो से कहा—बहुत बड़ा बेईमान है वह हिन्दू। उजड़ा नोट दिया है कि हमें जालसाजी में फँसाने की तदबीर सोची है। बीस का कहा और पाँच का दिया, और वह भी जाली। वह निगोड़ा तो बात करने के काबिल नहीं है। सूरत न देखे ऐसे मूँड़ीकाटे की। मुआ बेईमान है जमाने भर का।

इतने में महरी आयी और मुंशी महाराजबली के आने की खबर दी। नाज़ो ने चुपके से बुढ़िया से कहा। बुढ़िया बोली—नीचे जाकर नोट उसके मुँह पर पटक दे और कह दे कि दूर हो यहाँ से।

नाज़ो जली-भुनी तो थी ही। नीचे जाकर नोट देकर कहा—क्या आँखों के अन्धे हो? यह बीस का नोट है या पाँच का? और वह भी उजड़ा व जाली। लीजिए, बस ठण्ढी-ठण्ढी हवा खाइये।

मुंशी महाराजबली पक्के झूठे आदमी थे। कंजूस इस कदर कि जिस दिन घर में किसी को बदहज़मी हो जाती, तो खुश होते कि आज एक आदमी का खाना बच गया। लेकिन अगर गुलाब या सिकंजबीन मँगानी पड़ती तो बस ग़जब का सामना। नाज़ो को जान-बूझकर ही मुख्तलिफ़ नम्बरों के नोट दे दिये जिसमें वापस मिल जायँ। अगर बुढ़िया नवाब साहब को नोट न दिखाती तो मुंशीजी का चकमा चल ही गया था।

नोट लेकर मुंशीजी ने कहा—उफ्फ़ोह। बड़ी भूल हो गयी, मगर तुमने देख क्यों न लिया?

नाज़ो झल्लायी हुई तो थी ही, इस बात पर उसे और भी क्रोध आ गया। झल्लाकर उसने एक ऐसी टीप रसीद की कि मुंशी महाराजबली की खोपड़ी ही जानती होगी। टीप

लगाकर उसने कहा—मूँड़ीकाटे, तेरा मुँह झुलस दूँ। मैं क्या पढ़ी-लिखी हूँ ? मैं क्या जानूँ कि नोट किस खेत की मूली है ? दूर हो मुए यहाँ से ! जा मुए, बेईमान !

महाराजबली के तो होश ही गायब हो गये। आये थे मठारने, किन्तु उसके बदले चपत की चपत खायी और ज़लील के ज़लील हुए। उनका जो आदमी साथ था, उसने जो मुंशीजी पर टीप पड़ते देखी तो मुँह फेरकर मुसकराया, और महरी कोने में खड़ी होकर हँसने लगी। ऊपर से नवाब साहब भी झाँक रहे थे। नाज़ो ने जो चपत जमायी तो हँसकर कहा—एक और।

मुंशी महाराजबली ने बदहवासी में आवाज़ तो पहचानी नहीं, मगर 'एक और' जरूर सुन लिया। अब टीप खाकर यह शशदर खड़े हैं, हिलते तक नहीं। नाजो ने डाँटकर कहा—अब खड़ा क्या सोच रहा है ? अब जूता खाने का उम्मीदवार है क्या ? तमाशबीन आशनाई में क्या आशना को कुछ दे देते हैं ? यह तमाशबीनी करने चला है। अल्लाह जानता है कि मेरे सामने से दूर हो, नहीं तो मैं जूतों से पीटूँगी। अरी मामा, जरी दसपनाह (दस्तपनाह—चिमटा) तो गरम करके लाना।

यह दस्तपनाह का गरम-गरम फिकरा जो सुना तो मुंशी जी के होश गड़ गये, और नोक दुम भागे। रास्ते में खिदमतगार से बोले—मालूम होता है, इस वक्त पिये हुए है।

खिदमतगार—हाँ, मालूम तो होत रहा, हजूर।

मुंशीजी—मगर जैसे ही उसने चाहा, कि हाथ बढ़ाकर टोपी उतारे, वैसे ही, सच कहना कि हमने कैसी किल्ली की है ?

खिदमतगार—हाँ हजूर, मुदा आवाज खूब चटक देती भई।

मुंशीजी—उनका हाथ दरवाजे पर पड़ा इससे आवाज आयी।

खिद्मतगार—दरवाजे पर नाहीं वह पर पड़ा। बहुत तमतबा न बताओ, हम तो देखत रहे। खोपरिया पर मारेसि दुहत्तड़।

मुंशीजी—(झेंपकर) अच्छा बस, बहुत बक नहीं नामाकूल।

खिद्मतगार—अरे, हमका का ? ओई तुमका पनही से मारे हमका का करे का है ?

मुंशीजी—अच्छा बस, अब गुफ्तगू खत्म करो।

अब सुनिये—मुंशीजी तो चपत खाकर एक दोस्त के यहाँ चले गये और खिद्मतगार तथा महरी को रुखसत किया। खिद्मतगार बड़ा बजड्ड व झल्ला बुड्ढा था और परले सिरे का दुश्मन-अक्ल। घर जाकर उसने एक बारिन से, जो अन्दर आती-जाती थी, सारा कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। आज मुंशी मनिहारिन की बखरी गये रहिन तौन वह ससुरी आव देखेसि न ताव, जाते ही खबर लिहिस और एक टीप खोपरिया पर अस चटाका भना कि का कही तुमसे ? हमका तौन हँसी छुटि आयी मुदा चुपाई मार रहिन।

बारिन ने चुपचाप सब हाल सुना और घर में जाकर मुंशीजी की बीबी से बयान कर दिया। स्त्री से और मुंशीजी से नहीं बनती थी। उसने पूछताछ की तो सारा हाल खुल गया। थोड़ी देर बाद मुंशी महाराजबली घर पहुँचे तो अब दरवाजा ही नहीं खुलता।

मुंशीजी—खोलो दरवाजा, खोलो। (धमधमाकर) अरे, दरवाजा खोल दो। कोई है ? (कुण्डी बजाकर) अरे रामदिनवा, ओ महरी, गुबरे की मेहरारू। यह क्या माजरा है, भई ? सब

के सब मर गये एक सिरे से ? सबको साँप सूँघ गया । (दरवाजे को पीटकर) तोड़ डालूँगा । अरे खोलो !

इतना सब करने पर भी दरवाजा न खुलना था और न खुला ही । मुंशीजी इस क़दर झल्लाये कि सड़क पर से चुन-चुनकर ढेले फेंकने शुरू किये । दो-चार ढेले इधर-उधर के मकानों में पहुँचे । इस पर मकानवालों ने डपटना शुरू किया । आखिरकार दरवाजा खुला और मुंशीजी घर के अन्दर तशरीफ ले गये, तो देखते हैं कि बीवी मुँह फुलाये हुए है, बारिन बात नहीं करती, महरी अलग चुप साधे है । सभी नाराज़ और खफ़ा हैं । इनकी समझ में ही न आया कि क्या माजरा है । कारण पूछने पर बारिन ने कहा—हमका नाहीं मालुम । मनिहारिन का बुलवाय-बुलवाय फजीता उड़ावत हो ।

यह सुनते ही मुंशीजी को काटो तो बदन में लहू नहीं । चेहरे का रंग फक हो गया, हाथ-पाँव काँपने लगे । मारे शर्म के उन्होंने गर्दन नीची कर ली । गुस्से को जब्त करके उन्होंने कहा— मनिहारिन कैसी ?

बीबी—वह मनिहारिन जौन खोपड़ी सहलाइस रही । अब समझो कि कौन मनिहारिन कि अबहूँ नाही समझेव ? तुमका सरम नाहीं आवत है कि लड़का-लड़की, पोता-पोती, नाती-नवासी मौजूद और हरकत अस करत हो । ऐसा ही करना है तो मुझे जहर दे दो । यह तुम्हारी उम्र और ऐसी हरकतें ? तुम रईस आदमी चूड़ीवाली के घर जाव, जो हमारे फरस (फर्श) पर नहीं बैठ सकत है । डूब मरने की बात है । बड़ी गैरत का काम है । यह तुमका बुढ़ौती बखत हुआ का ? पोता-पोती सुनिहैं तो का कहिहैं ?

इसी तरह उन्होंने अपनी जबान में एक घण्टे तक वह सुनायी कि मुंशीजी की हक्की-बक्की भूल गयी । महरी और

दरबान के सामने कभी ऐसे काहे को जलील हुए थे। उस दिन से मुंशी महाराजबली और उनकी बीवी में लड़ाई रहने लगी। वह बात-बात पर उनकी ले-दे करने लगीं और रोज़-रोज़ जूती-पैजार होने लगी। बारिन तो शेर हो गयी, और महरी उन्हें भूनी मूँग के बराबर भी नहीं समझती थी। उनका एतबार बिलकुल जाता रहा। तमाश बीनी करने चले थे, हत्थे से पतंग ही कट गयी।

[२४]

बुढ़िया की पैंतरेबाज़ी

कुमरिन पर नवाब साहब का दिल बेतरह आया हुआ था। उसको ले जाकर बाग में जलसे होने लगे। कई दिन बीत गये। एक दिन कुमरिन के खसम मियाँ कादिर अपनी जोरू की टोह में ससुराल गये। पहिले तो नाजो ज़रा घबरायी, फिर कादिर के सिर पर हाथ रखकर बोली—इस सर की कसम, यहाँ से तो कल ही चली गयी। क्या सचमुच वहाँ नहीं है? या अल्लाह! खैर करना। बड़ा गजब हुआ। (दादी से) हे-हे अम्मीजान! कुमरिन का पता नहीं है। यह कहते हैं, परसों से गायब है। यहाँ क्या कहके आयी थी कि वहाँ जाती हूँ? हे-हे अम्मीजान, यह हुआ क्या?

बुढ़िया लगी दुहत्तड़ पीटने और रोना शुरू किया। नाजो भी रोयी। मियाँ कादिर उल्लू बन गये। नाजो ने और रंग चढ़ाया—कोई फुसला तो नहीं ले गया? हाय! क्या जाने किसके पाले पड़ी है। कोई जुल देके ले गया होगा। वह तो ऐसी थी नहीं; किसी की तरफ आँख उठाकर देखती तक तो थी

नहीं। मगर मैं जानती हूँ कि किसी कुटनी के बहकावे में आ गयी। अब कहाँ जाकर तलाश करूँ, मेरे अल्लाह!

कादिर—और हम समझे थे कि यहाँ है। बड़ा धोखा हो गया।

नाज़ो—क्या जाने तुमने क्या कर दिया उसको?

कादिर—अब तुम मुफ्त में लड़ाई लेती हो।

बुढ़िया—अरे, लड़ाई कैसी? मेरी लड़की को क्या कर दिया? तू ही नालायक है। अरे तू ही इस काबिल होता तो वह भाग क्यों जाती? अरे तू निखट्टू न होता, तो जुरुवा भाग क्यों जाती? मदुए, शर्माता नहीं और ऊपर से आँखें दिखाता है। मेरी बच्ची को जैसा तुमने तबाह किया, वैसे ही अल्लाह तुम्हें तबाह करे। हाय! अब मैं उसे कहाँ पाऊँगी?

नाज़ो—(सिर पीटकर) यह क्या मालूम था अम्मीजान? हाय! अब कहाँ जाकर ढूँढ़ू मेरे अल्लाह? अम्मीजान, हाय, यह हुआ क्या? उसका यह मियाँ ही मूँड़ीकाटा निखट्टू है।

कादिर—अब मैं जाकर थाने पर रपट लिखाये देता हूँ। तो अब कुमरिन की सकल (शक्ल) हम न देखेंगे, नाज़ो! मैं तो अब संखिया खाकर सो रहूँगा।

बुढ़िया—एक अठवाड़े तक रास्ता देखो, शायद कोई फुसला ले गया हो। कौन ताज्जुब है। मगर कुमरिन तो ऐसी थी नहीं।

कादिर—जी नहीं! हाँ, वह पड़ोस का जो लौंडा है—वह पानवाले का लौंडा—उसीसे दिनभर हँसी-दिल्लगी हुआ करती थी। कहने लगीं, ऐसी तो थी नहीं।

बुढ़िया—और तू देखा किया? शाबाश है तेरे जिगरे को! अरे! तेरी ही करतूतों से वह खराब हो गयी।

कादिर—(रोकर) हाय! मेरी तो आबरू गयी। कहीं का

न रहा। अब मैं जाकर चौकी पर रपट लिखवाऊँ और ढूँढ़ूँ? अब्बा सुनेंगे तो क्या हाल करेंगे? बड़ी बदनामी हुई। अब मैं सोचता हूँ कि मैं करूँ क्या? अगर किसी से कहता हूँ तो शर्म आती है। (रोकर) न कहूँ तो क्या छिपी रहेगी? (तोबा करके गालों पर तमाचा मारकर) मुहल्ले भर में मालूम हो जायगा। बड़ी टेढ़ी खीर है। मगर क्या करें, अब कोई चारा ही नहीं। अल्लाह मालिक है। पहिले तो मैं जाकर थाने पर रपट करता हूँ, फिर आगे देखा जायगा, जो मर्जी खुदा की।

नाजो—भई, जरी समझ-बूझकर काम करना चाहिए। थाने का मामला और तुम अभी कमसिन हो।

कादिर—(आँखों में आँसू भरकर) हाय! कुमरिन ने बड़ी दगा दी। या मेरे अल्लाह, या तो कुमरिन को मुझसे मिला दे या जमीन फट जाय और मैं समा जाऊँ। (सीने पर जोर से हाथ मारकर) हाय, क्या करूँ? मैं तो किसी को मुँह दिखाने के काबिल ही नहीं रहा।

बुढ़िया—वह गयी उस पानवाले के फेर में है। उसी मुए की उस्तादी है।

नाजो—अल्लाह उसे गारत करे और कहीं का न रखे। बैठे-बिठाये जहर खाने का बखत पहुँचा दिया।

कादिर को दोनों ने ऐसी पट्टी पढ़ायी और ऐसे-ऐसे सब्जबाग दिखाये कि कादिर के दिल पर नक्शा हो गया कि सारी कारस्तानी पानवाले लौंडे की है। उसने सोचा—तो मैं जाकर टोह लगाऊँ न? पहिले टोह लगाऊँ, फिर तो वह है और हम हैं। घर में रहना मुश्किल न कर दूँ तो सही। सारा मोहल्ला मेरी तरफ हो जायगा। ऐसी बात है भला?

दोनों ने मिलकर कादिर को ऐसा उल्लू बनाया कि उसे यह

यकीन हो गया कि कुमरिन उसी तम्बोली के लौंडे के साथ भाग गयी। रो-पीटकर घर को रुखसत हुए।

[२५]

खुशगप्पियाँ

एक दिन नवाब साहब के दरबार में शेर-शायरी का दौर जारी था, और मियाँ अख्तर ने यह शेर पढ़ा—

भूलकर ऐ चाँद के टुकड़े इधर आ जा कभी,
मेरे वीराने में भी हो जाये दम-भर चाँदनी।

सब लोगों ने खूब तारीफ की। इस पर मसखरा बोल उठा—हुजूर, गौर से सुनियेगा। सभी साहब मेरी तरफ मुतवज्जह हों! ख्वाजा साहब का शेर तो आपने सुन ही लिया और गुलाम ने अर्ज किया है :—

यह अजब अन्धेर है, जीती है मरकर चाँदनी।
है कोई सब-जज, कोई डिप्टी कलक्टर चाँदनी॥

यह सुनकर सभी लोग मारे हँसी के लोटने लगे। महफिल उलट गयी। पूरे एक घण्टे तक कहकहा रहा।

अख्तर—हुजूर, इंसाफ शर्त है। कैसा लाजवाब शेर है। सब-जज और डिप्टी कलक्टर एक ही मिसरे में आ गये।

मसखरा—हुजूर, गुलाम ने एक शेर अर्ज किया है—अण्डे के भीतर चाँदनी बहुत मुश्किल है।

नवाब—ऐं! कहाँ?—अण्डे के भीतर चाँदनी?

मसखरा—जी हुजूर, कोई कहे तो खून थूकने लगे। हुजूर सुनें तो :—

साथ जर्दी के सफेदी भी है इसमें जल्वागर।
या खुदा क्योंकर घुसी अण्डे के भीतर चाँदनी॥

आध घण्टे तक फिर कहकहा रहा।

नवाब—भई, कमाल है। अण्डे के भीतर चाँदनी। बड़ी उपज कर लेने लगे और सबूत कैसा अच्छा है!

छुट्टन—वाह उस्ताद! वाह! कहाँ जाकर चाँदनी को घुसा दिया। वल्लाह अव्वल नम्बर का मसखरा है।

मसखरा—गुलाम तो नंग खान्दान पैदा हुआ है, हुजूर। जनाब वालिद साहब और दादाजान अव्वल नम्बर के जाहिल थे। चाँटा पहिले रसीद करते थे, बात पीछे। उनका कौल था, इधर इन्सान ने अलिफ़-बे शुरू की, उधर बेईमान हो गया। खान्दान में हमारे चचाजान अलबत्ता एक नालायक पैदा हुए। पूछिये क्यों? यों कि उन्होंने अलिफ़-बे भी पढ़ा, और अपना नाम लिख लेते हैं। उनको तो इस पर बड़ा नाज है, मगर वह नंग खान्दान पैदा हुए। यह पढ़ा-लिखा होना भला कौन-सी शराफत है? वह शरीफ क्या जो पढ़ा-लिखा हो? तो हुजूर, चचा साहब भी खूब शेर तसनीफ़ करते हैं। जिस मुशायरे में गये उलटा दिया। महफिल-की-महफिल उलट गयी। लोग इस कदर हँसे कि दो दिन तक पेट में दर्द रहा और एक शायर के पेट में हमल रह गया। इस पर और भी जोर से कहकहा पड़ा, और लोग हँसते-हँसते खड़े हो गये। जब जरा हँसी थमी, तो मसखरे ने कहा—हुजूर, एक शेर और अर्ज करूँगा। इन्साफ शर्त है:—

ओस में सोता नहीं हरगिज़ हूँ वह आली दिमाग।
मेरी तुरबत पर बनी रहती है छप्पर चाँदनी॥

अख्तर—इस छप्पर के लफ्ज ने फड़का दिया। आली दिमागी का सबूत कितना अच्छा है!

मसखरा—और सुनिये हुजूर :—

चौदहवीं का चाँद भी है माँद क्या सूरत है वाह।
उसके मुखड़े के मुकाबिल है दलिद्दर चाँदनी ॥

हुजूर, और मुलाहिजा फरमाइये :—

एक भी चलने नहीं पायी किये लाखों जतन।
गो हजारों साल से आती है गाहकर चाँदनी ॥

छुट्टन—वल्लाह यार असकरी! क्या-क्या इन्सान चुन-चुन कर तुमने रखे हैं। सोने से मढ़े जाने के काबिल।

मम्मन—हुजूर की फय्याजी है, वर्ना कुजा हम, कुजा हमारी हस्ती। मगर हुजूर इतना जरूर कहेंगे कि सरकार का-सा फय्याज आदमी शहर में दूसरा नहीं है। यकता हैं हामरे हुजूर।

अख्तर—इसमें क्या फर्क है? खुदावन्द, हुजूर की फय्याजी रोम और रूस तक मशहूर है।

नवाब—और मियाँ, जो दम गुजरता है गनीमत है। अब मैं क्या कहूँ यारो, रियासत बिलट गयी हमारी। रुपया हमारे पास नहीं, मगर अब भी वल्लाह, वह दिल है कि अच्छे-अच्छे बादशाह हुजूर के सामने मुकाबिला नहीं कर सकते।

मम्मन—भई, यह भी तो शाहंशाह हैं। हाय यह दिल कहाँ?

नवाब—मियाँ, हम किस काबिल हैं? यह तुम सब लोगों की इनायत और मेहरबानी है। दोस्त हो हमारे।

छुट्टन—इसमें शक नहीं कि नवाब साहब बड़े हौसले के आदमी हैं और बड़े ही फय्याज।

मसखरा—खुदावन्द, दखल दरमाकूलात तो है, पर चुकन्दर चाँदनी भी लगे-हाथों सुन लीजिये। कहाँ का झगड़ा? किसकी रही है और रहेगी किसकी?

जब मजा खाने का हासिल हो कि अपने हाथ से।
खेत में महताब के तोड़े चुकन्दर चाँदनी॥

नवाब भई, वाह-वाह। चुकन्दर चाँदनी ने और भी काफिये को चमका दिया। क्या खूब सुभान अल्लाह!

मम्मन—हुजूर, चुकन्दर तोड़े नहीं, खोदे जाते हैं। चुकन्दर तोड़ना मुहावरा नहीं है।

छुट्टन—हाँ भई, ऐतराज तो सही है, क्यों गुलखैरू?

मसखरा—मैं शायर आदमी, शेर कहना जानूँ; न कुँजड़ा न कुँजड़े का पड़ोसी। मुझे क्या मालूम कि चुकन्दर तोड़ते हैं या खोदते हैं।

छुट्टन—भई, यह जवाब बहुत ही बढ़ गया। कुँजड़े की एक ही कही। झेंपे मियाँ मम्मन या नहीं?

दारोगा—जङ्गली कबूतर चाँदनी अभी बाकी है हजरत।

मसखरा—अभी लो, क्या कहीं ढूँढ़ने या लेने जाना है?

उड़ती फिरती है हरी दीवार सबको बाम पर।
बन गयी है कब से यह जङ्गली कबूतर चाँदनी॥

दारोगा—चाँदनी को तो खूब चमकाया आपने वल्लाह। काफिया तङ्ग कर दिया।

[२६]

नवाब साहब गायब

नवाब छुट्टन साहब, आगा मुहम्मद अतहर और रौनकजंग गो सब आवारा-मिजाज थे, मगर नवाब मुहम्मद अस्करी सबके गुरु घण्टाल निकले। मनिहारिन की छोकरी—कुमरिन—को गायब तो खुद किया, और उसकी माँ की मदद से उसके मियाँ को उल्लू बनवा दिया। बेचारा कानपुर और न-जाने कहाँ-कहाँ

ढूँढ़ता फिरा, तम्बोली के लौंडे से मारपीट भी कर डाली और सिपाहियों के जूते भी खाये। इधर नवाब साहब कुमरिन को लिए हुए ऐश कर रहे थे। यह हाल तो सबको पता था, मगर नवाब ने कुमरिन को रखा कहाँ था—इसका पता किसी को भी नहीं था। इसलिए तीनों नवाब अस्करी के मकान पर आये और दारोगा तथा मम्मन को समझाने लगे—देखो, जमाना बेढब है, उसके मियाँ ने जो कहीं नालिश कर दी, तो गजब हो जायगा। ठण्ढा करके खाना अच्छा होता है। नवाब को समझा दो कि हाथ-पाँव बचाये रहें। हम उनके दोस्त हैं। दोस्ती का हक अदा कर दिया, आइन्दा इन्हें अख्तियार है। बात खुल जाने पर बदनामी के साथ-साथ हतक-इज्जत भी है।

आगा—भई रौनकजंग, तुम तो अभी-अभी आये हो, हम और छुट्टन साहब तो घण्टों से एड़ियाँ रगड़ रहे हैं। वल्लाह, नवाब हाथ से जाता है, इसकी फिक्र कीजिये।

महाराजबली—(झल्लाकर) खुदा जाने क्यों तुम लोग इस कदर नवाब के खिलाफ हो। वह रईस क्या जो मुर्दा दिल हो? रियासत के मानी ही यह हैं कि खाय अच्छा, पहिने अच्छा और माशूक भी अच्छे-अच्छे हों। अगर घर में घुसकर दाल-रोटी खाली तो रईस क्या? हमारे नजदीक तो साईस है। रईस वह जो दिल-चला हो। किसकी रही है और रहेगी किसकी?

आगा—आप तो अपनी फस्द खुलवाइये। आपको खब्त हो गया है। आप पागल हैं। रियासत के यही मानी हैं कि दो-दो दिन घर से गायब रहे? वाह! अच्छी रियासत है। ऐसे रईस की ऐसी-तैसी।

रौनक—तुम इनसे उलझते क्यों हो, आगा साहब? यह तो ला-इलाज हैं, भई!

दारोगा—आपका कहना सही है, सरकार। नवाब साहब ने बेशक बुरा किया। कोई इस तरह खुल खेलता है, भला? लाहौलवलाकूवत। मगर हम लोगों के समझाने से समझ सकते हैं भला?

आगा—नवाब को एक खत लिखा जाय और सारी ऊँच-नीच बातें समझा दी जायँ।

दारोगा—हुजूर जो चाहें सो कह लें। मगर कश्मीरी होना भी कोई ऐब है, तो मजबूरी है। खुदा गवाह है जो मुझको यह मालूम हो कि इस वक्त नवाब साहब कहाँ हैं।

रौनक—फिर कश्मीरी पेच चला। इस वक्त की एक ही कही।

दारोगा—हुजूर तो न हारी मानते हैं न जीती।

छुट्टन—नवाब की तलाश करनी चाहिए। मियाँ महाराज-बली, आप भी वल्लाह कहेंगे कि मैं भी आदमी हूँ। म्युनिसिपल कमिश्नर बने हैं। ऐसे-ऐसे कमिश्नर बहुत देखे हैं। जरा-सा पता नहीं लगा सकते कि नवाब साहब कहाँ हैं।

मुंशीजी—यह कौन-सी बड़ी बात है? अभी लो, अभी।

आगा—आपका रौब नहीं है कुछ? वल्लाह जरा-सा रौब भी नहीं।

मुंशीजी—कौन, चालान करा दूँ आपका।

आगा—जी चालान करा दूँगा। बस, दोस्तों पर ही शेर हैं। नाजो से एक न चली। झन्नाटे की टीप खाकर चले आये।

---

[२७]

ओछे के घर तीतर

नवाब साहब ने कुमरिन को बड़े नाज व शान के साथ एक महलसरा में टिकाया था, मगर कमीन चूड़ीवाली की छोकरी अपनी जात पर आये बगैर कैसे रहती ? गलियों की फिरनेवाली को नवाबी पर्दा और ठस्सा क्योंकर सुहाता ? अपनी औकात पर आ गयी और ऐसी-ऐसी हरकतें करने लगी कि महरियाँ, बाँदियाँ, मुग़लानियाँ सभी मुँह फेर-फेरकर हँसतीं और आपस में बेगम साहबा (कुमरिन) की हरकतों का मजाक उड़ातीं। एक दिन बी कुमरिन छत पर चढ़ गयीं और दीवार पर हाथ रखकर लहरा-लहराकर गाने लगीं। महरियों, खवासों ने जो यह देखा तो गुल मचाया—ऐं-ऐं ! हुजूर यह क्या करती हैं ? सरकार सुनेंगे तो महनामथ मचायेंगे। हुजूर यह क्या गजब ढा रही हैं ?

मगर सुनता कौन है ? इतने में आवाज आयी—गँड़ेरियाँ पौंड़े की। आवाज सुनते ही नाजनीन इतनी बेताब हुई कि कोठे से धम-धम करती हुई दौड़ी और जीनों पर से उछलती और दो-दो जीने फाँदती हुई नीचे आयी, और यहाँ से जो तर्रारा भरा तो ड्योढ़ी में दाखिल; ड्योढ़ी से जकन्द भरी तो बाजार में पहुँची और साथ ही चिल्लाती जाती थी—ओ गँड़ेरीवाले, ओ गँड़ेरीवाले ! मुआ सुनता ही नहीं।

गँड़ेरीवाले ने पीछे फिरकर देखा और लौट पड़ा। नाजनीन ने ड्योढ़ी पर गँड़ेरियाँ खरीदीं। गँड़ेरीवाले ने दिल्लगी से गँड़ेरियों के साथ गाँठें भी तोल दीं। खाते समय गँड़ेरियाँ कम खायीं और गाँठें ज्यादा। मामा, महरी, मुगलानी सभी मुँह

फेरकर हँसने लगीं। पहरे के सिपाही भी कहकहा लगाकर हँस रहे थे।

गँड़ेरी खाने के बाद महरी को हुक्म दिया कि बाहर जो खाना पके उसमें हमारे लिए गोजई की रोटी और धुली हुई उर्द की दाल मसालेदार जरूर पके। और हाँ, मट्ठा भी मँगवा लो और सालन में चिचिण्डे की तरकारी हो।

जितनी भी खादमाएँ वहाँ मौजूद थीं, वे मुस्करा दीं कि पुलाव ज़र्दा, शीरमाल, बाकरखानी का नाम भी नहीं, पकवाया भी तो गोजई की रोटी। सभी हैरान थीं कि यह हैं कौन? सूरत-शक्ल तो अल्लाह ने ऐसी दी कि वाह-वाह! सरापा साँचे में ढला हुआ और हरकतें ऐसी।

झुटपुटे के वक्त नवाब साहब तशरीफ लाये; पीछे खिदमतगार, आगे लालटेन। ड्योढ़ी पर पहुँचे, तो लोग खड़े हो गये और सबने झुक झुककर सलाम किया। नवाब साहब अन्दर तशरीफ ले गये तो महरियों, मुगलानियों वगैरह में हाँड़ी पकने लगी।

कुमरिन—(हँसकर) अब तक तुम कहाँ गायब रहे? क्या कहीं और दिल लगा लिया?

नवाब—अब हम तुमसे काहे को छिपायें? हमसे लोगों ने कहा कि अभी जरा अलग रहो। देखो, ऊँट किस करवट बैठता है? बस, यही बात है और कुछ नहीं।

कुमरिन—उई। तो अब ऐसा क्या निगोड़ा डर पड़ा है? यह कहकर झपाटे से उठी, ड्योढ़ी पर पहुँची और ड्योढ़ी में खड़े होकर पहरेवाले सिपाही से कहा—जाकर फालूदेवाले को बुला तो ला।

पहरेवाले ने कहा—सरकार, इस वक्त यहाँ कोई और आदमी नहीं है, और मैं पहरे पर हूँ।

कुमरिन—अच्छा, तू जा, हम पहरा देंगे।

यह सुनते ही पहरेवाले ने मुँह फेरकर मुसकरा दिया तो आप बिगड़ गयीं और वापस जाकर नवाब साहब से कहा—नवाब, इस पहरेवाले आदमी को अभी निकाल दो, नहीं तो हम खाना न खायेंगे, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। मुए से मैंने कहा-जरी फालूदेवाले को जाकर बुला ला। पहिले तो टाल दिया, फिर कहने लगा कि मैं पहरे पर हूँ। मैंने कहा—अच्छा, तू जा, मैं पहरा दूँगी।

यह सुनते ही महरियाँ, खवास, नवाब साहब, सब-के-सब कहकहा लगाकर हँस पड़े।

नवाब बहुत झेंपे। उन्होंने अलग ले जाकर कहा—कुमरिन तुम हमारी हँसी कराओगी। हम तुम्हें रईसजादी बनाकर रखना चाहते हैं, और तुम्हारी ये हरकतें? आखिर हो न मनिहारिन। वह चूड़ीवाली की बू कहाँ जाय? हम तो तुम्हारे भले ही के लिए कहते हैं। अव्वल तो तुम पहरेवालों के सामने जलील हुईं, और दूसरे, अगर कोई पहचान जाय तो तुम्हारा मियाँ हम पर नालिश ठोंक दे। ऐसी हालत में तुम्हें जुदा होना पड़ेगा। हमारा तो कुछ न बिगड़ेगा, लेकिन तुम फिर उसी के पाले पड़ोगी, वह और उसकी माँ दोनों मारते-मारते तुम्हारा भुर्ता कर देंगी।

हुसेनअली खिदमतगार ने चुपके से नवाब के कान में गँड़ेरीवाले का किस्सा कह सुनाया। सुनकर नवाब साहब ने सिर नीचे कर लिया, और थोड़ी देर के बाद कुमरिन की दादी और नाजो को बुलवा भेजा। उनके आ जाने पर अलग ले जाकर सारा हाल कह सुनाया। बुढ़िया चुपचाप सुनती जाती थी

और दाँत किटकिटाती जाती थी। नाजो और बुढ़िया ने मिलकर कुमरिन को खूब फटकारा और गालियाँ दीं।

जब बुढ़िया चलने लगी तो नवाब साहब और मुगलानी को अलग बुलाकर कहा—बी मुगलानी, हमारी बच्ची बड़े नाजों पली है। इसे आज तलक किसी ने आधी बात भी नहीं कही। हमारे लाड़ का कुसूर है। लाड़ का मुँह टेढ़ा।

नवाब—बी मुगलानी, गँड़ेरियों वाला हाल तो कह सुनाओ।

मुगलानी—ऐ हुजूर, पौंड़े की गँड़ेरी का नाम सुनकर जीने पर से फाँदी पड़ती थीं।

नवाब—यह फाँदी, क्या खूब ! लुगत (कोष) में आज तुम्हारा भी नाम है। जवाब नहीं रखती हो।

मुगलानी—(झुककर सलाम करके) हुजूर की कदरदानी है ! और हुजूर जेवर से गोंदनी की तरह तो बेगम साहबा माशा-अल्लाह लदी हुईं, दुश्मनों की आँख में खाक और पोर-पोर छल्ले और गँड़ेरियाँ चुकाने गयीं।

नवाब—वल्लाह, इस पोर के लफ्ज ने क्या मजा दिया है ! पौंड़े के लिए पोर। बी मुगलानी, तुम तो बादशाहों और बादशाहजादियों की सोहबत उठाये मालूम होती हो।

मुगलानी—लौंडी ने तो हुजूर से भी इसका जिक्र नहीं किया था। मगर यह महरी एक ही बिस की गाँठ है।

नवाब—पौंड़े के लिए गाँठ। अहा हा ! सुभान अल्लाह।

मुगलानी—यह जित्ती खिदमती औरतें यहाँ हैं, मुझछुट सब चरबाँक हैं।

नवाब—(खड़ा होकर) वाह-वाह ! बाँक-चरबाँक। पौंड़े के लिए बाँक। जुगत लड़ाने में मुगलानी उस्ताद हैं। तुमने तो इस वक्त कलम तोड़ दिये। वल्लाह जी खुश हो गया।

बुढ़िया नाजो को छोड़कर घर सिधारी।

इधर महरियाँ और खवासें बातें कर रही थीं। महरी बोली—आखिर यह हैं कौन? मैं तो जानती हूँ, शहर भर में तो ऐसी औरत दूसरी न होगी। क्या शक्ल पायी है।

खवास—और कितना चुलबुलापन है कि उफ़्फोह। निचली तो बैठती ही नहीं एक जगह। इसी का नाम माशूक़-पना है।

महरी—गात कितनी प्यारी है! कलाइयाँ कितनी गोरी-गोरी हैं! हमने तो इतनी उमर में ऐसी औरत ही नहीं देखी।

[२८]

कुमरिन की आवारगी

एक दिन नाजो अपने घर गयी तो कुमरिन ने चुपके से अपनी दुगाना (सहेली) को बुलवाया। इनकी दुगाना की कुँजड़िन की दूकान थी। दुगाना आयीं तो दंग, आलीशान मकान, सजे हुए कमरे, खिद्मत के लिए खवासें, कामकाज के लिए महरियाँ और कुमरिन कीमती कपड़े पहिने और जेवरों से सिर से पाँव तक लदी, देखते ही कुमरिन से लिपट गयी। दुगाना ने कुमरिन की खुशनसीबी पर खूब ख़ुशी जाहिर की। इतने में मलाई की बरफवाले ने आवाज दी। दुगाना बोली—बहिन, तुम इसको जानती नहीं हो। इसका नाम फजले है। अगर उसकी सूरत देख लो तो गश आ जाय। चीते की-सी कमर और हरिन की-सी आँखें। मैं क्या कहूँ, बहिन! अब तुमसे तो कोई पर्दा नहीं है। मैं इसके साथ भाग गयी थी।

दुगाना ने बरफवाले की इतनी तारीफ की, इतनी तारीफ़

की कि कुमरिन उसे देखने के लिए तड़पने लगी। बोली—बहिन, हम क्योंकर देखें ?

दोनों में कुछ फुसुर-फुसुर सलाह हुई, और दुगाना ने एक महरी को इशारे से अलग बुलाकर कहा—अगर तुम किसी तरकीब से बरफवाले को यहाँ बुला दो तो हम तुम्हें बहुत इनाम देंगे।

महरी—यहाँ तो आना दुश्वार है, सब पर बात खुल जायगी। एक काम कीजिये। पिछवाड़े के दरवाजे की तरफ उसे बुलाये लेता हूँ, किसी को कानों-कान पता भी न चलेगा।

महरी बाहर जाकर पिछवाड़े की तरफ बरफवाले को बुला लायी और इधर से कुमरिन और दुगाना को नीचे उतार ले गयी। कुमरिन ने जो बरफवाले को देखा तो देखते ही आशिक हो गयी। पूछा—अरे बरफवाले, तेरी शादी हो गयी है, जोरू कहाँ है ?

बरफवाला—हुजूर, कई लड़कियाँ मुझे प्यार करती हैं। मगर मुझे कोई जँचती नहीं। वैसे तो हुजूर, अभी इस छः महीने के अन्दर दो औरतें मेरे साथ भाग चुकी हैं और वह कबूल सूरत कि आदमी की भूख-प्यास बन्द हो जाय।

कुमरिन—(करीब आकर) जरा इधर सामने आ।

बरफवाला—(पास जाकर) अल्ला करे हुजूर भी आसिक हो जायँ। ऐ मेरे अल्ला ! मेरी सुन लो।

कुमरिन—ऐ, अब तू यहाँ से कुछ लेकर जायगा ?

बरफवाला—बहुत-कुछ लेकर जाऊँगा, और अल्ला ने चाहा तो तुम्हीं को लेकर जाऊँगा।

महरी के इशारे पर दुगाना ऊपर चली गयी तो कुमरिन ने सलाखों में से हाथ डालकर बरफवाले को अपनी तरफ घसीटा

और गाल मलने शुरू किये। कुमरिन की बेक़रारी का यह हाल था कि सलाख़ों को तोड़े डालती थी। कहा—अरे, तू चाहे मुझसे आटा पिसवा, मगर किसी तरकीब से मुझे ले चल। अब तेरे बगैर मेरी जिन्दगी तल्ख़ हो जायगी। अब तू एक काम कर लौंडे, चाहे हम हों, चाहे न हों, तू यहाँ एक फेरा रोज कर जाया कर। बस, इसी जगह चुपके से खड़ा रहा कर, तो हम किसी बहाने से आ जाया करेंगे।

बरफ़वाला—रोज-रोज का आना तो मुश्किल है; और भी बहुत-सी औरतें ऐसी हैं जो मुझ पर जान देती हैं। बारी-बारी आया करूँगा।

कुमरिन—उई अल्लाह! सबको तूने चुटियल कर दिया है। तू सलामत रह मेरी जान। मगर एक दफा जरूर फेरा कर जाया कर। (गालों पर हाथ फेरकर) हमने तेरे रोज दो रुपये मुकर्रर कर दिये। जिस रोज आयेगा, दो रुपये पायेगा। हाय, मैं इस वक्त इन मोटे जँगलों को क्योंकर हटाऊँ? ऐ बरफ़वाले, मैं सदके, अपनी तस्वीर तो उतरवाकर हमें दे दे। किसी अच्छे मुसव्विर से उतरवाना।

बरफ़वाला—हुजूर, आप भी तो अपनी तस्वीर मुझे दे दें।

कुमरिन ने झँप से तस्वीर लाकर उसे दे दी, मगर कुछ सोच-समझकर वापस ले ली। इतने में महरी आयी और बोली—सरकार, बस अब चलिये; नहीं तो बात फूट जायगी।

कुमरिन—महरी, मैं तो इस छोकरे पर जान देती हूँ। हमने तो ऐसी सूरत देखी ही नहीं थी।

बरफ़वाले को कुमरिन ने बड़ी मुश्किल से रुखसत किया और खुद महरी के साथ ऊपर चली गयी। थोड़ी देर में बरफ़वाला

फिर लौटा और सलाखों में हाथ डालकर कुमरिन की तस्वीर को, जो वहीं रखी रह गयी थी, उठा ले गया।

[२९]

इश्क टें-टें

एक दिन मुंशी महराजबली नाजो के घर गये। नाजो तो इनसे जली बैठी थी, मगर फिर भी आबभगत की और पूछा—अब बताओ, तुम्हारी क्या खातिर करें, महाराजबली?

मुंशीजी—तुम मुझे प्यार करती जाओ और कुछ नहीं। इससे बढ़कर और हमारी क्या खातिर होगी?

नाजो—प्यार करने में दाम खर्च होते हैं।

मुंशीजी—अच्छा, बताओ तुम्हें क्या चाहिए? बोलो, कुछ खाने को मँगवायें? क्या खाओगी? पूरियाँ और तिकोने मँगवा लो बस, और मुँह मीठा करने को राबड़ी (रबड़ी)।

नाजो—वही अपनी असलियत पर आ गया ना। क्या दो-चार आने में टालने चला है? हमारा जी चाहता है, उम्दा बनी हुई बर्फी खायें, जिस पर चाँदी के वर्क लगे हों। मगर एक रुपये से कम की न हों।

महराजबली वैसे तो परले सिरे के कञ्जूस थे, टका दिवाल न थे। मगर मजबूर होकर उन्होंने जमादार को एक रुपये की बर्फी लाने का हुक्म दिया।

नाजो—हमें साढ़े चार गज अतलस भी मँगवा दो, फूलदार अतलस। हम दगला बनायेंगे।

मुंशीजी ने जमादार को साढ़े चार गज अतलस लाने का हुक्म दिया, मगर इशारे से मना कर दिया। नाजो ने आँख का इशारा देख लिया और बिगड़कर बड़े जोर को एक चपत जमायी

और कहा—मुए कंजूस, मक्खीचूस, तमाशबीनी करने चला है और खरचते हुए दम निकलता है। हमारे सामने इशारा किया। चल, दूर हो मेरे सामने से मुआ, बेईमान कहीं का।

चपत खाकर मुंशीजी ने पहिले जमादार को आवाज दी—मिर्जा, भई, और काम छोड़कर तुम पहिले साढ़े चार गज अतलस ला दो। लपककर जाओ और लपककर आओ। (नाजो से) तुम नाहक फिसाद करती हो। हमें बड़ा रञ्ज होता है। साढ़े चार गज अतलस की क्या हकीकत है, तुम पर बजाजे का बजाजा सदके कर दूँ। हमारी मुहब्बत को देखो। फौरन् अतलस मँगा दी और तुरन्त बरफी के लिए हुक्म दे दिया। तुम व्यर्थ नाराज होती हो।

थोड़ी देर में जमादार अतलस लेकर आया। नाजो ने देखा तो खुश हो गयी। उसने कहा—अब इसके लिए गोट और अस्तर तो मँगवाओ।

मुंशीजी—हाँ-हाँ, अभी मँगवाये देते हैं। देखो, जरा-से इशारे में अतलस मँगवा दी कि नहीं ? सब आ जायगा। तुम्हारे कहने भर की देर थी कि अतलस फौरन् मँगवा दी। तुम्हारे लिए जान हाजिर है। तुमसे इश्क सादिक (सच्चा प्रेम) है, जब तो अतलस फौरन् ही मँगवा दी। बस, हुक्म भर की देर थी।

नाजो—(अतलस दूर फेंककर) चूल्हे में गयी तेरी अतलस, मुआ, ओछा। जबसे सैकड़ों हो दफा कह चुका होगा कि अतलस दी, अतलस मँगवा दी, फौरन ही तो अतलस मँगवा दी। ऐसे तेरे देने पर नालत (लानत)। खुदा ऐसे ओछे से कोई चीज न दिलवाये।

मुंशीजी—तुम्हारी दोस्ती शेर की दोस्ती है। अच्छा, तुम

मार लिया करो, गालियाँ दे लिया करो, मगर बिगड़ा न करो। जरा-से ही में तुम आँखें फेर लेती हो। अच्छा, गोट किस रङ्ग की लोगी, बताओ ?

इतने में जमादार बरफी ले आया। नाजो ने मुंशीजी से भी खाने को इसरार किया। मुंशीजी का दम खुश्क। कैसे खा सकते थे ? हिन्दू आदमी बर्फी क्योंकर खायँ ? अव्वल तो जमादार लाया, उसके बाद दरवाज़े से यहाँ तक मामा लायी। करें तो अब क्या करें ?

नाजो ने पहले तो खुशामद की, फिर मुँह फुलाकर और भवँ चढ़ाकर बैठ गयी। अब महाराजबली हैं कि हाथ भी जोड़ते हैं, पैर भी पड़ते हैं, टोपी भी कदमों पर रखते हैं, हजारों तरह से खुशामद भी करते हैं, मगर नाजो एक नहीं मानती। जब इन्होंने बहुत दिक किया तो नाजो झल्लाकर उठी और पानी की भरी हुई झझरी उठाकर सारा पानी उन पर डाल दिया। सिर से पाँव तक तर हो गये। सब कपड़े उतारकर लुंगी पहनी, अँगरखा, पाजामा, कुर्ता, रूमाल और टोपी धूप में सूखने को रखा और नाजो को समझाने लगे। नाजो उस वक्त डली कतर रही थी। गुस्से में भरी हुई तो थी ही, सरौता जोर से हाथ पर मारा तो महाराजबली पन्द्रह-बीस मिनट तक हाय-हाय करते रहे। कञ्जूस की बला दूर। बेजर इश्क टें-टें।

[३०]

उल्लू की दुम फ़ाख़ता

मुंशी महाराजबली गोल आदमी थे, उस पर यह जौम कि हम चुं दीगरे नेस्त ! यार लोग इनको उल्लू बनाकर चार घड़ी हँस-बोल लेते थे। जरा-सी तारीफ करते ही मुंशीजी बाँसों कूदने

लगते थे, और जोश में आकर और भी बेवकूफी की बातें करते थे। यार लोगों को दिल्लगी हाथ आती थी। मुंशीजी अक्ल के पीछे लट्ठ लिये घूमते थे। यार लोग उनको बनाते, किन्तु मुंशीजी और भी अकड़े जाते थे। एक दिन नवाब साहब का दरबार लगा हुआ था कि यार लोगों ने हुसेनअली से मुंशीजी के कान में कहलवा दिया कि तुमको नाजो ने बुलाया है। अब क्या था, मुंशीजी जाने के लिए रस्सियाँ तुड़ाने लगे। यार लोगों ने बहुत रोका, पर रुके नहीं। जब रुखसत हुए तो मसखरा साथ हो गया। उन्होंने रास्ते में कहा—यार, हमारी बीवी जरा बीमार है, और नाजो के पास जाना भी जरूरी है। कोई ऐसी तदबीर बताओ कि साँप मरे और लाठी भी न टूटे। बीवी भी न नाराज हों और नाजो से भी मुलाकात हो जाय।

मसखरा—वह तदबीर बताऊँ कि पट ही न पड़े। भई, क्या तदबीर सूझी है, वल्लाह न कहोगे, यार।

मुंशीजी—भई, यहाँ पेट में चूहे छूटे हुए हैं। कह डालो। जरा कह डालो।

मसखरा—आपकी जौजा मुकद्दसा (धर्मपत्नी) का सिन शरीफ (आयु) क्या है?

मुंशीजी—हमारी बीवी का सिन? ऐ, हमसे छोटी हैं। दो-एक रोज से बुखार आता है। जरा अलील (बीमार) हैं।

मसखरा—अच्छा, शक्ल व सूरत कैसी है?

मुंशीजी—गोरी चिट्टी हैं। गोल चेहरा, बाल जैसे काला भौंरा, कमर पतली, नशीली आँखें। कुम्मन साकिन को देखा था? बस, एकदम कुम्मन साकिन की-सी हैं। कुम्मन को छिपाये और उनको दिखाये। उनको छिपाये और कुम्मन को दिखाये।

कुम्मन साकिन की बात सुनकर मसखरा हँस पड़ा। बात हा

ऐसी थी, मगर वाह, मुंशीजी समझे तक नहीं कि मसखरा क्यों हँसा !

मसखरा—हमने एक तदबीर सोची है। पहिले यह बतलाइये कि आपकी बीवी नेक पारसा (पवित्र) हैं या नहीं ?

मुंशीजी—उनकी नेकी का क्या कहना; क्या शक भी है ?

मसखरा—अच्छा, तो उम्र उनकी अधेड़ है—एक बात। यह खौफ़ नहीं कि तेरह-चौदह बरस की उमरवाली हैं और जवानी फटी पड़ती है, और नेक भी हैं। तीसरे, कुम्मन साकिन की-सी। फिर उनकी तरफ से आपको निडर रहना चाहिए। तो तदबीर यह सोचता हूँ कि—मगर एक बात और है। अब इस वक्त जो दरवाजा खुलवाइयेगा तो कौन खोलेगा ?

मुंशीजी—महरी, मगर वह जवान औरत है। दरवाजा खोलते ही भाग जायगी। हम दरवाजा बन्द कर देंगे और जाकर सो रहेंगे, बस। कोठे पर सोते हैं। जीना बिलकुल सामने है; खट-खट चढ़ गये और बायें हाथ को रावटी है। वहाँ पलंग बिछा है। गये और सो रहे, बस।

मसखरा—अच्छा, तो फिर तुम्हारी बीवी न आयेंगी वहाँ ?

मुंशीजी—नहीं, अगर हम बुलायें तो शायद आ जायँ।

मसखरा—लो भाई साहब, तदबीर यह है कि आप तो दरवाजे पर पुकारिये। आपकी आवाज महरी भी पहिचान लेगी और बीवी भी। अँधेरी रात। इधर आवाज दीजिये और लम्बे हूजिये। महरी कुण्डी खोलकर भाग जायगी। बन्दा रावटी में दुबककर पड़ रहेगा और तड़के गजरदम निकलकर रफूचक्कर हो गया। साँप मर जाय और लाठी भी न टूटे। क्यों, कैसी तदबीर है ? वह तदबीर सोची है कि कभी पट ही न पड़े।

मुंशी महाराजबलो उल्लू की दुम फाख्ता ; दुश्मन-अक्ल तो थे ही, मसखरे की पीठ ठोंक दी।

मुंशीजी—भाई, क्या सूझी है ! मानता हूँ उस्ताद। बस, तुम रावटी में जाकर पड़ रहना और तड़के जब सब सोते रहेंगे तब चुपके से चम्पत हो जाना।

मुंशीजी इस सलाह पर न सिर्फ राजी ही हो गये, बल्कि मसखरे का शुक्रिया भी अदा किया और रास्ते भर उसकी खुशामद करते गये।

मसखरा—आपकी बीवी अफीम तो नहीं खाती हैं ?

मुंशीजी—जी नहीं, अफीम कैसी, चण्डू तक तो पीती नहीं।

मसखरा—चण्डू तक नहीं पीती। यह कहिये ताज्जुब है।

मुंशीजी—भई, चोरी-छिपे पीती हों तो मैं नहीं जानता। मगर मेरे सामने तो कभी नहीं पिया।

जब मुंशीजी घर के पास पहुँचे तो उन्होंने मसखरे को जीना रावटी वगैरह दिखाया और फिर समझाया कि गजरदम उठकर चम्पत होना। खटखटाने पर दरवाजा खुला, महरी लौट गयी और मसखरे ने अन्दर जाकर किवाड़ बन्द कर लिये।

मुंशी महाराजबली मन-ही-मन खुश होते, लुढ़कते-पुढ़कते नाजो के मकान पर पहुँचे। पहिले अहिस्ता से पुकारा, फिर दरवाजे को थपकी दी, फिर कुण्डी हिलायीं। एक घण्टा मेहनत करने के बाद अन्दर से मामा ने पूछा कौन है ?

मुंशीजी—हम हैं मुंशी महाराजबली। आज हमें नाज़ो ने बुलाया था।

मामा—बुलाया था ? वह तो आज तीन दिनों से ससुराल गयी हुई हैं।

मुंशीजी की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। समझ गये कि लोगों ने चकमा दिया। गिरते-पड़ते वहाँ से पलटे कि रास्ते में पहरेवाले सिपाही ने टेंटुआ दबाया। खुदा-खुदा करके घर को तरफ रवाना हुए।

इधर मसखरे पर जो बीती वह सुनिये। मुंशीजी तो मसखरे को दाखिल दफ़्तर करके नाजो के घर सिधारे और इत्तफ़ाक से उसी दिन मुंशीजी की लड़की और दामाद भी आ गये। जैसे ही मियाँ मसखरे जीने पर गये, दामाद ने उठकर बन्दगी अर्ज़ की।

ऐं! यह तो कोई और ही है? इतना सुनना था कि मियाँ मसखरे के होश-हवास पैतरा हुए। आव देखा न ताव, दौड़कर भागे। दामाद ने पीछा किया और जीने पर जाकर पकड़ लिया। मसखरा दुबला-पतला आदमी, तोले-तोले भर के हाथ-पाँव, लड़ने-भिड़ने से उसे क्या सरोकारी, पकड़े गये। पहिले तो मुंशीजी के दमाद ने उनकी खूब ठुकाई की. फिर बाहर ले गया। बरकन्दाज को बुलाया और गिरफ्तार करा दिया। दरवाजे पर भीड़ लग गयी। जितने मुंह उतनी बातें—भई, चोर की-सी सूरत नहीं है। "यार,सूरत पर न जाओ। चोर नहीं तो क्या साह है"" "हम समझ गये, आशनाई का मामला है। भाई साहब खुदावंद औरत से पाला न डाले।" जितने मुँह उतनी बातें।

मसखरे की इतनी पिटाई हुई थी कि उस बेचारे का दिल ही जानता होगा; मगर कहर दरवेश बर जान दरवेश। इतने में मुंशी महाराजबली गिरते-पड़ते, कोसते, गालियाँ देते हुए तशरीफ लाये। भीड़ और पुलिस को देखकर उल्टे पाँव लौटे और दूसरे रास्ते से मकान को गये। जब कपड़े उतारने लगे तो बीवी ने टोका और बाहर जाकर चोर को पकड़वा देने का इसरार किया। मगर टस-से-मस न हुए। होते भी कैसे, भेजा भी तो खुद ही था। बहुत कहने-सुनने पर बाहर गये तो उल्टे मुहल्लेवालों और सिपाहियों पर ही बिगड़ पड़े। हरगिज़ नहीं, हो नहीं सकता, बिलकुल गैरमुमकिन है। मालूम होता है,

मुहल्लेवालों को इस पीर मर्द (वयोवृद्ध) से अदावत है, और सब ने मिलकर इस पर मुकद्दमा कायम कर दिया है, और हम हरगिज इसका इजाजत देने नहीं सकता। काहे वास्ते को तुम लोग बोलो ?

पुलिस के सिपाही ने बार-बार यह कहा--आप यह क्या अन्धेर करते हैं ? यह साफ़ आपके मकान में पकड़ा गया, आपके दामाद ने इसको गिरफ्तार किया। यह चोर है, इस पर रहम करना कैसा ?

मगर मुंशीजी ने एक न सुनी और मसखरे को छुड़वा दिया। जब अन्दर गये तो मुंशीजी और उनकी बीवी में जूता चला—यहाँ तक कि रोने-पीटने और कोसने तक की नौबत पहुँच गयी।

[३१]

लखनऊ नवाबों में

एक रोज बी कुमरिन दो घड़ी दिन रहे तभी से खूब निखर-कर महताबी पर इठला रही थीं और बूढ़ी मुगलानी उनको बतला रही थी कि देखिये हुजूर, वह मोती महल की इमारत का बुर्ज नजर आता है। वह सामने नाक की सीध पर दरिया लहराता है, वह बादशाह बाग की दीवार है; वह इमामबाड़ा है। हुजूर शहर की हर गली उस जमाने में बहिश्त को शर्मिन्दा करती थी; और सरकार का कैसर बाग तो सचमुच परिस्तान था। अहा ! क्या समाँ था, हुजूर ! दो घड़ी दिन रहे हजार-बारह सौ परियाँ बनाव-चुनाव करके कमरों पर खड़ी रहती थीं कि जहाँ-पनाह की सवारी मिस्ल बादे बहारी उधर से निकले तो नज्जाराबाजी हो। जिधर से बग्घी निकल गयी, आवाजें आने

लगीं—जान-आलम, हम भी आयें ? सुल्तान आलम, हम भी आयें ? कोई बेबाक चुस्त वो चालाक आँखें लड़ाने लगी, कोई जहाँपनाह को देखकर मुसकराने लगी। हर परी पैकर (अप्सरा) की एक नयी ही अदा थी। किसी ने सवारी के पास आते ही जरा मुँह फेर लिया, किसी ने चमककर आधा पट भेड़ दिया। और जब जान आलम कन्हैया बनकर पत्तों में छिपते थे और वे परियाँ इधर-उधर ढूँढ़ती थीं तो (आह भरकर) हाय ! वह दिन अब कहाँ ? जान आलम को ढूँढ़ने निकलीं और जिस खुशनसीब को तहखाने-वहखाने में मिल गये, बस उसकी रत्ती बुलन्द हो गयी। हाथापाई होने लगी। एक लङ्का भी बनवायी थी। वह अब तक मौजूद है। हुजूर, जिन दिनों में वहाँ मेले होते थे क्या अर्ज करूँ कि क्या रंग और क्या आलम था। परिस्तान की हकीकत क्या है ? ऐ तोबा ! असल परिस्तान तो यही था। इन्दर का अखाड़ा कर दिया था। हर फाटक पर हुजूर बिरंजी (पीतल) तोपें लगी रहती थीं और हब्शियों का रिसाला और अख्तरी पलटन व कन्दहारियों का रिसाला। मैं क्या अर्ज करूँ ? क्या कोई शहर इसकी टक्कर का था उस जमाने में। ऐ तोबा। अब गो वह गया है मगर वही मसल है कि हाथी लटेगा तो कहाँ तक लटेगा। सितारे जो लोग चुनते थे कैसर बाग में बस यह समझ लीजिए कि फीलनशीन (हाथीवाले) हो गये। गंज तथा मुहल्ले और कटरे आबाद कर लिये। जो एक दफा आया—बस पारस की खासियत थी पारस की। मैं क्या अर्ज करूँ वह और ही जमाना था। अब कैसर बाग में कुत्ते लोटते हैं। जब कभी दरबार-वरबार के लिए कुछ ताल्लुकेदार आ गये तो जरा चहल-पहल हो गयी और वह भी क्या ? उफ़, क्या धमा-चौकड़ी मचा करती थी। एक पूरी पलटन-की-पलटन तो इन दौलाओं ही की थी। जरा खुश हुए और दौला

का खिताब दे दिया। अब वह बात कहाँ? अफ़सोस! जांबख्शी हो तो एक बात अर्ज करूँ, हुजूर! अगर किसी बादशाह या वजीर की आँख उस जमाने में हुजूर पर पड़ती तो बेशक आप भी किसी महल के नाम से मशहूर हो जातीं। दुश्मनों की आँखों में खाक, वह शक्ल-सूरत पायी है हुजूर ने। 'चन्दे आफताब चन्दे माहताब।'

कुमरिन—ऐ, यह मेरी तारीफें हो रही हैं। उई। ऐ बी मुगलानी, इस शहर का नाम लखनऊ है या नखलऊ।

मुगलानी—लखनऊ, हुजूर। नखलऊ तो गँवार लोग कहा करते हैं।

कुमरिन—अच्छा, यह सामने बाग कौन-सा है। इसमें झूला झूलें तो कैसा मजा आये!

मुगलानी—ऐ हुजूर, किसी जमाने में इस बाग के मालिक बड़े दौलतमन्द थे; मगर जमाने के इन्कलाब से अब उनके वारिस तबाह-हाल और परेशान-रोजगार हो गये हैं। इस बाग के बीच एक झील है। यह झील शाही में बड़ी मशहूर थी और खुद जहाँपनाह बजरे पर सवार होकर और किसी खूबरू बेगम को साथ बिठाकर इसमें हवा खाया करते थे। उस जमाने में इस झील का पानी इतना साफ था कि अगर सुई भी उसकी तह पर होती तो साफ दिखायी देती। मगर अब उसमें खेती है। उसके आगे एक टीला था—बिलकुल पहाड़ी के तर्ज का। उस जमाने में महीने में एक बार खानदानशाही की यहाँ दावत हुआ करती थी और जिल्ल सुभानी खुद तशरीफ लाया करते थे। कुल बेगमात और कुल महल-शाहजादियाँ व शाहजादे जमा होते थे और बड़ी चहल-पहल रहती थी। अब वहाँ भठी है और शहर भर की शराब वहीं खींची जाती है। पहिले इत्र और अम्बर की खुशबू दूर तक महकती थी और अब दूर ही

से महुए तथा देशी शराब की बू आती है। बाग के उत्तर की ओर जो बड़ा मैदान है, शाही में तीन महीने बराबर इसमें मेला होता था। हर जुम्मा और जुमेरात को मेला जमता था और शहर भर की साकिनें और तवायफ और रक्कासा और हसीन बनाव-चुनाव करके आती थीं। जिस शामियाने में जाइये परीछम साकिन बैठी चिलमें पिला रही हैं। तमाशबीनों के ठट्ठ-के-ठट्ठ लगे हुए हैं। बीबी साकिन दूयों की खैर रहे।' खास तौर से अच्छे मियाँ नाम की एक गोरी-गोरी साकिन की दूकान पर तो वह भीड़ रहती थी और इस कदर धक्कमधक्का होता था कि खुदा की पनाह। आधा शहर इस पर जान देता था। उसने अपने शामियाने के पास एक तख्ती लटका रखी थी और उस पर यह लिखाया था—

हर घड़ी सरशार रहती हूँ, बड़ी बेबाक हूँ।
साकिनों में मैं अमीनाबाद भर की नाक हूँ॥

चौकियों पर तम्बोलिनें सिंगार करके बैठती थीं। उन पर भी आलम था। बी तम्बोलिन की यह कैफ़ियत कि गरूर हुस्न से किसी तरफ आँख भर कर नहीं देखती। अब्रू के इशारे से बात करती हैं। पेड़ों में जा बजा झूले पड़े रहते थे: बिगड़े दिल जिन पर दिन भर झूला करते थे। आका भाई इधर-उधर अकड़ते फिरते थे—हर वक्त इसी फिक्र में कि किसी से लड़ाई हो। हर मेले में तलवार दो-एक जगह जरूर खिंचती थी। जरा-सी बात हुई और म्यान से दो अङ्गुल बाहर। दो-एक के खून ज़रूर होते थे। अब इस बाग में अगले वक्त की निशानी और यादगार सिर्फ बन्दर-ही-बन्दर रह गये हैं। और यह हाल उस मुकाम का है जहाँ जहाँपनाह और बादशाह बेगम अख्तर चाँदनी रात में हाथ-में-हाथ देकर टहला करते थे और खवासें जर्क-बर्क लिबास पहनकर बड़े ठस्से से खासदान लिये खड़ी

रहा करती थीं। अतर और फूलों के गहनों में बसी हुई। बड़ी दूर तक खुशबू आती थी। और आज जमाने के इन्कलाब से चौतरफा सन्नाटा पड़ा हुआ है, हू का आलम है।

[३२]

नवाब मुहम्मद अस्करी का दरबार

नवाब साहब पेचवान पी रहे हैं। और मुसाहिबों की सोहबत गरम है कि इतने में मुंशी महाराजबली साहब तशरीफ लाये। आते ही बोले—अरे यारो, कुछ और भी सुना भई, वल्लाह। मेहरबान, मैं नाजो के फिराक में कल बेकल था।

नवाब—ऐ सुभान अल्लाह, कल बेकल था। क्या खूब !

आगा—वाह वा भई, वाह वा। क्या उपज कर ली है !

मम्मन—हुजूर बड़े लतीफा-गो हैं।

मुंशीजी—(बहुत अकड़कर) भई, मैं कहीं पर नहीं चूकता। वल्लाह कहीं नहीं चूकता। कल का जिक्र सुनिये। हमारी जोरू साहबा ने हम पर एक फब्ती कसी। कहने लगीं—अब तुम कौंखकर उठते हो। बूढ़े हो गये। वल्लाह मैंने भी बरजस्ता (तुरन्त) जवाब दिया कि तुम भी तो अब हमारी अम्मांजान की साथी हो गयीं। तुम भी तो बच्चा-कश हो और हमारे मुहल्ले में एक कुतिया रहती है, बर्फी इसका नाम है और अब वह बुढ़िया हो गयी है। मगर कोई पचास पिल्ले जन चुकी है। मैंने कहा—तुम भी अब बर्फी हो गयी हो।

नवाब—भई, क्या कही है वल्लाह (कहकहा लगा कर)।

मम्मन—हुजूर, इससे बढ़कर और कोई क्या कहेगा ?

मुंशीजी—भई वल्लाह है, मेरी बीवी की यह कैफियत थी कि झेंप गयीं। और लतीफा सुनिये, उनका नाम इमरता है। इमरती और इमरता के लिए बर्फी कितना मौंजूँ लफ्ज था।

नवाब—(कहकहा लगाकर) मार डाला जालिम, ओफ हो।

अख्तर—हुजूर, बी इमरता की रिवायत ने मुंशी महाराज-बली को नुक्ल महफिल बना दिया।

नवाब—क्या खूब, इमरता के लिए नुक्ल-महफिल सुभान अल्लाह। मगर क्या फब्ता कसी है—बर्फी और इमरता।

आगा—भई नवाब, तुम्हारी सोहबत में इस कदर साफ-गो कोई नहीं है वल्लाह। झूठ से सरोकार ही नहीं। ऐसे लोग कहाँ पैदा होते हैं?

मुंशीजी—भई, सुन तो लो उन्होंने क्या जवाब दिया। हमने जो कहा कि तुमतो अब दूसरी बर्फी हो, तो वह हँसकर क्या कहती हैं, तो तुम भी तो अब शेरा हो गये हो।

मम्मन—शेरा किसी कुत्ते का नाम है, क्यों हुजूर?

मुंशीजी—हाँ-हाँ, शेरा अन्धे कुत्ते का नाम है, कमर भी टूटी हुई है और बूढ़ा हो गया है।

नवाब—(हँसी से लोटकर) भई, हँसी के मारे बुरा हाल है। ओफ़! मार डाला जालिम।

अख्तर—भई, बड़ी लतीफा-गो मालूम होती हैं। क्या सूझी है वल्लाह।

मुंशीजी—(अकड़कर) भई, वह बरजस्ता कहती हैं। और बन्दे अली भी कहीं नहीं चूकते, वल्लाह कहीं नहीं। कहते हैं और हजारों में कहते हैं। जी वालिद बुजुर्गवार से भी नहीं चूकता था। एक दफा वालिद साहब ने कहा।

मम्मन—वालिद साहब भी क्या खूब माशाअल्लाह।

मुंशीजी—वालिद साहब एक हरामजादे—

नवाब—(हँसी से लोटकर) भई, अब हसी जब्त नहीं हो सकती। लाहौलवला कूवत। बाप साहब की क्या कही है और उस पर तुर्रा यह कि हरामजादे।

मुंशीजी—अब हम न कहेंगे, वल्लाह न कहेंगे।

नवाब—(हाथ जोड़कर) भई, खुदा के लिए कहो।

मुंशीजी—बाप साहब फरमाने लगे—अबे, तू बड़ा गधा है। बरजस्ता जवाब दिया कि हुजूर तो काँटों में घसीटते हैं। बड़े तो हुजूर हैं, बन्दा तो खुर्द (छोटा) है।

नवाब—भई वल्लाह क्या कही है, मानता हूँ।

मम्मन—हुजूर, खूब सूझी कि बड़े तो आप हैं। वह बड़े गधे यह छोटे गधे, वाह !

मुंशीजी—हमारे घर के लोगों को हमसे बड़ी मुहब्बत है, जनाब।

नवाब—या वहशत। इसका इस वक्त क्या जिक्र था ?

मम्मन—हुजूर, वह लतीफा वल्लाह कभी न भूलेगा। कहने लगे, अफीम क्या, चण्डू तक तो पीती नहीं हैं। ऐ लानत खुदा !

मुंशीजी—(बिगड़कर) अब हम यहाँ नहीं बैठेगा। काहे वास्ते यू सुअर लोग हमको छेड़ने माँगता है। यू ब्लडी फूल, यू सुअर लोग।

यार लोगों ने और भी उचका दिया और मुंशीजी ऊँट की तरह बलबलाने लगे। यारों को दिल्लगी हाथ आयी।

[३३]

शैतान के छप्पर की धूनी बहादुर

एक नौजवान खूबसूरत पारसी और एक बुजुर्गवार की बनारसी बाग में अचानक मुलाकात हो गयी। बातों के सिलसिले में

नौजवान पारसी ने कहा—हमारा नाम नौशेरवाँ जी है और हम एक थिएटर के मालिक हैं। हम इन्दर-सभा में पुखराज परी बनते हैं, बुलबुल बीमार बनते हैं और गुलबकावली में बकावली। इस वक्त हम यहाँ कर्नल मिटलू से मिलने आये हैं। उन्होंने यहीं आने का वादा किया था। आप हमारे थिएटर में क्यों नहीं आते?

बुजुर्गवार को तो आप पहचान गये होंगे? हमारे पुराने दोस्त मुंशी महाराजबली हैं। नौजवान की बातों से जनाब के दिमाग में यह समा गयी कि पुखराज परी बनना बड़ी इज्जत की बात है और साहब लोगों से जल्दी मुलाकात हो सकती है।

मुंशीजी—अच्छा, वहाँ कौन कपड़े पहनकर आना होगा? मुँड़ासा बाँधकर आयें या मन्दील?

पारसी—यह आपकी खुशी का बात है। जो मर्जी हो।

मुंशीजी—मगर क्या साहब लोगों को सलाम भी करना होगा? कहिये तो डाली-वाली भी लेते आयें? दो-चार रुपये में मेरा कुछ बनता-बिगड़ता नहीं है और साहब लोग खुश हो जायँगे। शायद राय साहब का खिताब दे दें या कोई, इलाका दे निकलें तो किबला उम्र-भर की रोटियाँ हो जायँ।

यह ऊल-जुलूल बातें सुनकर पारसी को यकीन हो गया कि यह कोई गोल-से आदमी हैं। कहाँ थिएटर और कहाँ डाली? मगर उसने भी उन पर खूब रंग चढ़ाया और यह जमा दिया कि डाली और नजर से साहब लोग जरूर खुश हो जायँगे।

मुंशीजी पारसी से रुखसत होकर घर गये। वहाँ से रुपये लेकर बाजार गये और डाली का सामान खरीदा। घर लौटकर बीवी से सीधी बात नहीं करते गोया उन्हें लखनऊ की गवर्नरी मिल गयी हो, या रूस की सल्तनत की सालाना आमदनी इनको मिलने लगी हो। बीवी के यह पूछने पर कि किसके लिए है,

आपने फरमाया—हत्ते पर न टोको जी। किसके लिए है। किसके लिए है। है किसके लिए? साहब लोगों के लिए है। राय बहादुर का खिताब लिया मैंने। अब नहीं छोड़ने का। अब छोड़नेवाले को कहता हूँ अपने हिसाब। दस-पाँच रुपये खर्च करके अगर राय बन जाऊँ तो क्या हर्ज है?

उनकी बीवी तो जानती थीं ही कि यह बौखल हैं, उल्लू की दुम फाख्ता, समझ गयी कि फिर वहशत कर ली। मुंशीजी ने खत बनवाया, हजामत घुटवाकर नहाये और नहाकर कपड़े बदले, अतर मला, चुगा पहिना, मुँड़ासा बाँधा और दो घड़ी दिन रहे नवाब मुहम्मद अस्करी के यहाँ गये। नौकर को पहिले लाल बाग, जहाँ थिएटर होने को था, भेज दिया।

नवाब साहब के दरबार में आये तो लोगों ने पहिले पहचाना नहीं। और मुंशी महाराजबली ह भई। यह चुगा और पगड़ी, जुब्बा और दस्तार, क्या माजरा है?

दूसरा बोला—हुजूर क्या खूब बने हैं, बहुरूप भरे तो ऐसा। वल्लाह उस जायसवाले बहुरूपिये को भी मात कर दिया है।

इतने में मसखरा आया और सबसे दुआसलाम हुई। नवाब साहब ने पूछा—इसे पहचानते हो?

ऐ वल्लाह, गुलाम ने नहीं पहचाना था। मगर हुजूर खूब बना है। यह कौन हैं, कौन? हुजूर, अब क्या मैं इतना भी नहीं समझता हूँ। यह भाँड़ है जो धुँधुवा की नकल बनता है। आज मामा घूमधाम बनकर आया है। इस लतीफे से तमाम लोग लोटने लगे। मुंशीजी नाक-भौं सिकोड़कर बोले आप सब साहब तो हमको पागल समझते हैं, और हम आपको पागल समझते हैं। और तुम लोगों के पागल होने में शक ही क्या है? आप लोग हमको हँसते हैं, खैर हँसते ही घर बसते हैं। मगर

बन्दा अब खिताब नहीं छोड़ता, चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय। लूँ और फिर लूँ।

नवाब—क्या भई, क्या? क्या कोई नया लतीफा है? जरा हम भी सुनें। यह खिताब कैसा?

मम्मन—कुछ उपज कर ली है, इसमें शक नहीं। क्या सरकार से खिताब मिलनेवाला है? क्यों जनाब मुंशी महाराजबली साहब, भई हमको न भूल जाना।

मुंशीजी—सरकार से न मिलेगा तो क्या आप देंगे? अच्छी कही। वल्लाह मानता हूँ।

नवाब—तो क्या सरकार से आपको खिताब मिलेगा? क्या खिताब तजवीज हुआ है?—नवाब महाराजबली खान बहादुर?

अख्तर—जी नहीं, खान वहादुर खान खान बहादुर।

मसखरा—मैं अर्ज करूँ, हुजूर? बली की जगह बल्ली कर दिया जाय। वल्लाह बल्ली से बड़ी कौन शै है? खिताब से मतलब इज्जत से है और बल्ली ऊँची शै होती है। बस, इससे बढ़कर और कौन खिताब होगा?

मम्मन—या यों कहिए—मुंशी महाराजबली शैतान के छप्पर की थूनी बहादुर।

सब लोग कहकहा मारकर हँस पड़े। इस पर मुंशीजी बिगड़ गये—काहे वास्ते तुम लोग काला सुअर बोलने माँगता इस माफ़क? काहे वास्ते तुम लोग समझता है कि सरकार हमको खिताब नहीं देने सकता यू ब्लडी फूल! हम आज के एक अठारे में हो जाना माँगता है। यह कोई बड़ा भारी काम नहीं है।

नवाब साहब ने ठण्डा किया तो फरमाने लगे—यार नवाब, तुम जो चाहो सो कहो; मगर ये बदमाश लोग जो कहते हैं, तो मैं बिगड़ जाता हूँ।

नवाब—भई, यहाँ इतने आदमी बैठे हैं, मगर जो जोबन मुंशी महाराजबली साहब पर है, वह किसी पर नहीं है।

मुंशीजी—(अकड़कर) भई, अब क्या मुझ कम्बख्त पर जोबन है। जोबन तो हम पर तब था जब हम पुखराज परी बनते थे, और अब वह उम्र कहाँ ? इस फिकरे से सब के सब दंग रह गये। जो लोग लेटे थे वे उठ बैठे। सब लगे पूछने—भई, क्या बनते थे ?

मुंशीजी—हम पुखराज परी बनते थे, पुखराज परी।

नवाब—पुखराज परी बनते थे ? क्या इन्दर-सभा के लौंडे भी रह चुके हैं आप ?

मम्मन—हुजूर, क्या सब्जी (भङ्ग) का एक लोटा ज्यादा चढ़ा लिया ? बस, चढ़ गयी कच्चे घड़े की ?

दारोगा—फिर क्या ? इसमें ताज्जुब क्या है ? अरे भई, फरिश्ते तो आसमान से उतरते नहीं। आदमी ही सब्ज परी भी बनते हैं और काले देव भी। इनको आप लोग क्यों इस कदर अहमक समझते हैं।

मुंशीजी—इतनों में एक समझदार आदमी है। काश्मीरी है न ? माशा अल्लाह, बड़ी समझ के आदमी हो।

मसखरा—अबे ! जा झाम को। चिकवे-मन्डी में तेरी तलाश हो रही है। नबी बख्श पूछता फिरता है कि चौधरी साहब किधर गये।

इस पर बड़ा फरमायशी कहकहा पड़ा और मारे हँसी के पेट में बल पड़-पड़ गये। मुंशीजी खिसियाने-से हो गये।

मुंशीजी—अब हम तुम्हारे यहाँ कभी नहीं आयेंगे। बड़ी नालायक सोहबत है। तुम-जैसे पाजियों के पास न बैठेंगे।

नवाब—(हँसकर) अरे यार, खफा क्यों होते हो ? हमको जो जी चाहे कह लो, बस।

मुंशीजी—यह आपही का सारा फ़िसाद है। आप मीठी छुरी हैं। आँख से इशारा कर दिया और ज़न से अलग।

नवाब—यह इन्दर सभा का खब्त कबसे है?

मुंशीजी—खब्त और मुझे? बजा इर्शाद हुआ।

इतने में नाजो जान तशरीफ लायीं। पहिले तो मुंशीजी को देखकर झिझकीं फिर पहचान गयीं। नवाब के इशारे पर नाजो ने जाकर मुंशीजी के एक चपत जमायी तो मुँड़ासा खिसक गया। नवाब ने कहा—लगा न रहने दे झगड़े को यार तू बाकी।

नाजो ने दूसरी चपत जमायी तो मुँड़ासा इधर-उधर जा रहा।

नाजो—यह आज मामा धूमधाम बनकर कहाँ जाते हो? खिजाब भी किया है, घुटवायी भी खूब है। एक लप्पड़ जो नाजो ने आहिस्ता से लगाया तो जनाब मुसकरा दिये।

मसखरा—अगर हम अभी कन्टाप रसीद करते तो आप कैसा बिगड़ते? अब कैसा गुटरगूँ कर रहे हैं।

मुंशीजी—(नाजो से—)

दिलोजान से मुझे भाती हैं अदाएँ तेरी।
पास ला चाँद-सा मुखड़ा ले लूँ बलाएँ तेरी॥

नवाब—आज तो इन्दर-सभा की धुन में डूबे हुए हैं। वाह महाराजबली, वाह।

मुंशीजी—हाय। दिले आशिक इस बात से हिल गया। तुझे हाय कम्बख्त क्या मिल गया? हमारे और नाजो की बातें थीं, तुम क्यों बीच में कूद पड़े?

नाजो—ले चलो, बताओ आज कहाँ जाते हो?

मुंशीजी—हम आज तमाशा देखने जाते हैं। अगर आप लोगों को चलना हो तो आप भी हमारे साथ चलें।

नवाब—भई, आज नहीं कल चलो। हम आज न जाने देंगे।

मुंशीजी—वाह, कल की एक ही कही। हम आज जरूर जायँगे।

नवाब—एक ही कही चाहे दो ही कही। इससे कुछ बहस नहीं। बन्दा आज आपको जाने न देगा चाहे लप्पा-डुग्गी हो जाय। आप बन्दे से करारे नहीं हैं।

मुंशीजी ने दूनकी हाँकी—हम बिनवटिये हैं और कुश्ती जानते हैं।

मसखरा—कुश्ती नहीं एक वह जानते हैं। घर की जुरुवा से तो बस चलता न होगा। हाथ पकड़ लेती होगी तो छुड़ाना मुश्किल हो जाता होगा। हुजूर, औरत क्या देवी है। इधर तो कहकहा पड़ा, उधर मुंशीजी बिगड़ खड़े हुए और पैंतरे बदलकर सैकड़ों गालियाँ उन्होंने दीं। क्रोध से थरथर काँपने लगे। नवाब ने खड़े होकर उनका हाथ पकड़ा और कहा—भई, अब हम इसे निकाल देंगे। मुंशीजी थोड़ी देर में ठण्ढे हुए।

मुंशीजी—अब आप सब लोगों को यकीन आ जायगा या नहीं कि हमारी बीवी भदभद और थलथल होगी, हालाँकि वह वल्लाह ऐसी नाज़नीन है जैसे वह गोरी-गोरी डोमनी जो परसों आयी थी।

नवाब—हम सुन चुके हैं जी, बहुत नाजुक है।

मुंशीजी—(हँसकर) भई, तुमने यह खबर कहाँ से पायी?

मसखरा—पैगाम आया था। इतना सुनना था कि मुंशीजी लाल-पीले होकर मसखरे को मारने दौड़े तो वह भागकर सड़क पर हो रहा। यह उसके पीछे दौड़े। मसखरा तो भला क्या मिलता, मगर मुंशीजी ने सीधे लाल बाग में, जहाँ तमाशा होता था, जाकर दम लिया। जान बची और लाखों पाये।

[३४]

मित्रों की दावत

'एक रोज झुटपुटे के वक्त नवाब साहब का दरबार गर्म था कि जनाब मुंशी महाराजबली तशरीफ लाये और फरमाया—परसों आप सभी साहबान गुलाम के गरीबखाने पर खाना खायें।

सब लोगों ने बड़ी खुशी से दावत कबूल कर ली।

नवाब—हाँ मुंशी साहब, यह तो फरमाइये कि खिलाइयेगा क्या ?

मुंशीजी—(आजिज़ी से) खिलायेंगे क्या—दाल दलिया, घास-फूस।

नवाब—(हँसकर) हजरत, दाल-दलिया तक तो खैरियत थी, मगर घास-फूस तो हुजूर खुद ही नोश फरमायें।

मुंशीजी—और सब चीजें तो अच्छी होंगी ही, मगर एक शै ऐसी खिलाऊँगा कि उम्र भर न भूलोगे।

आगा—वह क्या शै है ?

मुंशीजी—लुचई, आटे की लुचई। मोयन डालकर इसके अन्दर बेसन और पीठ भरते हैं।

आगा—पुलाव की क्या हकीकत है इसके सामने भला ?

नवाब—पुलाव भी कोई खाने में खाना है भला ?

मम्मन—लुचई के मुकाबले में मुर्ग पुलाव भी गर्द है।

मुंशीजी—(अकड़कर) परसों कुछ दूर नहीं, कल ही का दिन तो बीच में है। नये दाँत आ जायँ तो सही। तरकारियों में हम आपको परवल खिलायेंगे और झोलदार रसा। खीर खिलायेंगे। दूध में चावल डालकर खीर बनती है।

अख्तर—खीर बनती है, खूब सच है, बड़ी टेढ़ी खीर नहीं, मुहावरा है—बड़ी टेढ़ी खीर है।

मुंशीजी—और सागूदाने की खीर खिलायेंगे गिरी और चिरौंजी डालकर। शौकीन लोग जीरा भी गबड़ देते हैं।

मम्मन—ऐं! खीर में जीरा! और हरी मिर्चें क्यों छोड़ दी? ऐ लानत खुदा!

आगा—बिरयानी, कोरमा, कबाब, पुलाव पकवाओ तो एक बात है। अच्छा. हम मछली, कबाब या कोरमा इसी किस्म की कोई शै लेते आयेंगे।

मुंशीजो क्या मजाल है, हमारे यहाँ नहीं। हाँ, शराब लेते आओ तो क्या हर्ज है?

नवाब—ऐसी-तैसी आपकी। शराब की आधी दर्जन बोतलें मँगा रखना।

मुंशीजी—भला, एक बात तो सुनो। पानी में अगर केवड़ा हो तो कोई हर्ज तो नहीं है?

आगा—अरे कहीं ऐसा गजब न करना। केवड़ा हरगिज न हो।

अख्तर—हराम है। केवड़े के नाम से नफरत है। और बड़े नुकसान की शै है। भला, हम लोग छूते हैं हाथ से, तोबा।

मुंशीजी को यकीन हो गया कि केवड़ा इन लोगों में हराम है, वाह री अक्ल।

तीसरे दिन नवाब साहब ने मुसाहिबों के साथ मुंशीजी के मकान पर धावा कर दिया। मुंशीजी ने चार बोतलें ह्विस्की की मँगा रखी थीं। सबों ने खूब उड़ायीं, चारों बोतलें साफ कर दीं। मुंशीजी ने जो जरा-सी पी तो कच्चे घड़े की चढ़ गयी। चुल्लू में उल्लू। जनाने में गये कि देखें खाना पक गया या नहीं? जाकर बीवी से पूछा—अब क्या कसर है!

बीवी—यहू भूँ का लुकमा है। तुम जाओ यहाँ से, जब पक चुकी बुलाय लेब।

मुंशीजी—देखो, हँसी न होने पाये। हँसी हमार न होय पाई हाँ। जो हमार हँसी होई, तो तुम्हार हँसो होई, और जो तुम्हार हँसी होई तो हमार हँसी होई।

बीवी—अब तुमका तो तनिक-सी पीने से चढ़ जात है। तुम जाओ यहाँ से। हम न पकाउब।

मुंशीजी—(हाथ जोड़कर) मिनती करता हूँ। (गाकर) मिनती करत हूँ मैं चेरी तिहारी।

बीवी—(मुसकराकर) काहे का पी जात हो?

मुंशीजी—नहीं-नहीं। इस वक्त बदली है और ठण्ढी-ठण्ढी हवा चल रही है, मसखरी का जी चाहता है।

बीवी ने खुदा-खुदा करके बाहर निकाला तो बाहर जाकर दोस्तों से बोले यार! हम तो एक खराबी में फँसे हुए थे। बीवी हमारे कहने में नहीं हैं। लाख-लाख कहा जरा बन-सँवर के बैठो; भारी कपड़े पहिनो, वह निखार करो कि दुलहिन भी देखे तो शर्मा जाय। हम जरा अपने दो-एक दोस्तों को दिखायेंगे कि मनु कैसी हो। मगर वह एक नहीं सुनती। अब मैं इस फ़िक्र में हू कि अगर तुमलोगों को न दिखाऊँ, तो तुम अपने दिल में नाराज़ होगे और अगर दिखाता हूँ तो वह कहती हैं कि मैं डोली मँगाकर अपने मैके भाग जाऊँगी। वाल्लाह मैंने कोई हज़ार दफ़ा कहा होगा 'मिनती करत बार बार मैं चेरो तिहार' मगर नहीं मानतीं। भई, हमारी तो जान अज़ाब में है। तमाम दोस्त इनकी बेवक़ूफ़ी पर मारे हँसी के लोट-पोट हो गये।

नवाब—उफ़! अरे यार मार डाला! यह दिल्लगी भी याद रहेगी। मगर तुम-सा बेवकूफ़ ज़माने भर में न होगा।

आग़ा—(क़हक़हा लगाकर) मिनती करत बार-बार मैं चेरी तिहारी' कहने पर भी राज़ी न हुईं?

मुंशीजी—वल्लाह यह नाज-नखरे तो माँ-बाप के भी नहीं उठाये जाते। बड़े अफ़सोस की बात है।

मसख़रा—तो आप की बीवी आपकी वालदा शरीफ़ से भी बढ़ के हैं ? तो आप की नानी हुईं। फिर क़हक़हा पड़ा।

अख्तर—भई, यह उससे भी बढ़ के हुई।

मुंशीजी—(बिगड़कर) आपने क्या हमको मसख़रा या बेवकूफ़ मुक़र्रर किया है ? काहे वास्ते तुम लोग हम पर क़हक़हा ज़नी मारने माँगता। यू ब्लडी फ़ूल।

मम्मन—भई यह झगड़े तो पड़ें ऐसी-तैसी में। अब यह बताओ खाना कब मिलेगा ? यहाँ मारे भूख के दम निकला जाता है। यार अज़ीज, कुछ खाना लायेगा या नहीं ?

नवाब—मालूम होता है, इन्होंने कुछ पकवाया न था कि शायद लोग न आयें और दाम खराब जायँ। आदमी कंजूस तो है ही। अब हम लोग जब आ गये तो मैदा, घी और तरकारी मँगवायी। बड़ा उस्ताद है, वल्लाह।

मुंशीजी—भाई साहब, असलियत तो यही है, बन्दा झूठ क्यों बोले ? बन्देने सोचा कि मैं तो यहाँ तैयारी करूँ, चालिस-पचास के माथे जाऊँ और आप लोग न आयें तो चकमा का चकमा हुआ और सोख़्ती की सोख़्ती।

मम्मन—चालिस-पचास। यह चालिस-पचास काहे में ख़र्च हुए ?

मुंशीजी—कुछ तमीज़ भी है तुम्हें। छः रुपये का तो फ़क़त घी आया है, एक रुपये का दूध और दो रुपके का क़न्द सफ़ेद जी।

नवाब—तुम तो फ़ैयाज़ आदमी हो, मगर फ़िज़ूल-ख़र्च।

मुंशीजी—(अकड़कर) और तबाह काहे में हुआ हूँ, यार

अजीज। बन्दे के यहाँ बारह-चौदह आने महीने का सिर्फ़ घी ही खर्च होता है, क़िब्ला।

मसखरा—हुजूर, कहने से तो बुरा मानियेगा। किसी मरदूद ही को यक़ीन आता हो वल्लाह।

मुंशीजी— भई, छुट्टन साहब सिर की क़सम।

छुट्टन—बन्दे का सिर क्या कद्दू मुक़र्रर किया है आपने ? लोग हँस रहे थे, मगर मुंशीजी की समझ में न आया।

मुंशीजी—भाई साहब, एक बन्दाज़ादी, एक बन्दा, एक महरी, एक बारिन और एक बूढ़ा बिरहमन। बस, अल्लाह-अल्लाह खैर-सल्लाह।

छुट्टन—इतने ही आदमियों में बारह आने महीने का घी। दस,बीस भी नहीं।

मसखरा—आप तो खुद घी हैं। लाला रौग़न ज़र्द (घी)।

मुंशीजी—यह इस घी ही के खाने से तो हमारा नाम लाला रौग़न ज़र्द हो गया। और वालिद जनाब भी घी खाते थे और बड़े खुशखोर थे।

मसखरा—आपके वालिद जनाब घी खाते थे? हमने तो सुना कि उनको हज़म नहीं होता था। इस लतीफे को मुंशी महाराजबली न समझ सके। नवाब वग़ैरा ने बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोकी।

नवाब—और क्यों जनाब मुंशी महाराजबली साहब ! खाना पका कौन रहा है ? जौजा शरीफ़ा।

मुंशीजी—नहीं, बाबू पूरनचन्द के इन्तज़ाम में खाना पक रहा है। रसोइया पकाता है, वह बताते जाते हैं बड़े खुशखोर आदमी हैं और खाने का बड़ा शौक़ है। सुबह को दो तरह की दाल पकती है—अरहर की भी और चने की भी और शाम को

चार-चार सुराहियाँ पानी की भरी रहती हैं। बस, शौक़ की इन्तिहा है।

छुट्टन—अल्लाह, चार सुराहियाँ पानी की। भई, बड़े ही खुशखोर आदमी हैं।

मुंशीजी—एक ढोली पान की मँगवाते हैं और एक महीने भर में। और घर में फ़कत एक मियाँ, एक बीवी।

नवाब—अच्छा, मियाँ-बीवी महीने ही भर में एक ढोली चख जाते हैं तो सिर्फ़ खुशखोर ही नहीं बल्कि पानखोर भी हैं। मुंशीजी मज़ाक़ ज़रा भी न समझे।

मुंशीजी—अगर बदली हुई खिचड़ी खाने को जी चाहा तो दो तरह की खिचड़ियाँ पकवाते हैं। बाबू पूरनचन्द झोलदार रसा अपने हाथ से खूब पकाते हैं भाई साहब! लुचई और झोलदार रसा तथा तोरी (तोरई) तो वल्लाह ऐसी पकी हैगी कि वाह!

नवाब—पकी हैगी। वाह भई लाला रौग़न ज़र्द।

मम्मन—ऐ तो हुजूर! कोई शै तो लाइये या सिर्फ़ दिलासा देने के लिये यह बातें हैं। दो-एक तो लाओ यार! मुंशीजी ने बारिन को आवाज़ दी और कहा लुचई ले आ। थोड़ी-सी लाना। अरे सुना। बारिन दस लुचइयाँ ले कर आयी।

आगा—अरे बारिन लुचई तो लायी ज़रा सा झोलदार रसा भी तो लाओ जाके।

बारिन—बन त है। झोलदार रसा अभी नाहिं न बना है और बनी हौगी। लुचई लोगों ने खायी तो पसन्द की।

खुदा-खुदा करके मुंशीजी के यहाँ खाना तैयार हुआ और आप ले जाने के लिए भीतर बुलाये गये। आपने अन्दर जाकर रमाया, जनाबा तुमने वह खाना पकाया है कि खुशबू से गुड़हल का फूल खिल गया। जितने दोस्त हमारे पास आये हैं वे यह

खुशबू सूंघ के कहते हैं कि भई महाराजबली, जिस शख्स के हाथ के खाने में इतनी खुशबू आती हो उसकी जुल्फों में कहाँ तक खुशबू न आती होगी। यह सुनकर उनकी बीबी खुश हो गयीं। मैं बताऊँ, झोलदार रसा में जरा पानी और डाल दो और जो मीठी चीज़ें पकी हैं उनमें मिठास ज्यादा कर दो।

बीबी—अब तुम तो सिर्री हो। हमको अकल न बताव बहुत। अकल न सहूर, चले हैं वहाँ से झोलदार रसा में पानी डालो और खीर में सक्कर गवड़ो। तुम जाके खिलाव तो सब खुश हो जायें तो सही। आखिरकार मुंशीजी, बारिन और महरी टोकरियों में खाना रखकर बाहर ले गये। भूखे तो सब थे ही खाने पर टूट पड़े। लुचई वो सबको पसन्द आयीं, मगर झोलदार रसा किसी को पसन्द नहीं आया। लेकिन सब ने उसकी ऐसी तरीफें कीं कि मुंशीजी को यकीन हो गया कि झोलदार रसा के आगे मुर्ग पुलाव भी गर्द है। अकड़ने लगे। खाना खाने के बाद सबने गिलौरियाँ चखीं। नवाब साहब ने बारिन को बुलाकर कहा—देखो बारिन, घर में जाकर भाभी साहबा को हमारी तरफ से बन्दगी कहो और कहो हम आपके बड़े शुक्र-गुज़ार हुए कि आपने हमारे लिए इतना उम्दा खाना पकवाया। आपकी कौम में गोश्त कोई खाता नहीं, इससे आप भी मजबूर हैं। मगर जो कुछ आपकी कौम में खाते हैं वह आपने हमको खिलाया। खुदा करे आपके लड़का हो और मुंशी महाराजबली अक्ल सीख जायँ। इसके बाद नवाब साहब मय मुसाहिबों व दोस्तों के रुख़सत हो गये।

———

[३५]

महफिल यार दोस्त

इधर तो यह नाच रंग और खर-मस्तियाँ हो रही थीं, उधर और ही गुल खिला। नवाब अस्करी के एक दुश्मन नवाब बशीरुद्दौला ने कुमरिन के मियाँ किद्दरा को फाँसा और उसे इस बात पर राज़ी कर लिया कि वह कुमरिन के गुम हो जाने की रिपोर्ट पुलिस में कर दे और नवाब मुहम्मद अस्करी का नाम लिखा दे। नवाब साहब ने जो यह मामला सुना तो हाथों के तोते उड़ गये। एक तो वैसे ही बुज़दिल और कम-हिम्मत, दूसरे यार लोगों ने और भी चंग पर चढ़ाया। हाथ-पाँव फूल गये। सलाह हुई कि कल ही नैनीताल चल दिया जाय। आनन-फानन में सारा बन्दोबस्त हो गया और सारा समान स्टेशन भेज दिया गया। शाम को नवाब साहब और नवाब छुट्टन मुंशी महाराजबली के घर गये कि उनको साथ लेते हुए सीधे स्टेशन चले जायँ, क्योंकि ऐसा ही तै हुआ था। मुंशीजी के घर पहुँचे तो एकदम सन्नाटा, पुकारने पर कोई जवाब ही नहीं देता। नवाब साहब बड़े परेशान, मुंशीजी को छोड़कर जा नहीं सकते। सैकड़ों आवाजें दीं, कुण्डी खटखटायी, ढेले फेंके' तब कहीं मुंशीजी दो मंजिले की छत से बोले, यार अज़ीज, आज तो हम नहीं चल सकते। आप अगर आज ही जाना चाहें तो खुदा हाफिज़।

नवाब—ऐं, यह क्या वहशत है। आज ही तो चलने की बात थी।

मुंशीजी—होगी, पर आज तो हम किसी में हालत नहीं चल सकते।

छुट्टन—क्या किसी की तबीअत ख़राब है? खैर से यह क्या वहशत कर ली जनाब ने।

नवाब—आख़िर वजह क्या है।

मुंशीजी—आज हम नहीं चल सकते। आज पंचक है।

नवाब—क्या है? पंचक। लाहौलविलाक़ूवत। यह पंचक क्या बला है भाई।

छुट्टन—यह तो सौदाई है। जब अक्ल बँट रही थी तो जनाब मुंशीजी सो रहे थे।

मुंशीजी—जी बजा इर्शादा फरमाया। आप हमको बेवकूफ समझते हैं और हम आपको। मगर भाई जान, दोस्ती की हद तक है, कोई जान थोड़ा ही देना है।

नवाब—भई, यह जान देने का सवाल कहाँ से आया?

मुंशीजी—जी, आपसे अब कौन बहस करे? बन्दे की जान कोई फालतू नहीं है कि पंचक के दिन सफर करे।

छुट्टन—आप तो हैं किबला पूरे अहमक। चलिये वरना रेल निकल जायगी।

नवाब—भई, आज चलने में क्या एतराज़ है?

मुंशीजी—आज है पंचक। बड़ा मनहूस दिन है, जनाब! आज के दिन सफर पर निकले तो वापिस न आये। रेल लड़ जाय या न जाने क्या हो। बन्दा दरगुज़रा आजके जाने से। आधे घण्टे इसी तरह बहस होती रही। न मुंशीजी ने चलने की हामी भरी और न किवाड़ ही खुलवाये कि कहीं जबरदस्ती न पकड़ ले जायँ। आखिर अगले दिन चलने का तै हुआ और नवाब साहब मुंशीजी को साथ लिये बाग को चले गये। वहाँ दम-की-दम में महफ़िल जम गयी। यार दोस्त, मुसाहिब, हाली-मवाली, नाज़ो कुमरिन सब वहीं आ गये और दौर चलने लगा।

नाज़ो—मुंशीजी, हमारी जूठी शराब पियो।

मुंशीजी—किसी मलऊन को इसमें उज्र होगा।

आगा—और हमारी जूठी में उज्र है।

मुंशीजी—जरूर, तुम तो देवजाद और नाजो परीजाद हैं। जूठा खाइये मीठे के लालच।

मसखरा—ले फिर जूठी कलेजी भी खाइये किबला।

मुंशीजी—इस कस्साबवाले को कलेजी और गुर्दे ही की पड़ी रहती है और यह मालूम ही नहीं कि बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी। पर भेड़ के किसी रोज पछाड़ूँगा।

मसखरा—हुजूर कस्साबवाले मामले में तो गुलाम इनसे न जीत पायेगा। यह तो इनके घर में होती आयी है।

मुंशीजी—अबे जा, बुजदिले!

छुट्टन—इस वक्त तो बरस ही पड़े।

नवाब—और छींटा पड़ते ही बोलने लगे।

मुंशीजी—ज्यादह कहूँगा तो हैरान हो जाओगे।

नवाब—यह बेतुकी है भाई।

मुंशीजी—आपकी ऐसी-तैसी। बकरी के लिए रान न कहोगे। क्यों, कैसी हुई?

आगा—भई खूब हुई, हैरान की भी एक ही हुई।

कुमरिन—इत्ते बखत तो मुंशी महाराजबली ने खूब खूब सुनायी खरी खरी। ऐ राई-नौन उतरवा डालो, सच।

नवाब—भई चड्ढा गुलखैरू कोई बरजस्ता शैर कहो।

मसखरा—हुजूर, हम तो उन जबर्दस्त शायरों में हैं जो शैर के अंजर-पंजर ढीले कर देते हैं। और गुलाम इसको क्या करे हुजूर। असल तो यह है कि मुंशी महाराजबली साहब का नाम ऐसा खुड्ड है कि शैर में बैठता ही नहीं है। खैर सुनिये।

मशहूर जमाने में पोता है तेल और गिजा इसकी खलो है, जो महराजबली है।

चारों तरफ से वाह-वाह होनी लगी। नवाब साहब ने पीठ ठोंकी। इसी हुल्लड़बाजी में रात के दो बज गये और सब आराम करने के लिए उठ गये। सवेरे गजर दम नाज़ो और कुमरिन अपनी दादी से मिलने चली गयीं।

[३६]

डुकरिया पुरान

नाजो और कुमरिन ने कभी रेलगाड़ी काहे को देखी थी। गो बाहर निकलती थीं, मगर जाने-बूझे मुहल्लों के सिवा और कहीं जाने का मौका नहीं मिला था। मुहल्ले की दो-एक बूढ़ी खुप्पट औरतों ने और भी डरा दिया। एक बुढ़िया बोली, ऐ बेटा, तुम रेलगाड़ी पर कभी सवार न होना। इसका एतबार क्या। आये-दिन सुनते हैं कि रेलगाड़ी लड़ गयी और लखूखा आदमी मर गये और दब-दब के जान दी। ऐसी मुई सवारी क्या।

रहमानी—मेरा नवासा परसों ही अभी वहाँ से आया है। देखो जाने क्या कहते हैं, भला ही-सा नाम है। वहाँ छावनी में नौकर था। कहने लगा, रास्ते में रेल टूट गयी थी तो घोड़ा तुड़ाकर भाग गया और—

नाज़ो—क्या रेल में घोड़े भी जोते जाते हैं?

रहमानी—अल्ला जाने घोड़े जोते जाते हैं कि गधे। वही कहता था कि नाक में दम आ गया।

जमीलन—ऐ बुआ, लोग कहते हैं कि साहब लोग मुँह में गुटका रख लेते हैं और बस गाड़ी उड़ जाती है।

बुढ़िया—तो फिर बहिन जादू से जोर से चलती होगी। जभी तो कलकत्ते से नखलऊ कच्ची दो घड़ी में पहुँच जाती है।

नाजो—उई! दो घड़ी। कच्ची दो घड़ी में कलकत्ते से यहाँ तक आती है। तो क्या पर लगा के उड़ती है?

कुमरिन—पर लगा के भी तो बाजी जान कच्ची दो घड़ी में नहीं पहुँच सकती। करोरों हज़ारों कोस है।

नाजो—तो अम्मीजान, आदमी से इस पर बैठा क्योंकर जाता है। जो कहीं इक्का जरा तेज दौड़ाया या कमानीदार न हुआ तो पेट का पानी तक मुआ हिल जाता है। रेल क्या उड़न-खटोला है सचमुच का?

कुमरिन—हमारा तो कलेजा सुनने से दहला जाता है।

मुन्नी—ऐ, यह सब बातें हैं सुना करो बस। इंजन लगा होता है और पानी और हवा के जोर से गाड़ियाँ आप-ही-आप चलती हैं। घोड़े चाहे सौ हजार जोत दो वह यह जोर कहाँ से लायेंगे। और न दाना न घास, न कोचवान न मुआ सईस, न घसियारा।

रहमानी—तो क्या जादू के जोर से चलती हैगी? जब घोड़ा टट्टू क्या मानी मुआ गधा तक नहीं जोता जाता तो फिर जादू नहीं तो और क्या है।

जमीलन—नजरबंदी भी नहीं कह सकती। अगर ढीठबंदी हुई तो दो कोस चार कोस इन्तिहा पाँच कोस इससे ज्यादा और ढीठबन्दी भी नहीं हो सकती।

मुन्नी—न जादू का जोर है और न नज़रबन्दी का। हवा और पानी के जोर से इंजन चलता है और गाड़ियाँ उसमें लगा दी जाती हैं और लोहे की पटरियाँ बनी होती हैं, उन पर से लुढ़कती हुई जाती हैं।

बुढ़िया—तो मतलब यह है कि जोखिम तो नहीं है कुछ।

मुन्नी—ऐ नहीं चची। खचाखच आदमी भरे होते हैं। गाड़ियों में तिल रखने की जगह नहीं मिलती।

नाज़ो—अम्माँ, हम तो सवार होंगे ही। तुम आज चलके देख लो जिससे तुम्हें तसल्ली हो जाये।

[३७]

सफ़र नैनीताल

मुशी महाराजबली साहब की अक़्ल तो गुद्दी में थी ही और यार लोग आप जानिये रंगतबाज़ एक ही मुर्शिद। किसी ने उनको यह पट्टी पढ़ा दी कि नैनोताल में इस शिद्दत की सर्दी होतो है कि चार-चार लिहाफ़ ओढ़ते हैं और कलेजा तक काँपा जाता है। इतना सुनकर जनाब ने लखनऊ से ही सर्दी के कपड़े लाद लिये और मज़ा यह कि लोग उनको हँसते थे और यह उनको बेवक़ूफ़ समझते थे। गर्मी के दिन और दो गधों का बोझ लादे हुए। पसीनों का परनाला चलने लगा। बौखलाये हुए पंखिया हाथ में ढीलमढाल वज़ा से जो स्टेशन पर तशरीफ़ लाये तो मेला लग गया। चौतरफ़ से लोगों ने घेर लिया। और सितम पर सितम यह हुआ कि भीड़-भाड़ के सबब से पंखिया भी नहीं हिल सकती थी। क़रीब था कि कपड़े फाड़कर भाग जायँ। बौखलाये हुए वेटिंग रूम की तरफ़ दौड़ गये। वहाँ ज़रा सुस्ता कर स्टेशन-मास्टर के कमरे की तरफ़ चले। वहाँ भी लोगों ने पीछा किया तो बाहर चले गये। वहाँ बदमाशों ने तालियाँ बजायीं तो फिर स्टेशन में धँस पड़े। अभी रेल के छूटने में पूरे घण्टे भरकी देर थी, मगर आप स्टेशन पर मौजूद। या वहशत। ऐसे भी चूतिया कहीं देखे हैं आपने ?

थोड़ी देर में मुसाहिबों के साथ नवाब साहब तशरीफ़ लाये। मुंशीजी को पहिले तो किसी ने नहीं पहिचाना। नवाब साहब

की तरफ़ उनकी पीठ थी। अख्तर बोला—एँ, यह कौन जांगलू है? इस गरमी में आप दुशाला ओढ़कर आये हैं।

दूसरा मुसाहिब—हुजूर, हम को तो यह बहुरूपिया मालूम होता है। भला, इस मौसम में दुशाला लाद के कौन निकलेगा। इतने में मुंशीजी जो घूमे तो सबको उनकी शक्ल दीख गयी।

नवाब—अरे! यह तो हमारा ही जांगलू निकला भई। इस कम्बख्त को सूझी क्या?

मसखरा—हुजूर, आदमी में हवास ही हवास तो हैं।

नवाब—अबे, यह तुझको आज क्या हुआ है? इस वक्त मारे गरमी के बुरा हाल है, यूँही पसीने का परनाला छूट रहा है। जी चाहता है, कपड़े उतारकर फेंक दूँ और तुम ग़ज़ब खुदा का ज़रबफ़्त की चपकन और गुलबदन का पाजामा और दुशाला लाद के आये हो। आख़िर यह तुमको सूझी क्या।

मुंशीजी—ज़रा होश सँभालो—अभी दुनिया देखो। चले हैं नैनीताल के सफ़र को और शरबती का अंगरखा डाट के। खंगर न बन जाओ मारे सर्दी के तो सही।

नवाब—अरे, तो ज़ालिम अभी से नैनीताल आ गया? कुजा नैनीताल कुजा लखनऊ।

मसखरा—उल्लू मर गये, पट्ठे छोड़ गये।

आगा—अरे म्याँ! हाँ, यह क्या हिमाकत है? रास्ते ही से जो तुम सर्दी के कपड़े पहिनकर चले हो। यह खब्त है या कुछ और?

मसखरा—यह आपको आज मालूम हुआ कि मुंशी महाराजबली खब्ती हैं। जनाब यह तो पुश्तैनी खब्ती हैं।

नवाब—खुदा के लिए यह सामान वहशत उतारो। यह आख़िर लादे क्यों थे।

मुंशीजी—भई, हमसे लोगों ने यही कहा कि वहाँ सर्दी होती है लोग ठिठुर-ठिठुर जाते हैं।

नवाब—ला हौल वाला कूवत! लोगों ने आपसे कहा था कि वहाँ सर्दी होती है और आपने यहीं से गरम कपड़े पहिन लिये। लोगों के कहने से आप लखनऊ को नैनीताल समझ बैठे।

इतने में रेल आ गयी। नवाब साहब और मुंशी महाराज-बली फर्स्ट क्लास में जाकर बैठे। दो फीनसें दरजे के पास लगायी गयीं और बी कुमरिन और नाजो छम-छम करती उतरीं। स्टेशन पर लोग देखने लगे कि किसी अमीर के यहाँ की सवारियाँ हैं।

× × ×

नवाब साहब सवेरे तड़के ही बरेली पहुँचे और वहाँ से नैनीतालवाली रेल पकड़ी। रास्ते में ठण्डी हवा के जो झोंके आये तो जी खुश हो गया।

नाजो—अब पहाड़ यहाँ से भला कितनी दूर पर होंगे नवाब?

नवाब—बस अब कोई दो घण्टे में पहाड़ दिखायी देंगे।

मुंशीजी—देखें, कितने ऊँचे होते हैं और चढ़ते क्यों कर हैं?

नाजो—जीनों पर जिस तरह चढ़ते हैं उसी तरह जाते होंगे।

थोड़ी देर में पहाड़ दिखायी देने लगे—पहिले धुँधले-धुँधले फिर साफ दिखायी देने लगे। सभी मुसाहिब हैरत से पहाड़ को देखने लगे और बातें करते-कराते रेल काठगोदाम पहुँच गयी।

रेल पर पर्दा किया गया और कुमरिन और नाजो गंगा-जमुनी हवादार में सवार हुयीं। हवादार पर रंगीन-रंगीन हल्के-हल्के पर्दे चारों तरफ बड़ी खूबसूरती से लटकाये गये थे। गुलशनलेट को रँगवाकर उसमें विनत गोखरू लचका टाँककर मसहरी की तरह पर्दे लगा दिये गये थे। बाकी औरतें डाँड़ी पर बैठीं और नवाब साहब और मुसाहिब घोड़ों और ताँगों पर सवार हुए। इस तरह क़ाफ़िला नैनीताल को रवाना हुआ।

मुंशी महाराजबली डाँड़ी पर सवार हुए थे। जैसे-जैसे पहाड़ ऊँचे होते जाते थे, मुंशीजी का खौफ ज्यादा होता जाता था। इत्तफाक से उनके एक डाँड़ी वाले ने ठोकर खायी तो बस सितम हो गया। गुल मचाना शुरू किया "रोक लो रोक लो, बस उतार दो। उतार दो हमको। वेल, हमारे को अपना जान भारी नहीं है। जान है तो जहान है। जान-बूझकर जान देना चे मानी दारद।" और उतरकर भागे मगर फौरन ही पकड़े गये। लोगों ने उनको पकड़कर डाँड़ी में सवार किया और रस्सों से बाँध दिया मुंशीजी बच्चों की तरह रोने लगे। "हाय! मैं मरा। इस परदेश में मेरी जान मुफ्त में गयी। हाय मेरी अम्माँ! अब मैं क्या करूँ?"

नवाब—अरे यार, यह तो बिलकुल गौखा ही है। ला हौल वला कूवत। कुछ रंज होता है और कुछ हँसी आती है।

नाजो—इससे कोई बोलो नहीं।

मुंशीजी—हाँ, हमसे न बोलो कोई। (रोकर) हमसे कोई क्यों बोले! हम किसी से बोलते नहीं, तो कोई हमको क्यों छेड़े!

नवाब—रो दे, बनिया गुड़ देगा। हँस दे, बनिया छीन लेगा।

जब मुंशीजी बहुत रोये-पीटे तो कुमरिन ने तरस

खाकर उनको खुलवा दिया। मगर नवाब साहब ने चुपके से डाँड़ीवालों को सिखा दिया कि कन्धा बदलते वक्त जरा डाँड़ी को हिला दें। दो-तीन मिनट बाद कन्धा बदलते वक्त दो आदमियों ने डाँड़ी को ज़रा हिला दिया। डाँड़ी हिलते ही मुंशीजी डाँड़ी ही पर मुँह के बल गिर पड़े, किसी कद्र चोट भी आयी। पहले तो उन्होंने सबको खूब गालियाँ दीं, फिर अपनी टोपी उतार, कर दुहत्तड़ लगाना शुरू किया। मसखरे ने हाँक लगायी, "उस्ताद इसकी सनद नहीं। हम लगायें तो मालूम पड़े।" इसी तरह हँसते-बोलते, रोते-पीटते रानीबाग पहुँचे। रात चूँकि यहीं बितानी थी, इसलिए होटल में डेरा किया।

[३८]

नैनीताल की सैर

होटल में आराम करके शाम को तमाम काफिला पहाड़ की सैर को निकला। जब तक हमवार जमीन मिली सब लोग मजे-मजे से चला किये, जब चढ़ायी आयी तो चार-पाँच कदम चलना भी दूभर हो गया, पाँव लड़खड़ाने लगे और साँस फूल गया। ऐसा मालूम होने लगा कि अब गिरे, अब गिरे। उतरते-उतरते सूरज छिप गया और अँधेरा हो चला। हालाँकि अभी दूर की चीजें भी साफ दिखायी देती थीं, मगर मुंशीजी के होश उड़े हुए थे कि ऐसा न हो कि भेड़िये से मुठभेड़ हो जाय। भेड़िये से उनकी रूह फना होती थी। शेर से इतना नहीं डरते थे जितना भेड़िये से। बदहवास होकर कहा—भई, अब कदम बढ़ाये चलो, जंगल का रास्ता है, घर नहीं है।

नबाब—यह महाराजबलिया खुद भी डरता है और औरों को भी डराता है मलऊन।

मुंशीजी—तुम तो हो उजड्ड, जान को हथेली पर लिये हुए। बन्दा घर-बार से फालतू नहीं है। जानते हो कि जंगल है, जानवरों का घर है। अगर अभी कोई जंगली कुत्ता आ जाय तो गजब ही हो जाय।

मसखरा—ऐं, जंगली कुत्ते से जान निकलती है। हम तो समझे थे कि हाथी या शेर या गैंडे या अरने भैंसे का खौफ दिलायेंगे, मगर टाँय-टाँय फिस्! यह सारा खौफ भेड़िये का है।

मुंशीजी—(बहुत झिल्ला कर) उँह, क्या बकते हो जी? उसका नाम रात को नहीं लेते। एक इसका नाम और एक मामूँ का नाम जिसको रस्सी कहते हैं।

मसखरा—तो भेड़िये और साँप का नाम नहीं लेना चाहिए।

मुंशीजी—(सिर पीटकर) अरे नामाकूल! इनका नाम रात को लेने से यह दोनों आ जाते हैं। किन कम्बख्त उजड्डों के साथ मैं आया हूँ। हारी मानते हैं न जीती।

अभी यह बातें हो ही रही थीं कि इत्तफाक़ से भेड़िया वाकई निकल आया। जमलू ने गुल मचाकर कहा, "अरे भेड़िया!" भेड़िये की सूरत देखते ही मुंशीजी तो धम से गिर पड़े और इतना गुल मचाया कि कोस भर तक आवाज़ गयी होगी। नाज़ो ने काँपते हुए महरी को पकड़ लिया, कुमरिन नवाब साहब से लिपट गयी। मसख़रा भी काँपने लगा। सिपाही, आगा साहब और जमलू भेड़िये की तरफ़ दौड़े। जब भेड़िया भाग गया तब मुंशीजी को बहज़ार ख़राबी उठाया गया। यह जमीन पर लेटे हुए थर-थर काँप रहे थे और आँखें बन्द किये हुए गला फाड़-फाड़कर गुल मचाते थे। जिसने देखा हँसते-हँसते पेट में बल पड़-पड़ गये।

जब होटल के जीने पर पहुँचे तो मसख़रे ने गुल मचाकर

दफ़तन कहा, "अरे भेड़िया!" मुंशी महाराजबली बौखलाकर कमरे के अन्दर झपटने ही को थे कि किवाड़ से टकराकर गिर पड़े। बड़ा ही फरमायशी कहक़हा पड़ा। खानसामा दौड़ पड़े। मालूम हुआ कि दिल्लगी-ही-दिल्लगी थी। मुंशीजी कट गये, बहुत ही झेंपे, बड़े नादिम हुए। ऊपर यार लोगों ने बनाना और फ़िक़रे कसना शुरू किया।

अगले रोज सवेरे क़ाफ़िला फिर रवाना हुआ। पहले तो नवाब साहब का इरादा था कि सीधे नैनीताल जायँ, मगर रास्ते में एक खूबसूरत झरने के किनारे कुछ देर के लिए डेरा किया। पहाड़ों की बहार देखकर उनकी वही कैफ़ियत हुई जो काली गहरी बदली देखकर मोर की होती है। मियाँ जमलू ने लहरा-लहराकर गाना शुरू कर दिया। हुक्म हुआ कि यहाँ ठहरेंगे। सभी कुदरत की बहार पर अश-अश करने लगे। चारों तरफ़ आसमान को छूते हुए पहाड़ और उनकी गोद में एक छोटी-सी नदी का चक्कर खाते हुए जाना, निर्मल पानी की तह से पत्थरों का साफ़ नज़र आना—मन को लुभाये लेता था। झरना इतने ज़ोर से गिरता था कि कान पड़ी आवाज़ सुनायी नहीं देती थी और ऐसा साफ़ जैसे बगुले का पर। इससे ज्यादा सफ़ेद पानी इस क़ाफ़िले में किसी ने नहीं देखा था। फ़ौरन ही डेरे लगा दिये गये और रुकने का बन्दोबस्त हो गया।

कुछ शोर-सा सुनकर नवाब साहब तंबू से निकले तो देखा कि मुंशी महाराजबली साहब नाच रहे हैं। "ऐं, अरे म्याँ महाराजबली! अरे यह क्या ख़ब्त है? अबे! कुछ सिड़ी हो गया है? लोगों ने आड़ में जाकर इशारे से कहा कि हुजूर न बोलें, ज़रा दिल्लगी देखिये। नवाब साहब ने मम्मन को अलग बुलाकर पूछा, "यह क्या माजरा है? क्या पी गया है? यह इसे इस वक्त हुआ क्या है?"

सम्मन—इस पहाड़, झरने, हरियाली और चश्मे को देख-कर सब वन्द करते थे, मगर मुंशी महाराजबली सबसे ज्यादा करते थे। हमने बनाना शुरू किया कि भई, शायर मिज़ाज, रंगीन तबीयत, इश्कपरस्त आदमी हैं इनको सबसे ज्यादह लुत्फ़ हासिल हुआ ही चाहे। बस, इतना कहना था कि बनने लगे। मसख़रे ने उँगलियों पर नचाया। कहा, हम सुना करते थे कि लोग मारे ख़ुशी के टोपी उछालते हैं, मगर देखा नहीं। आपने फ़ौरन टोपी उछाल दी तो खड्ड में जा पड़ी। फिर मसख़रे ने कहा कि ईरान में लोग ख़ुशी से दीवाने होकर नाचने लगते हैं, बस, इतना सुनना था कि ख़ुद भी थिरकने लगे।

नवाब—अजीव बेवक़ूफ़ आदमी है। ला हौल वला क़ूवत।

× × ×

दूसरे दिन कूच करके काफ़िला नैनीताल पहुँचा और एक आलीशान कोठी में, जो कि पहिले से ही एक दोस्त की मार्फ़त ठीक करा ली गयी थी, सब जाकर टिके। कोठी को देखकर नबाब साहब बहुत ख़ुश हुए। मेज, कुर्सियाँ, क़ालीन, झाड़-फ़ानूस सजावट के सभी सामान मौजूद थे। खाना खाकर सब बरामदे में आ बैठे। चूँकि सफ़र से आये थे, इसलिए घूमना अगले दिन के लिए मुल्तवी कर दिया गया।

सवेरे जो उठे तो मूसलाधार मेंह बरस रहा था और यह मालूम होता था कि आसमान फटा पड़ता है। बादल और ऐसा मेंह उन्होंने पहले कभी काहे को देखा था। उस रोज तमाम दिन मेंह बरसा किया। अगले दिन जो सैर को निकले तो कोई तो झील के साफ़ मोती जैसे पानी को देखकर अश-अश करने लगा कोई बैण्ड बाजे की हृदयग्राही ध्वनि पर लोट-पोट हो गया, तो कोई ऊँचे-ऊँचे दरख़्तों को देखता-का-देखता रह गया। नैनीताल ने सभी को अपने दाम ख़ूबसूरती में फँसा लिया। दो-तीन हफ़्ते जो नवाब साहब ने उस मुक़ाम की सैर की और दो-चार पढ़े-लिखे

आदमियों से मिले और बातचीत की तो उनके बहुत-से ख्यालात बदल गये। लखनऊ की सोहबत और रहन-सहन से नफ़रत हो गयी। हवा खाने अक्सर इन्हीं लोगों के साथ जाने लगे। घण्टों उनसे सामाजिक और राजनैतिक मसलों पर बहस रहने लगी। इन शिक्षित आदमियों की सोहबत ने उनको थोड़े ही अर्से में जानवर से आदमी बना दिया। नवाब साहब अक्लमन्द नौजवान थे, मगर बुरी सोहबत ने उनको कहीं का न रक्खा था। यहाँ जो अच्छी सोहबत पायी और पढ़े-लिखे आदमियों का साथ हुआ और उनसे मुलाकात और बातचीत का मौका मिला, तो आँखें खुल गयीं। पढ़ने-लिखने, अखबार और किताबें पढ़ने का शौक हुआ।

शाम को तीन-चार घड़ी दिन रहे नाजो और कुमरिन पर्देदार हवादारों पर सवार हुईं। हवादार उठानेवाले जर्क-बर्क नयी-नयी वर्दियाँ पहिने हुए थे। हर हवादार के साथ चार-चार आदमी, एक-एक चंचल और चपल खुशपोश महरी और एक-एक खन्ना। एक सिपाही हरी-हरी बाँकी बत्ती बाँधे, हरे रंग के म्यान की तलवार लिये साथ था। जिस तरफ हवादार निकल जाते थे ठट्ठ-के-ठट्ठ लग जाते थे। यूरोपियन लेडियाँ और साहब हिन्दुस्तानी रईसों की शान-शौकत, उन नौकर-चाकरों की जर्क-बर्क पोशाक, जेवर और पर्दे की रस्म की निस्बत बातें करते थे और हिन्दुस्तानी कहते थे—मालूम होता है बेगमें आयी हैं, जभी इस ठस्से से हवा खाने निकली हैं। जिधर से सवारी गुजरी, सभी लोग तमाशा देखने लगे।

नाजो और कुमरिन ने यह सैर कभी पहले काहे को देखी थी। लान टैनिस का खेल देखकर बड़ी हैरत हुई कि मेमें और मिसें भी मर्दों के साथ खेल रही थीं। फिर पोलो का खेल

दिया। इसके बाद झील की सैर की, किश्तियों की दौड़ देखी। अँधेरा होने से पहले ही सवारी कोठी पहुँच गयी।

[३९]

बेगम की बेचैनी

जिस रात को नवाब नैनीताल गये नादिर-जहाँ बेगम बेचैन थीं। दिल-ही-दिल में दुआएँ माँगतीं थीं कि सकुशल वापिस आ जायँ; जिस तरह पीठ दिखायी है उसी तरह मुँह दिखायें। उनको नवाब साहब से मामूली से कहीं ज्यादा मुहब्बत थी। नबाब वायदा कर गये थे कि बरेली और काठगोदाम से तार भेजूँगा। बरेली में तो वक्त न मिला कि तार भेजते, लेकिन काठगोदाम से पहुँचने और नैनीताल रवाना होने का तार दिया। बेगम को रात को नींद नहीं आयी, जरा आँख नहीं झपकी। दिल बहलाने के लिए उन्होंने पचीसी खेली, गंजफा खेला, मगर हिर-फिरकर नवाब याद आते थे। दिल बेचैन था, क्योंकि यह पहली ही दफा थी कि नवाब साहब पहाड़ के सफर को गये थे और लोगों ने इनको डरा भी दिया था। खुदा से दुआ माँगती थी कि कहीं जल्द तार आये तो जान में जान आ जाय। सुबह के वक्त उनकी आँख जरा लग गयी तो सपना देखा कि नवाब साहब पहाड़ पर नाच देख रहे हैं और यह उनके साथ हैं। सबेरे उन्होंने सबको अपना स्वप्न बतलाया।

लाड़ो—हुजूर, अल्ला करे खैरसल्ला से पहुँच जायँ तो हम अबके जुम्मे को सयद जलाल का कोंडा करेंगे।

मुग़लानी—हुजूर, यह सब इस मुए मम्मन की शरारत है।

बेगम—मेरा बस चले तो मुए का कोरे उस्तरे से सर मुँड़वाऊँ।

मुग़लानी—यह मूँड़ी काटे तो अपनी अध्धी के फायदे के लिए रईसों की आबरू पर पानी फेर दें।

बेगम—अब तो कहीं नवाब का खत आये तो कलेजे में ठण्ढक पड़े।

मुग़लानी—अल्ला करे आज ही आये। रतजगा कीजियेगा पर हुज़ूर को खुद भी जाना चाहिए था।

इतने में दरबान ने महरी को आवाज़ दी कि तार आया है। लाड़ो ने हुक्म चलाया, "दारोग़ा मुहम्मद हुसेन से कहो तार को पढ़वायें।" दरबान ने बाहर से ही कहा, "पढ़वा चुके हैं। सरकार काठगोदाम पहुँच गये हैं।

तार आने से बेगम साहबा को तसल्ली हुई और अब फ़िक्र होने लगी कि खुद भी नैनीताल की सैर करें।

मगर दो ही चार रोज़ में बेगम को मालूम हो गया कि मुई चूड़ीवालियाँ साथ गयी हैं। अब तो वह ज़रा खटकीं, क्योंकि वह जानती थीं कि चूड़ीवाली हो या चमारिन दिल का आना बुरा है और कुमरिन जैसी छोकरी कि जवान मर्द की तो क्या चलायी औरत देखे तो आसक्त हो जाय। जब तक तार नहीं आया था उनकी तबीयत बहुत बेक़रार थी। उनको खटका था कि कहीं नवाब उसको घर डाल लें और एक सौत पैदा हो जाय। मगर तार आने से उनको तसल्ली हुई कि नवाब अभी हमको भूले नहीं हैं, अभी तक नवाब का दिल बे-काबू नहीं हो गया है। अब इस फ़िक्र में लगीं कि किसी तरह नैनीताल पहुँचें और नवाब को अपने वश में कर लें, ताकि उन छोकरियों का रंग न जमने पाये।

मुग़लानी उनकी चितवन से दिल का हाल ताड़ गयी। बोली—हुज़ूर, घबरायें नहीं, अल्लाह पर भरोसा रखें। जो इसी अठवारे में बुलावे का ख़त न आया तो कहियेगा। उन दोनों को तो हुज़ूर ज़री तबीयत बहलाने के लिए ले गये हैं। हुज़ूर तो जानती ही हैं कि हमारे शहर के रईस औरतों की सुहबत के बिन दम-भर भी चैन से नहीं रह सकते। हुज़ूर को बे-बन्दोबस्त किये हुए पहाड़ पर ले जाना क्या दिल्लगी थी। हाँ अब गये हैं, देखेंगे-भालेंगे, मकान अच्छा-सा देख के लेंगे तो ज़रूर-ज़रूर बुलवायेंगे। भला नाज़ो और क़ुमरिन बाजारी औरतें क्या जानें कि सलीक़ा और शहूर किस चिड़िया का नाम है। क्या नवाब साहब की तबीयत उनसे बहल सकती है?

बेगम—हाँ, इस क़दर तो हमारा दिल भी गवाही देता है कि अगर हमको नबाव ने पहाड़ पर बुलाया तो हमारी बे-कद्री करने की उनको जुर्रत न होगी। और इस मुई की तो क्या मजाल कि हमारे सामने ज़बान खोल सके। वहीं पर जीते-जी चुनवा दूँ। मगर नवाब का दिल उस पर आ गया, इससे हम भी लाचार हैं।

लाड़ो—देख लीजियेगा बेगम साहबा, ये निगोड़ियाँ इस तरह से नवाब के महल से निकाली जायँगी जैसे दूध से मक्खी। और उनके मियाँ भी उनको अब न ले जायँगे। अमीनाबाद में बैठेंगी कमरा लेकर।

मुग़लानी—अहा! ख़ूब याद आया, लो मैं तो भूल ही गयी थी। कल रात हमने एक ख्वाब देखा था कि एक बड़ा-सा मैदान है। उसके चौगिर्द दरख़्त लगे हुए हैं—हरे-हरे और ऊँचे-ऊँचे दरख़्त आसमान से बातें करते हुए। सामने एक तालाब है, मुँहामुँह पानी भरा हुआ, लाल-लाल मछलियाँ उसके भीतर तैरती हैं। और हुज़ूर झूला झूल रही हैं और एक मर्द झुला रहा है

और दो-तीन औरतें गाती जाती हैं। इतने में झूला झुलानेवाले ने कहा कि हुजूर इत्ती देर के झूला झुलाने में तो हमने अमीरों से लखूखा रुपए लिये हैं, हुजूर से तो बहुत कुछ उम्मेदवारी है। मैंने उसको समझाया कि तू घबराता काहे को है, सरकार तुमको खुश कर देंगी। इस पर उसने कहा कि अगर हमको खुश कर देंगी तो हम तुम्हारी सरकार को भी ऊँची-ऊँची ज़मीन दिखायेंगे। अब इसके बाद का हाल मुझे याद नहीं, सिर्फ़ इत्ता याद है कि फिर हुज़ूर तो उतर गयीं और वह जो पेंगें लेने लगे तो हमने देखा कि उनमें और आसमान में बस थोड़ी ही-सी कसर थी। एक बार आसमान को उस अल्लाह के बन्दे ने छू ही तो लिया। आसमान में छेद हो गया और मेंह बरसने लगा तो हम सब भागे और आँख खुल गयी।

बेगम—फिर इस ख्वाब का हाल किसी मौलवी से दरयाफ़्त करो।

लाड़ो जाकर एक मौलवी साहब को बुला लायी और रास्ते-भर में उनको पट्टी पढ़ाती आयी। मौलवी साहब पर्दे के उस तरफ बैठे, ख्वाब का पूरा हाल सुना और कुछ देर सोचकर चहकने लगे—वह बड़ा-सा मैदान पहाड़ से मुराद है और दरख्त उन दरख्तों से मतलब है जो पहाड़ के इर्द-गिर्द होते हैं। तालाब उस झील से मतलब है, जो नैनीताल के बीच में है (नैनीताल का नाम सुनकर बेगम साहब की बाछें खिल गयीं, मुग़लानी की तरफ़ देखकर मुस्करायीं।) और झूला जो आपको झुलाते थे वह नवाब साहब बहादुर हैं। इसके यह मानी कि वह आपको दिल जान से अजीज रखते हैं। झूला झुलाने के मानी ख्वाब में यही हुआ करते हैं कि जो जिसको झूला झुलाये, वह उस पर आशिक है। गानेवाली औरतें पेशख्दिमतें थीं। आसमान पहाड़ से मुराद है और उन्होंने आसमान को छू लिया,

इसके मानी यह कि जो उन्नति इन्सान को दुनिया में हासिल हो सकती है, वह उनको हासिल होगी। मेंह बरसना ऐन अलामत रहमत खुदा है। और ऊँची ज़मीन दिखायेंगे इसके यह मानी कि नवाब साहब हुज़ूर को जल्द पहाड़ पर बुलायेंगे।

मुग़लानी—खुदा करे यह पेशीनगोई ठीक उतरे, मौलवी साहब!

लाड़ो—आमीन, ज़रूर करके ठीक उतरेगी बुआ। इनका कहना कभी बेकार नहीं जाता। जो जिसको कह दिया वही हुआ।

मुग़लानी—ख्वाब में रोना कैसा मौलवी साहब?

मौलवी—इसमें कई राज़ हैं। जो हाथी को ख्वाब में देखे तो बुरा और देख कर रोये तो और भी बुरा।

लाड़ो—अच्छा, हाथी को देखकर के रोये क्यों? और जो न रोये?

मौलवी—न रोये तो कुछ हर्ज नहीं, मगर हाथी का ख्वाब में देखना बुरा ही लिखा है। हाँ, अगर हाथी सूँड़ से खेले तो न बुरा न अच्छा। और जो हाथी पीछे दौड़े तो बस गये-गुज़रे, फ़ौरन मर जाय। आदमी बच ही नहीं सकता।

बेगम साहबा ने जो उनकी तक़रीर सुनी तो समझीं कि बड़ा वाक़िफ़कार आदमी है। लाड़ो को पास बुलाकर चुपके से पूछा—इनको क्या दिया जाय?

उसने कहा—हुज़ूर, ग़रीब-ग़ुरबा के घर जाते हैं तो आना, दो आना, चार आना पाते हैं और अमीरों-रईसों के घर जो जिसने दिया ले लिया। किसी से ज़बर्दस्ती नहीं करते, लड़ते-झगड़ते नहीं।

बेगम साहबा ने हुक्म दिया कि पाँच रुपये नक़द दे दो। मौलवी साहब तो पाँच रुपये खनखनाते हुए घर गये। यहाँ

बेगम साहबा मुग़लानी और लाड़ो महरी में मौलवी साहब की तारीफ़ें होने लगीं कि इतने में नवाब साहब का ख़त आया। ख़त में उनको बुलाने का ज़िक्र था। बेगम ख़ुश होकर कहने लगीं, "मौलवी का कहना तो बहुत सच निकला, मुग़लानी!"

[४०]

झील की सैर

एक रोज खिलाफ़ कायदा मुंशी महाराजबली तड़के ही उठ बैठे और गुल मचाकर सबको उठा दिया। बाहर आकर जो झील का नज़्ज़ारा देखा तो दिल बाग़-बाग़ हो गया। कुमरिन इस नज़्ज़ारे पर लोट हो गयी; कहा—नवाब, भला लखनऊ में यह सुहाना समाँ कहाँ नसीब हो सकता था। नन्हीं-नन्हीं फुहारें और भी मज़ा दे रही हैं।

नाज़ो—ज़री झील को तो देखो। नन्हीं-नन्हीं बुँदियाँ किस मज़े से पानी में पड़ती हैं कि वाह वा! दरख़्तों के हरे-हरे पत्ते कैसे भले मालूम देते हैं। यही मालूम होता है कि दुलहिनों को हरा लिबास पहिना दिया है। और पहाड़ों पर बादल कैसे दल-बादल जमा हैं, धुआँ-से नज़र आते हैं। और सर्दी किस क़दर ख़ुशगवार है।

मसख़रा—जी, जवानी के जोम, ब्रांडी की गरमी और शराब और शराब की मस्ती में सर्दी इस वक्त मज़ेदार मालूम होती है, लेकिन जो किसी रोज़ सर्दी और पहाड़ की बरसाती हवा असर कर गयी तो फ़िर दिल्लगी देखियेगा।

नाज़ो—होगा भी, सर्दी असर कर जायगी तो बला से। अब भूल कहाँ तक लादे-लादे फिरें। शलूका तो पहिने हैं दुहरा।

लिहाफ़ के अन्दर तो सर्दी के कपड़े पहिन के नहीं सोया जाता।

मुंशीजी (बनते हुए)—भई, यहाँ तो रात को लिहाफ़ भी बाज़े रोज़ नहीं ओढ़ा जाता।

मसखरा (जलकर)—जी हाँ, आपसे लिहाफ़ काहे को ओढ़ा जायगा। आप तो सींग कटाकर बछड़ों में दाख़िल हुए हैं। मगर ख़ुदा ने चाहा तो एक रोज़ फ़ालिज ज़रूर गिरेगा। लक़वा या फ़ालिज दोनों में से एक-न-एक बला ज़रूर नाज़िल होगी।

मुंशीजी—बला नाज़िल हो तुझ पर और तेरे तमाम कुनबे पर। बदमाश! काहे वास्ते यू ब्लडी फूल हमसे ऊल-फूल बकता हैगा।

नवाब—भई तुम इन बेचारों के पीछे क्यों पड़े रहते हो?

मसख़रा—हुज़ूर, मैं तो इनसे यूँही मज़ाक किया करता हूँ, वर्ना मैं क्या जानता नहीं कि इस शख़्स का बदन नरकचूर की लकड़ी का बना हुआ है। काबुल में जब यह फ़ौज के साथ गया था तो शरबती का महीन अँगरखा पहिने हुए था। यह बड़ा जर्री सिपाही है, .ख़ुदावन्द। लक़वा और फ़ालिज तो इसकी सूरत देखने से मंजिलों भागता है। इसको सर्दी क्या असर करेगी। बेहया है यह शख़्स।

मुंशीजी (अकड़कर)—भाई साहब, काबुल तो काबुल हमारा उजियालापन तो उस वक्त आप देखते जब हमने रंजीतसिंह के साथ-साथ झेलम में घोड़ा डाल दिया था और इस तरह हमारा घोड़ा पानी में जाता था कि मालूम होता था कि 'कभी डूबी कभी उछली मय नौ की किश्ती'। इस शोख़ी के साथ घोड़ा बल खाता हुआ जाता था कि दूर तक झेलम के पानी में तलातुम था और बन्दे दरगाह इस तरह रान पटरी जमाये अकड़े बैठे थे कि

गोया किसी ने मेख़ गाड़ दी है। रंजीतसिंह तक की उँगलियाँ उठने लगी थीं और दरिया का पाट उस वक्त इतना होगा जैसे यहाँ से काठगोदाम।

मसख़रा—बस इतना ही, भूलते हैं आप। काठगोदाम नहीं बल्कि जैसे यहाँ से बहराम घाट इतना पाट था।

नवाब—(मुस्कराकर)—तो यह कहिये, बड़े-बड़े मारके देखे हुए हैं आप। क्यों जी उस वक्त क्या हाल होगा?

मुंशीजी (बहुत अकड़कर)—हाल क्या था, दिल शेर था।

सम्मन—भला क्यों साहब, जो उस वक्त कहीं भेड़िया निकल आता तो हुज़ूर जरनैल साहब क्या करते?

नाज़ो (क़हक़हा लगाकर)—नानी ही मर जाती इनकी। ऐ मुआ, गप्प उड़ाता है। दरिया का पाट इतना बड़ा था जैसे यहाँ से काठगोदाम। तो दरिया काहे को समुन्दर था।

छुट्टन—यार महाराजबली, बी नाज़ो की नज़रों में आप जैसे कुछ जँचते नहीं, यह क्या सबब है? जहाँ आपने बहादुरी की ली कि इन्होंने बनाना शुरू किया।

मुंशीजी—अजी, हमारा हाल रन की ज़मीन में देखो।

नाज़ो—घर की पुटकी और बासी साग। मुआ डींगिया। बड़े सिपाही के वह बने हैं।

आग़ा—ऐ हटाओ भी इस क़िस्से को। बी कुमरिन, सच कहना क्या मुक़ाम है? भला ऐसी हवा लखनऊ में कभी ख्वाब में भी आती थी? लाख ख़स की टट्टी लगाओ और पंखा चल रहा हो और टट्टी बराबर छिड़की जाय तो भी यह मज़ा कहाँ। हवाएँ चल रही हैं, झील का पानी लहरें मार रहा है। खुदा की कुदरत साफ़ नज़र आती है।

इसी तरह खुशगप्पियाँ हो ही रही थीं कि बारिश होने लगी

और सब अन्दर जा बैठे। शाम को सैर को निकले तो रास्ते में एक बैरिस्टर साहब से मुलाकात हो गयी। उनको साथ लिये घर आये। तालीम और सैर व सफ़र के बारे में बात-चीत होने लगी। ऐसी बातें मम्मन अख़्तर जैसे लोगों को क्या पसन्द आतीं। नवाब भी फ़िकरेबाजी के आशिक थे, उकताने लगे। बैरिस्टर साहब को उखाड़ने के लिए फ़रमाया—और यार! इस वक्त तो नींद आती है। लोगों ने हाँ-में-हाँ मिलायी।

आगा—कल रात को सोये नहीं, नींद तो आया ही चाहे। सो रहिये, थोड़ी देर आराम कीजिये।

छुट्टन—हजार बार कहा कि भाई साहब कम से-कम छः घण्टे रोज सोया कीजिये। रात का जागना बड़ा बुरा होता है, मगर आप लोग मानते ही नहीं। बैरिस्टर साहब अक़्लमन्द आदमी थे, इशारा समझ गये। उठते हुए फ़रमाया—ऐ, अब आप आराम कीजिए, कल मुलाकात होगी। कल घुड़दौड़ में मिलेंगे। मगर रात को ज्यादा जागा न कीजिये। जब बैरिस्टर साहब रुखसत हो गये तो मुंशीजी ने कहा—यह कहाँ का झगड़ा लगाया है, नवाब?

मम्मन—हुजूर, अब क्या अर्ज करें?

आगा—इनकी मुलाक़ात को हम हज़ार ग़नीमत समझते हैं। गधे को आदमी यह लोग बनाते हैं। अक्सीर है इनकी सोहबत।

मसख़रा—तो जौनपुर के काज़ी तो इन्होंने बहुत-से बनाये होंगे?

मुंशीजी—खुदा करे नवाब साहब को भी जौनपुर का काज़ी बना दें, बस यही कसर है।

नवाब—मगर गुस्ताखी माफ़, आप में तो यह कसर भी नहीं रही। आप तो पैदायशी काज़ी हैं।

मुंशीजी—बुरा न माना करो भाई, हम लोग बड़े पहुँचे हुए अल्लाहवाले लोग हैं।

नवाब—फ़क़त दुम की कसर है।

नाज़ो—ऐ, यह मुआ है कौन, खुदाईख्वार गधे अस-वार? इनको घर में बैठने की जगह नहीं है, ऐसा मालूम होता है। ऐ हाँ, जब देखो मौजूद। और सब-के-सब साथ पलटन-की-पलटन ले के आन मौजूद हुए।

कुमरिन—नवाब ने मुँह लगाया है ना। मुँह लगायी डोमनी नाचे ताल-बेताल।

नाज़ो—और माचा तोड़ ऐसे कि बैठे तो जम गये। जब तक काई न लग लेगी तब तक उठने का नाम ही न लेंगे।

कुमरिन—अल्ला करे, दीमक लगे।

मुंशीजी—हमको भी इनका यहाँ आना बुरा मालूम होता है।

नवाब—आप ऐसे गधों को तो बुरा मालूम ही होगा। पढ़े-लिखे आदमियों की सोहबत से तो आपको नफ़रत हुआ ही चाहे। शोहदों की सोहबत में बैठनेवालों को भलेमानस का साथ हमेशा बुरा मालूम होता है। मुंशीजी उकताकर उठ के बरामदे में चले गये और कुमरिन को बुलाकर छुट्टन साहब और मम्मन वगैरा को ले के गंजफा खेलने लगे। उस रोज महफिल न जम सकी।

[४१]

मुसलमानों की हालत

यह ज़माना मुसलमानों और खासकर नौजवान मुसलमान रईसों के लिए बहुत ही बुरा था। गरीब मुसलमान के पास खाने को नहीं था, रोटी को मुँहताज। औसत दर्जे के लोग

सौदागिरी को कुफ्र और गुनाह समझते थे और अमीर अहले-इस्लाम ऐश इशरत औ सुस्ती-काहिली के हाथ ऐसे बिक गये थे कि उनसे तरक्की की उम्मेद रखना बेवकूफी थी। बाप-दादा, परदादा हराम-हलाल का रुपया छोड़ गये या वसीका मिलने लगा तो गुलछर्रे उड़ाने लगे। रुपये को बेकार लुटाने लगे और उल्लू-के-उल्लू अलग बने। 'गधों ने खेत खाया पाप न पुन्न।' और मजा यह कि जो जात शरीफ उनकी दौलत से मजा उड़ाते थे, वे ही उल्टा बेवकूफ बनाते थे और चारों तरफ कहते फिरते थे कि हम फलाँ शख्स को उल्लू बनाकर माल चीरते हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह यह थी कि उनकी तालीम बेकार होती थी। दूसरे अमीरों रईसों की सोहबत बहुत खराब होती थी। उनकी सोहबत में तमाम जमाने के काइयाँ ऐडीमार, जालिये जात शरीफ होत थे जिनका सिर्फ यह काम था कि आज एक रईस की सोहबत में हैं, कल वहाँ से निकाले गये, किसी और की सोहबत में बैठे। दस-पाँच रुपये तनख्वाह हो गयी, दस्तरख्वान पर खाना खाने लगे। इनको हमेशा यह फिक्र रहती थी कि किसी तरह रईस को धोखा देकर कुछ ऐंठे। शराबखोरी यह सिखाते थे, फाहशा औरतों को पेश करते थे, जूए में इनको दखल होता था, चण्डू पिलाना यह सिखाते थे, मदक का शौक यह दिलवाते थे। सब गुन पूरे तो कौन कहे लंडूरे। चालाक इतने कि कोई अगर इनसे पाँच उँगलियाँ मिलाता तो फिर पूरी पाँच उसके हाथ न लगतीं, एक आध को जरूर उड़ा लेते। इनका फेंका दाँव पट पड़ ही नहीं सकता था। ऐसे लोग रईसों पर चुटकियों में रँग चढ़ा देते थे। इनके हथकण्डों से बचना नामुमकिन था।

इनका तरीका यह था कि पहले रईस को टटोला कि कितने पानी में है, फिर उसकी खुशामद करनी शुरू की,

कभी हवा खाने साथ गये, बस काबू में कर लिया। जब तक उससे रुपया मिल सका, खूब दिल खोलकर उड़ाया, जब देखा कि घर से नहीं मिलता, बीवी का जेवर मँगवाया, उसको औने-पौने पर पटीला। सौ का माल, पचास पर उसके कौड़े किये, दस रईस के हाथ पर धरे, चालीस खुद उड़ाये। जब जेवर आना बन्द हुआ तो रईसजादे को इधर-उधर इस वादे पर कर्ज दिलवाने की कोशिश की कि जब इनके बाप मरेंगे तो अदा करेंगे। सौ लिये हजार का तमस्सुक लिखवा दिया, ऊपर से दस रुपया सैकड़ा सूद। या ऐसा किया कि किसी औरत से विवाह कर लिया और उसकी छोकरी रईसजादे को पेश कर दी। चलिये नौजवान रईस को फाँस लिया और निकाह पढ़वाकर लिखवा-पढ़वा लिया।

किसी को पतंगबाज़ी में ऐसा फँसाया कि उसी का हो रहा। अशर्फ़ी पेंच लड़ रहा है, खुशामद-खोरे शह दे रहे हैं कि "हुजूर, आज तमाम लखनऊ में नाम हो रहा है कि अशर्फ़ी-अशर्फ़ी पेंच फलाँ रईस लड़ रहा है।" दूसरा कहता, सरकार, मैदान लड़ाये तो ऐसा, मुल्कों-मुल्कों मशहूर हो गया।" रईसजादा है कि फूला नहीं समाता। मुसाहिबों से भला पूछता है, "क्यों जी, गोहरजान को भी खबर हो गयी है कि हमारे यहाँ अशर्फ़ी पेंच बद्बद्कर लड़ रहा है।" मुसाहिबों ने बढ़ावा दिया, "ऐ हुजूर, बस यह समझ लीजिये कि तमाम चौक के कमरे सूने पड़ रहते हैं। जितनी हैं छोटी और बड़ी, सब कोठों पर से हुजूर के मैदान की सैर देखती हैं।"

दूसरे फ़रमाने लगे 'ऐसा मैदान तो जरनैल साहब ने भी नहीं लड़ाया था। और हुजूर यही रह जाता है। रुपया-पैसा कोई छाती पर रख के तो ले नहीं जाता। पीरूमल ने सांगी धूम धाम से निकाली, आज तक नाम है।'' तीसरे बोले

"सैकड़ों रईस मर गये, मगर कोई नाम भी नहीं लेता, जानता भी नहीं कि कौन थे। मगर खुदा ने वह रियासत हुजूर के मिज़ाज में अता की है कि तारीफ़ करना मुहाल है।" चौथे बोले "और क्यों न हो, पोतड़ों के रईस हैं। यही बातें तो यादगार रह जाती हैं।" रईसज़ादा भरों में आ गया, चलिये चंगा हो गया।

मौका देखा तो चण्डूबाज़ी की लत लगा दी, तो और भी गये गुज़रे। रात-दिन औंधे पड़े चण्डू उड़ा रहे हैं। सुबह है तो, शाम है तो, सिवाय इस कम्बख्त चण्डू के और कोई शगल ही नहीं। मकान गन्दा, कपड़े मैले, हर वक्त लेम्प, तेल और अफ़ीम के सत का शगल है। बैठे तो उठा नहीं जाता, लेटे तो फिर बैठने की ताकत नहीं। सोहबत भी उन्हीं नीच कौम आदमियों की। बातें भी होती हैं तो वही जैसी चण्डूखाने में हुआ करती हैं जिनका सिर न पैर।

लखनऊ की हालत तो और भी तबाह थी। वहाँ के रईस और औसत दर्जे के मुसलमान तो सिर्फ औरतों के गौहर हुस्न के जौहरी बन गये थे। रोज़गार और धन्धे के लिए बस अल्लाह का नाम। रईस समझते थे कि सौदागिरी बनियों का काम है। रईस सौदागिरी नहीं कर सकता। रईस होकर काम करने में बेइज्जती और सुबकी होती है। चाहे फ़ाके करके सो रहे, मगर हाथ से कोई काम न करे। शौक़ किसका, बटेरबाज़ी का। इसका लखनऊवालों को बड़ा शौक़ है। बड़े नामी वसीकेदार हैं, सैकड़ों आदमियों की रोटियाँ उनकी बदौलत चलती हैं मगर बटेरबाज़ी पर जान देते हैं और पालियों में खुद बटेर लेकर पहुँचे हैं। इनका बटेर तमाम लखनऊ में मशहूर है। पाँच-पाँच सौ की बाज़ी बद-बद के लड़ाते हैं। मुहर्रिर या मुसद्दी है वह भी बटेरबाज़; सुनार है, लुहार है, वह भी

बटेरबाज; महरा है वह भी बटेरबाज, अड्डे पर बैठे बटेर मुठिया रहे हैं। डोली काँधे पर, बटेर हाथ में। इसके सिवा कबूतरबाजी का वह जुनून है कि बस अल्लाह ही खैर करे। जिधर देखिए 'कू' 'का' की आवाज आती है। जहाँ जाइए छोपी हिल रही है। हजारों आदमियों की रोटी इसी पर है। अमीर-गरीब सभी इस फन में हैं। दिन-भर गुल मचाया करते हैं। इसके अलावा पतंगबाजी भी एक बहुत बड़ा शगल है। मैदान बदे जाते हैं, हजारों के वारे-न्यारे होते हैं। पतंगबाज नौकर रखे जाते हैं, लमडोरे पेंच बदे जाते हैं। मुर्गबाजी का शौक़ इन सबसे बढ़ा हुआ है। घण्टों गुथे पड़े हुए हैं, खून के शरीर बह रहे हैं, ठठ्ठ-के-ठठ्ठ लगे हुए हैं। एक-एक पर दस-दस गिरे पड़ते हैं। मदकबाजी ने रही-सही मिट्टी और भी खराब कर दी है।

जिस शहर और कौम में इतनी बे-फिक्री हो, वहाँ गरीबी क्यों न तरक्की करे! यह थी हालत उस जमाने में रईसों और खासकर मुसलमानों की।

× × +

नवाब साहब तो इधर दनदना रहे थे, उधर बेगम का मारे परेशानी के बुरा हाल था। नवाब के भेजे खतों से तसल्ली जरूर होती थी; मगर मन-ही-मन डरती थीं कि कहीं कुमरिन दिल में जगह न कर ले, या नाजो अपना रंग जमा ले। कहीं ऐसा न हो कि किसी पहाड़िन पर दिल आ जाय। यक न शुद दो शुद का नकशा हो। मगर बाहर जब्त उफ़ तक नहीं करती थीं। नवाब के सफ़र और पहाड़ पर रहने की बात चलने पर बड़ी होशियारी से टाल देती थीं। एक रोज तबियत कुछ बे-लुत्फ़ थी। कई दिनों से नवाब का खत न आने से कुछ

परेशानी सी थी। इतने में एक कौआ महताबी पर बैठकर ज़ोर-ज़ोर से काँव-काँव करने लगा।

बूढ़ी मुग़लानी ने फ़ौरन ही कहा—सरकार कौए की बोली ख़त आने का बड़ा शगून है। यह सवेरे से आज कई बार काँव-काँव कर चुका है। ख़त ज़रूर आयेगा।

महरी बोली—हुज़ूर, हमने भी देखा है, ठीक बात है। जा भैया, सरकार का खत पहाड़ से ला तो दूध-बताशा खिलायें। जा, जाके ख़त ला।

नवाब—ख़त लिखने में नवाब बड़े काहिल हैं। मगर इस दारोग़ा मुए को क्या हो गया? वायदा किया था कि रोज़-रोज़ ख़त भेजूँगा। इतने दिन हो गये ख़त का पता ही नहीं।

इतने में एक महरी ख़ुश-ख़ुश ज़नानख़ाने में आयी। यह बेगम के बहिन के यहाँ से आयी थी। बंदगी करके कहा, "हुज़ूर, यह ख़त नवाब साहब के नाम पहाड़ से आया है, सब ख़ैर-सल्ला है, और शायद हुज़ूर का भी बुलौवा है।"

बेगम ने ख़ुशी-ख़ुशी ख़त लिया और कहा—बी मुग़लानी की बात ठीक निकली।

मुग़लानी अब शेर हो गयी। ख़त पढ़ा गया और सबने सुना।

लाड़ो—हुज़ूर, लौंडी भी साथ चलेगी। कहीं ऐसा न हो कि हमको यहीं छोड़ जाइये।

बेगम—सूत न कपास, कोरी से लट्ठम-लट्ठा। अभी से चलने की तैयारियाँ करने लगीं!

लाड़ो—अब तो एक अठवारे में पहाड़ पर होंगे। देख लीजिएगा हुज़ूर!

बेगम—हाँ, यक़ीन तो आता है कि बुलायेंगे, मगर वे दोनों साथ हैं। उनका साथ छूटना ही अब मुश्किल है।

लाड़ो—उँह ! वह मुई मनिहारिनें भी एक कोने में पड़ी रहेंगी। वह हैं क्या माल !

बेगम—नहीं, वह छुटकी ज़रूर माल चीरती होगी। उस पर नवाब का दिल आया है। और है भी अभी चौदह-पन्द्रह बरस की और कामिनी भी है।

यह बातें हो ही रही थीं कि नवाब रौनक़ जंग के आने की इत्तला हुई और उनके आनेपर मज़लिस बर्ख़ास्त हो गयी।

[४२]

मुंशीजी की मुसीबत

एक रोज़ ख़िलाफ़ मामूल कुमरिन की आँख नूर के तड़के खुल गयी। लैवेण्डर मिले पानी से मुँह-हाथ धोया और झील की तरफ़ जो नज़र पड़ी तो नाव में सैर करने को तबीयत मचलने लगी। मुग़लानी से फ़रमाया "इस वक्त तबीयत लहराती है कि झील की सैर करें और बजरों पर सवार होकर घण्टे-दो घण्टे पानी में इधर से उधर और उधर से इधर मज़े उड़ायें। खाना भी पानी ही में खायें। कुमरिन इठलाती हुई गयी और नवाब साहब को जगा दिया। बाक़ी लोग भी उठ बैठे। सुबह का सुहावना वक्त देखकर सभी ख़ुश हुए।

आग़ा फ़रमाने लगे, "भई, हम तो सुबह पर आशिक़ हैं, वल्लाह !"

नवाब—झील पर क्या जोबन है ! जी बेइख़्तयार हुआ जाता है। किसी तरकीब से यह दोनों पहाड़ और यह झील हमारे बाग़ में कोई ले चले तो क्या पूछना है !

मसखरा—आदाब अर्ज़ करता हूँ। ख़ुदाबन्द, इन दोनों

पहाड़ों का तो वायदा मैं नहीं कर सकता, मगर हाँ, झील को तो गुलाम ज़रूर पहुँचा देगा। मगर हुज़ूर, गुलाम गरीब आदमी है। बारबरदारी में मुझ गरीब के धुर्रे उड़ जायेंगे, यह हुज़ूर के ताल्लुक़। अगर चार मज़दूर उठा ले गये तो दो आना फ़ी मज़दूर आठ आना रोज़ हुए और दस दिन की राह को पाँच रुपये हुए। कोई छः सवा छः रुपये में क़िब्ला बन्दा झील उठा ले जाने का वायदा करता है।

कुमरिन—हमारी राय है कि आज बजरों पर सवार होकर झील की सैर करें।

नवाब—खुदा गवाह है, कुमरिन को खूब सूझी। मज़े से किश्तियों पर सवार होकर झील की सैर करें। इससे बढ़कर लुत्फ़ और कहाँ होगा?

मुंशीजी—झील में जाना और सैर करना कौन-सी अक्ल-मन्दी है! हम न जाने देगें। बन्दा जान के मामले में याराना नहीं रखता।

कुमरिन—(झल्लाकर) इसी मारे तो हम इन लोगों के बीच में दखल नहीं देते।

नवाब—कौन, तुम खफ़ा क्यों होती हो? यह चले और इसका बाप चले। तुम चुपचाप देखती जाओ।

छुट्टन—यह भाग जायगा, इस पर पहरा रखिये।

नवाब—सम्मन यह तुम्हारी हिरासत में है।

मुंशीजी—यह उभारनेवाले मरदूद और मामला खराब किये देते हैं। जान देना कौन अक्लमन्दी है!

नवाब—चाहे जो हो किब्ला! आप आज बच नहीं सकते। यह याद रहे, जो काम हम करेंगे वह आपके बाप को करना पड़ेगा। और कुमरिन जान का हुक्म तो टल नहीं सकता।

अब तो मुंशीजी बहुत चकराये। नाव पर सवार होने की हिम्मत अपने में न पायी। ठान ली कि चाहे मर जायँ, जान जाय, जो कुछ होना हो वह हो, मगर दरिया या झील में सैर न करेंगे। सोचा कि भाग चलें, लेकिन मम्मन पहरे पर तैनात था। पर थे एक ही काइयाँ। लगे फ़रमाने, "भई, हम सब तो आसानी से चल सकते हैं, मगर कुमरिन जान और नाज़ो का जाना मुश्किल है। वहाँ पर्दा भला क्योंकर हो सकेगा? यह बड़ी टेढ़ी खीर है। बी कुमरिन जान बोलो।"

नवाब—यह तो ठीक है। हम लोग तो डोंगियों पर झील की सैर कर सकते हैं मगर ऐसे बजरे कहाँ से आयेंगे जिनमें पर्दे भी हों? पर्दानशीनों के लिए तो बड़ी दिक्क़त है और हाथों-हाथ कोई इन्तज़ाम नहीं हो सकता। तो बेहतर है कि हम सब लोग जायँ और तुम लोग यहाँ से सैर देखो।

कुमरिन—चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाय, आज झील की सैर किये बिना खाना हराम है। हम एक न मानेंगे। चाहे परदा हो चाहे बेपर्दगी हो समझ गईं।

नाज़ो—तुम तो हारी मानती हो न जीती। बे-पर्दे के सवार होगी तो लोग क्या कहेंगे? सब यही कहेंगे कि लखनऊ के नवाब आये हैं उनके यहाँ की बेगमें मुँह खोले डोंगियों में बैठी सारी झील में मँडला रही हैं। वाह, क्या इज्ज़त बढ़ेगी! बात आदमी को सोच-समझ के करनी चाहिये न कि बे-सोचे-समझे।

नवाब—ऐसा ही शौक़ है तो किसी और झील में चले-चलेंगे। वहाँ तुम भी सैर करना।

इस हुज्जत के बाद सैर की तैयारी हुई। महराज बली ने झील की सैर से बिलकुल इनकार कर दिया। और सब ने नवाब साहब के साथ झील में खूब सैर की। इत्तिफ़ाक से

बैरिस्टर साहब भी आ गये। वह भी पार्टी में शामिल हो गये। उस दिन नावों की रेस थी। सैर में बड़ा लुत्फ़ आया।

कई घण्टा सैर करके सब कोठी लौटे। कुमरिन खुश होकर बोली—हम तुम्हारे बोट को बराबर देख रहे थे। तुम लोग ज़रा-ज़रा से मालूम होते थे।

नवाब—अच्छा, अब इन्साफ़ से कहो कुमरिन, भला वहाँ तुम्हारे ले जाने का क्या मौक़ा था?

नाज़ो—तो अब कोई ताल ऐसा तजवीज़ो जहाँ हम लोग भी चल सकें। वायदा पूरा करना है।

आग़ा—हम तजवीज़ देंगे। खेमे छोलदारियाँ लेते चलेंगे। दो दिन वहीं सैर करेंगे।

[४३]

क़ुमरिन की तलाश

कुमरिन तो इधर नैनीताल में गुलछर्रे उड़ा रही थी, उधर उसका मियाँ क़ादिर रात-दिन उसकी याद में सिर धुनता और तिनके चुनता था। यार-दोस्त उसकी हालत पर अफ़सोस करते थे। चेहरा पीला पड़ गया था जैसे महीनों से बुखार आता हो। पहाड़ का तो उसने ख्वाब में भी ख़याल नहीं किया था। लखनऊ का कोई गली-कूचा, कोई सराय, कोई मण्डी, कोई गंज ऐसा न था जहाँ उसने सैकड़ों चक्कर न लगाये हों। उसकी माँ उसकी हालत और बेक़रारी को देखकर बार-बार समझाती थी, मगर कादिर को तसल्ली नहीं होती थी। सास को यक़ीन था कि कुमरिन किसी-न-किसी शौक़ीन अमीर के चक्कर में गयी है। वह जानती थी कि रुपया अजीब शै है। खुदा ने इसे बड़ी ताक़त दी है। बड़े-बड़े अमीरों की नीयत में फ़र्क़ आ जाता है, गरीब आदमी की क्या हस्ती है। वह यह सब क़ादिर से कहती

थी, मगर क़ादिर तो कुमरिन की फ़िराक़ में बिलकुल दीवाना हो रहा था। मा की बातें सुनकर और भी रंजीदा हो जाता और मुँह फेरकर रोना शुरू कर देता। मा का दिल भी भर आता और वह कुमरिन को कोसने लगती।

बुढ़िया के कहने-सुनने से क़ादिर मियाँ दोस्तों से सलाह लेने और टोह लगाने निकले तो ललतुआ तंबोली ने पुकारा। वह इनका दोस्त था। "आओ यार किदरा, कहाँ रहते हो? तुम्हारी तो सूरत ही अब नहीं दिखाई देती, और यह तुमको हो क्या गया है जैसे कब्रिस्तान का मुर्दा! कुमरिन तुमको खा गई यार! ऐसी जुरुआ भी खुदा किसी को न दे। कुछ पता-वता चला, है कहाँ? उसकी अम्माँ से पूछो। हमारी तो समझ में आता है वही कुटनी है। ठगों की बुढ़िया। चलो यार, उसकी मा सुसरी के पास चलो। उसको टटोलो ज़रा।"

दोनों कुमरिन की दादी के यहाँ पहुँचे। किदरा अन्दर गया, ललतुआ बाहर खड़ा रहा।

क़ादिर—कहो, कुछ हाल-हवाल सुना-सुनाया?

दादी—हाल-हवाल तेरा और उस मुरदार का सिर सुना। तू फिर मेरे सामने आया। मेरी पाली-पनोसी स्यानी लड़की को भगा दिया और बेहया बातें बनाता है। हाय! मैंने किस घर में लड़की दी थी। इससे तो भाड़ में झोंक देती तो एक ही मरातिबे जल-भुनकर खाक हो जाती। यह हर घड़ी की जलन, हर घड़ी का कुढ़ना तो नसीब न होता अलग। तू दूर हो मेरे सामने से।

क़ादिर तो उल्लू था ही, लगा गिड़गिड़ाने; लेकिन ललतुआ को बहुत बुरा लगा। उसने बाहर से क़ादिर को ललकारा, "अबे, तू उत्ता दबता क्यों है? यह सब इसी का फ़िसाद है। इसी चुड़ैल ने कुटनापा किया होगा और अब जा-बेजा बकती है। आगू सूखी रोटी खाने को नहीं मिलती थी, अब एक औरत

नौकर रखी है। गोश्त दोनों वक्त आध सेर खाने को आता है। लड़की को ले के भगा दिया, कुटनापा किया और आप चैन करती है। उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे। ऊपर से ललकारती है। मैं ऐसा दमाद होता तो झोंटा पकड़कर इत्ती लातें मारता कि कचूमर निकाल देता। बढ़चढ़ के बातें बनाती है चुड़ैल !"

बुढ़िया को भला इतनी ताब कहाँ थी ? ललतुआ को ख़ूब कोसा, गला फाड़-फाड़कर बहुत ही बुरा-भला कहा। मुहल्ले वाले और राहगीर खड़े हो गये। चारों तरफ़ चाँव-चाँव होने लगी। लोगों को शिगूफ़ा हाथ आया। आग लगाकर दोनों घर की तरफ़ चले। रास्ते में ललतुआ ने क़ादिर से कहा, "यार क़ादिर, वह, वह जो सफाई का ठेका जिनके पास है, वह जो मुंसी-मुंसी बाजते हैं, उनका पता लगाओ चल के।"

दोनों सफ़ाई के जमादार से मकान पूँछकर मुंशी महाराजबली के यहाँ गये, वहाँ पता लगा कि मुंशीजी नवाब मुहम्मद अस्करी के साथ पहाड़ पर गये हैं। पहाड़ का नाम दरियाफ़्त करके दोनों खट् से नवाब मुहम्मद अस्करी की ड्योढ़ी पर पहुँचे। मारे डर के किसी से पूछने की हिम्मत न पड़ी। इतने में फाटक से एक साहब, जो पोशाक और शक्ल-सूरत से रईस मालूम होते थे, निकले। पीछे एक खिदमतगार सफेद कपड़े पहिने हुए और लाल़बत्ती बाँधे साथ था। दोनों एक तरफ़ को हट गये। इस पर उस रईस ने खुद ही इनसे पूछा, "तुम कौन लोग हो और नवाब साहब से क्या काम है ?"

क़ादिर ने झुककर ज़मींदोज़ सलाम किया और कहा, "हुज़ूर कुछ काम था। मेरा नाम क़ादिर है और मनिहार हूँ और यह मेरा दोस्त ललतुआ है। यह तंबोली है। हमारे ही मुहल्ले का है।"

इन नवाब साहब, जिनका नाम वशीरुद्दौला है, और नवाब

मुहम्मद अस्करी में कुछ चल-सी रही थी। पहिले तो दोनों दाँत-काटी रोटी थे, मगर कुछ दिनों से आपस में रंजिश बढ़ गयी थी और मिलना-जुलना भी बन्द था। कुमरिन के भगाये जाने का क़िस्सा इनको भी मालूम था और यह खुद ही क़ादिर की तलाश में थे कि अगर मिल जाय तो नवाब पर दावा दायर कराकर उसकी ओट में शिकार खेलें। इसलिए दोनों को अपने साथ अपनी कोठी पर ले गये। सारा हाल-चाल पूछा। क़ादिर गोगला और सीधा आदमी था, मगर ललतुआ बड़ा चालाक लौंडा था। क़िदरा को उसने नहीं बोलने दिया कि कहीं ऐंड़ी-बैंड़ी बात मुँह से न निकल जाय और नवाब साहब चोरी की इल्लत में पकड़वा कर सज़ा न करा दें। फ़ौरन बोला, "हुज़ूर, मेरा बड़ा भाई गोविन्द नवाब अस्करी की ड्योढ़ी पर खन्नों में नौकर था। जब से नवाब साहब के साथ पहाड़ पर गया है, कोई खत नहीं आया। हमारी माँ का खाना-पीना हराम है। सो वही दरियाफ़्त करना है कि जिस पहाड़ पर गये हैं, उसका क्या नाम है?"

नवाब बशीरुद्दौला कोई लौंडे तो थे नहीं कि चकमे में आ जाते, मुस्कराकर कहा, "अबे हमसे उड़ता है। क्यों मियाँ क़ादिर, तुम्हारी चूड़ीवाली कहाँ है? हमारे घर में चूड़ियाँ दरकार हैं। भेज दोगे? साफ़-साफ़ कह चलो, उड़नघाइयाँ न बताओ, तो हम तुमको ऐसी मदद दें कि कुमरिन भी मिल जाय और अधी तुम्हारी गाँठ से भी न जाय।"

ललतुआ—फिर हुज़ूर को सब मालूम ही होगा।

बशीर—कुमरिन जिसके साथ भाग गयी है, उसको भी जानते हैं और जहाँ है, वह भी मालूम है। अगर एक शर्त मानो तो हम अपनी तरफ़ से वकील भी करें और लाखों रुपये भी लगायें।

क़ादिर—हजूर जो शरीत (शर्त) करें मंजूर है।

बशीर—शर्त यह है कि एक अठवारे के लिए कुमरिन हमारे यहाँ नौकर रहेगी। सोच लो। घर में चूड़ी पिन्हाने के लिए।

ललुआ—हजूर एक नहीं, दो अठवारे तक।

क़ादिर—हजूर जीते-जी तक हम सब गुलाम रहेंगे और वह लौंडी बनी रहेगी। बस इत्ता याद रखिये।

बशीर—कुमरिन तुमको वापिस मिले और नवाब और उनके साथियों को सज़ा हो, वह सब धर लिये जायँ। तुमको भरपूर रुपया दिलवायें। कुमरिन को लेके मजे से चैन करो। मगर बेईमानी न कर जाना।

क़ादिर (पैरों पर सिर रखकर)—सूअर हो जो बेईमानी करे भिश्त (बहिश्त) नसीब न हो। हम गरीब तो हैं मुला सरीपजादे (शरीफ़जादे) हैं।

नवाब बशीरुद्दौला तो इस ताक में थे ही कि किसी तरह मुहम्मद अस्करी को सज़ा हो जाये। या उन पर कोई मुकदमा दायर हो जाय। बशीरुद्दौला निहायत ही कमीना और बदमाश शख्स था। उसे हर वक्त यही फिक्र रहती थी कि किसी की बहू-बेटी की इज्जत में धब्बा लगायें। दो दोस्तों, मियाँ-बीबी, बाप बेटे में जूता चलवा देना बायें हाथ का खेल था। उसकी सारी उम्र इसी में कटी थी। काट-फाँस में बर्क़ हो गये थे। शरीर आदमी का क़ायदा है कि शरारत का मौक़ा मिलते ही उसको हाथ से नहीं जाने देता। फाँसने के लिए उन्होंने पाँच रुपये दोनों को मिठाई खाने के लिए दिये। दोनों ने झुककर सलाम किया। कुछ देर सोचने के बाद जनाब फ़रमाने लगे, "यार क़िदरा, हमने तुम्हारे लखनऊ की मनिहारिनों की बड़ी तारीफ़ सुनी है। कोई जान-

पहिचान हो तो लाओ। ज़रा दिल्लगी ही रहेगी। तुम्हारी बदौलत हम भी आँखें सेक लेंगे।"

क़िदरा तो झेंपने लगा, मगर ललतुआ ने कहा,"जब हुक्म दीजिये हाज़िर करें। मुल घर-गिरहस्त हैं, दो-तीन घड़ी बैठके चली जायेगी।"

यह तो परले सिरे के बदमाश थे ही, ख़ुश हो गये। फ़रमाने लगे, "जाओ और अभी लाओ। जहाँ तक मुमकिन हो जल्द जाके लाओ। लेने-देने का ख्याल न करना। हम कुछ ग़रीब या फक़ीर नहीं हैं कि किसी को बुलायें और ख़ाली हाथ भेज दें।"

[४४]

नैनीताल में लुत्फ़ सोहबत

नैनीताल आकर नवाब साहब को कई नये दोस्त मिल गये थे। उनमें से एक थे बैरिस्टर और दूसरे एक ऐसे साहब थे, जो कई बार विलायत हो आये थे और यार-दोस्तों में लंदनी के नाम से मशहूर थे। एक रोज हस्ब मामूल दरबार लगा हुआ था और ख़ुशगप्पियाँ हो रही थीं कि लन्दनी ने कहा—एक बात की कसर है क़िब्ला। पर कहेंगे नहीं। अभी आपसे इतनी बेतकल्लुफ़ी नहीं हुई है।

आग़ा—यूँ ही बेतकल्लुफ़ी होती है।

बैरिस्टर—लुत्फ़ सोहबत बे-औरत के मुहाल है। जिस सोहबत में माशूक नहीं वह सोहबत क्या!

नवाब साहब ने दोस्तों से सलाह की। दूसरे कमरे में जाकर सबने सलाह की और बहुत ग़ौर व फ़िक्र के बाद यही राय हुई कि जब इतनी बेतकल्लुफ़ी हो गयी है तो नाज़ो और कुमरिन

को बुलाने में कोई हर्ज नहीं है। नवाब साहब की सलाह मानने में क्या उज्र था। लिहाज़ा मुग़लानी को हुक्म दिया कि नाज़ो और कुमारिन को भेज दे। कोई आध घण्टे के बाद बी नाज़ो नाज़ व अन्दाज़ के साथ छम-छम करती, जेवरों से गोदनी की लदी कमरे में आयीं। जोबन और निखार को देखकर सभी तस्वीर बन गये।

नाज़ो—नवाब, हमें क्यों बुलाया?

लन्दनी—हुज़ूर को हमने बुलाया।

नाज़ो—उई, ऐ यह हब्शू कौन है, नवाब?

लन्दनी—हम हब्शू हैं?

नाज़ो—हब्शू नहीं तो और कौन हो?

लन्दनी—नाज़ो जान, हमने बरसों के इन्तज़ार के बाद आपको आज देखा।

यह बातें हो ही रही थीं कि एक महरी चमकती हुई कमरे में आयी और अर्ज किया, "हुज़ूर, एक मिस आयी हैं। हुज़ूर को बुला रही हैं।" मिस के नाम पर सबके कान खड़े हो गये। "कौन!" "मिस आई हैं?" "मिस कौन?"

महरी—सरकार, अटकल से जानती हूँ कि पादरियों के यहाँ की होंगी। यह क्या सामने खड़ी हैं। पीछे फिर के देखते हैं तो वाक़ई एक मिस खड़ी झील की तरफ़ देख रही है।

नवाब—(उठकर) बैरिस्टर साहब, चलो भई ज़रा, अँगरेज़ी में गुफ्तगू करो।

बैरिस्टर—चलिये, नेकी और पूछ-पूछ। नवाब और बैरिस्टर मिस के पास पहुँचे तो बैरिस्टर साहब ने 'गुड् मार्निंग' कहा। वह पलटी तो नवाब साहब दंग. धक्-से रह गये और ज़ोर से क़हक़हा लगाया। बेचारे बैरिस्टर साहब उल्लू बन गये।

बैरिस्टर (अँगरेजी में)—आपका इस्म मुबारिक दरयाफ़्त कर सकता हूँ।

नवाब—आप इस वक्त कहाँ आयीं ?

मिस—वेल, हम बेगम साहब से मिलने आया।

नवाब—फिर कमरे में आइये, चलिये। नवाब, बैरिस्टर और मिस जो कमरे में पहुंचे तो सब-के-सब कुर्सियों से खड़े हो गये। पहिले तो मिनट, दो मिनट तक किसी ने पहिचाना ही नहीं। मगर जब मिस कुर्सी पर बैठी तो आग़ा साहब उछल पड़े।

आग़ा—वल्लाह, हमने अब तक नहीं पहिचाना था।

छुट्टन—सूरत तो कुमरिनजान से मिलती है।

आग़ा—मिलती है, बस। अजी जनाब, यह हैं कौन ?

मम्मन—क्या कुमरिनजान ? मगर, अरे भई, वल्लाह मुझे खुद धाखा हुआ।

अख्तर—मुझे अब तक धोखा था भाई। यह पोशाक क्या ज़ेब देती है ! सुभान अल्लाह, सुभान अल्लाह !

नाज़ो (हँसकर)—पहिले हम भी नहीं समझे थे। मगर जब यह करीब आयीं तो चाल से समझ गयी कि कुमरिन हैं। मुँसी महाराजबली ने बैरिस्टर और लन्दनी को हाल बताया तो वह भी बहुत हँसे।

कुमरिन—मैं आने ही को थी कि दर्ज़ी यह सब पोशाक लेके आ गया। बस बी मुगलानी ने कहा यही पहिन के जाओ। दर्ज़ी से उन्होंने इस पोशाक के पहिरने की तरकीब पूछ ली और हमको पहिनाकर यहाँ भेजा। तुम सबको धोखा हो गया।

नवाब (नाज़ो से)—क्या तुमको भी नहीं मालूम था ?

नाज़ो—नहीं, अल्ला जानता है हमको ज़रा भी इत्तला न थी। हमने तो पहिले पहिचाना भी नहीं। मगर जब यह पास आयी तो चाल से पहिचान लिया और फिर तो सामने ही आके खड़ी हो गयीं।

नवाब—मगर क्या खिलती है पोशाक !

बैरिस्टर—सूरत भी तो खुदा ने वह दी है कि खुदा भी अपने इस बन्दे पर आसक्त हो जाय।

लन्दनी—मीठी नज़र देखे तो मार डाले और तिरछी चितवन देखे तो क़त्ल करे।

कुमरिन—हमारी आँख के रस में तलवार की काट भी है।

इसी तरह हँसी-मज़ाक करते काफी रात बीत गई और जलसा मौक़ूफ़ हुआ।

[४५]

पुलिस के दाव-पेंच

दूसरे रोज नवाब बशीरुद्दौला किदरा और ललतुआ को साथ लेकर मौलवी अज़मतउल्लाह वकील के यहाँ गये। मौलवी साहब अँगरेजी नहीं जानते थे, उर्दू और फ़ारसी स्कूल में पढ़ी थी और क़ानून भी बस यूँही-सा जानते थे। मगर आदमी बहुत चालाक थे। खड़े होकर नवाब साहब से हाथ मिलाया। मिज़ाज पुर्सी की।

बशीर—मुहम्मद अस्करी को जानते हो ?

वकील—हाँ-हाँ, लो, इतने बड़े रईस हमारे शहर के और हम उनको जानते नहीं। आजकल तो शायद पहाड़ पर हैं।

बशीर—जी हाँ, वह एक विवाहिता औरत को भगा

ले गये हैं। उसका मियाँ हमारे पास आया था, वह अदालती कार्यवाही करना चाहता है।

वकील—तो उसके मियाँ के पास रुपया है? इतने बड़े रईस का मुकाबिला करना दिल्लगी नहीं है।

बशीर—उसके पास रुपया नहीं तो हमारे पास तो है। मैं चाहता हूँ कि वह धर लिये जायँ और सज़ा हो जाय।

वकील—शरीफ़ज़ादों को अदालत के फन्दे में फाँसना और अदालती दाँव-पंच में लाकर ज़लील करना शराफ़त के खिलाफ है।

बशीर—आपको शराफ़त और कमीनेपन से क्या मतलब? आप मुक़द्दमा लेते हैं या पादरीपना करते हैं?

वकील—अच्छा, तो मुझसे आप क्या चाहते हैं?

बशीर—भई एक साल से कुछ ज्यादह हुआ कि नवाब मुहम्मद अस्करी एक मनिहार की छोकरी पर आशिक़ हुए थे। कुछ दिन तक चोरी-चोरी किसी-न-किसी बहाने से उसको कभी-कभी बुलाते थे। मगर जब इश्क़ के पंग बढ़े, तो दूर की सूझी और उसको घर डाल लिया। चंद रोज के बाद नैनीताल भगा ले गये। अब वहाँ गुलछर्रे उड़ाते हैं और उसका मियाँ यहाँ तड़पता है। ऐसी पाजीपन की हरकत की।

वकील—जब नवाब मुहम्मद अस्करी उस विवाहिता औरत को ले भागे तो वह किसकी हिफाजत में थी?

बशीर—उस वक्त वह अपने खाविन्द के घर थी। वहाँ से अस्करी के यहाँ चली गयी और अब पहाड़ पर है।

वकील—तो यह जुर्म ले भागने का नहीं है। उड़ाने या फुसला ले जाने का है। अच्छा, नवाब साहब उस औरत को मजबूर करके या किसी तरह की दगाबाजी करके भगा ले गये हैं या वह खुश-खुश गयी?

बशीर - जी खुश व खुर्रम गयी। उसकी किस्मत खुल गयी। वह तो दुआ माँगती होगी कि किदरा पर आसमान फट पड़े या बिजली गिर पड़े।

वकील—भला वह छोकरी अदालत में अपने मियाँ की-सी कुछ कहेगी?

बशीर—अरे नहीं भाई, वह मियाँ भडुए को पाये तो जिन्दा चबा जाये। वह तो शायद निकाह से ही इन्कार कर दे।

वकील—अगर निकाह साबित न हुआ तो फुसला ले जाने और ले उड़ने का जुर्म भी नहीं चल सकता।

बशीर—हम तो नवाब मुहम्मद अस्करी को जलील करना चाहते हैं। अगर किसी अँगरेज बैरिस्टर की जरूरत हो, तो मेहनताना दिया जायगा। मगर नवाब नीचा देखे। रुपये की क्या हकीकत है।

वकील—अब यह फर्माइये कि कुल मेहनताना क्या दीजियेगा? अभी तो हम नवाब मुहम्मद अस्करी के नाम एक नोटिस भेज देंगे। अगर नवाब साहब धमकी में आ गये और आपका मतलब पूरा हो गया तो बेहतर, वर्ना खुदा ने चाहा तो सब जेलखाने में होंगे।

बशीर—तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर। खुदा करे ऐसा ही हो। आपको दो हजार नजर किये जायँगे। एक हजार पेशगी और एक हजार बाद को।

वकील—बन्दा बे-उज्र आदमी है। मगर मुकदमे की हैसियत से यह मेहनताना बहुत कम है। जरा उस औरत के खाविन्द को बुलवा लीजिये, उससे भी कुछ हालात पूछूँगा।

नवाब साहब के कहने पर खिदमतगार किदरा और ललतुआ को बुला लाया। दोनों ने वकील को झुक-झुककर सलाम किये।

वकील—(ललतुआ की तरफ़ इशारा करके) यह तो कोई हिन्दू का लौंडा मालूम होता है।

ललतुआ—हाँ हजूर, यह किदरा हमारे पड़ोसी हैं और हम तो ललतुआ तँबोली हैं।

वकील—क़ादिर, तुम सुन्नी हो या शिया? और तुम्हारी जोरू कुमरिन?

किदरा—हम दोनों सुन्नत जमात हैं, हजूर!

वकील—निकाह पढ़ाने कौन आया था?

किदरा—हमारे महल्ले के नगीच एक काजी कम्मू खाँ रहते हैं, उन्होंने ही पढ़ाया था।

वकील—निकाह के गवाह कौन हैं?

किदरा—दो गवाह थे, एक खैराती नाई और एक फज्जू मातमी।

वकील—मेहर क्या ठहरा था?

किदरा—हजूर, लाखों-करोड़ों रुपये का मेहर था। हजूर, पाव भर कोदों मेहर ठहरा था।

बशीर—इसका मतलब यह है वकील साहब कि जिस क़दर गिनती में पाव-भर कोदों हो वही तादाद मेहर की होगी।

वकील—क्यों मियाँ किदरा, अगर काज़ी कम्मू खाँ और उन दोनों गवाहों से पूछा जायगा तो सच्चा-सच्चा हाल बता देंगे या उधर से कुछ ले-दे के इन्कार कर जायँगे?

ललतुआ—नहीं हजूर, काजी कम्मू खाँ तो बड़े ईमान के आदमी हैं। लाख रुपया हो तो उस पर भी लात मारें, गरीब हैं तो क्या हुआ। अपना ईमान कोई न खोयेगा। हम इन सबको पञ्चायत करके ठीक कर लेंगे।

वकील—हाँ, अगर गवाह ही गड़बड़ हो गये तो फ़िर क्या हो सकता है? गवाह पक्के होने चाहिएँ आठों गाँठ कुम्मैत।

ललतुआ—गवाही को तो हम हजारों आदमी ला के खड़े कर देंगे। हजूर, इस बात से तो निसान खातिर रहें।

वकील- (नवाब से) अब हुजूर तशरीफ़ ले जायँ, बन्दा नोटिस का मसौदा तैयार करके शाम को दौलतख़ाने पर हाजिर होगा। हाँ, वह रुपया अगर इस वक्त मेरे कचहरी जाने से क़ब्ल भेज दीजिये तो बड़ा मतलब निकले।

बशीर—(हँसकर) बहुत अच्छा अभी लीजिये। नवाब बशीरुद्दौला रुखसत होकर कोठी पहुँचे। और नौकर से कहा—नब्बू खाँ ढाई हज़ार रुपया लाला से लेकर मौलवी अज़मतउल्ला वकील के भिजवा दो। तीन सिपाहियों पर ले जाओ और लाला को भी साथ भेजो।

अगले दिन किदरा और ललतुआ नवाब बशीरुद्दौला के पास गये तो नवाब साहब फ़रमाने लगे, वकील साहब के यहाँ ढाई हज़ार रुपया तो तुम्हारे सामने ही भेज दिया था, आज उनकी दावत है। जलसा भी होगा। यह सब रुपया तुम्हारी बदौलत लुटा रहा हूँ। गुन मानोगे या भूल जाओगे?

किदरा—(क़दमों पर गिरकर) हजूर, ग़ुलाम हूँ। हुजूर तावे ज़िन्दगी ग़ुलाम रहूँगा।

ललतुआ—ऊपर खुदा नीचू आप।

बशीर—क़ादिर, यार, कुमरिन को हमें दे दो।

ललतुआ—हजूर इसके बस में हो न जब।

बशीर—तू जो माँगेगा तुझको भी दूँगा।

ललतुआ—हुजूर ने जब मेरी पीठ पर हाथ रखा, मैं बादशा हो गया। बस, हजूर।

बशीर—अरे मियाँ किदरा, कोई और चूड़ी वाली दिखाओ। क्या क़ुमरिन की-सी कोई अब नही है?

क़िद्दरा—हज़ूर, क़ुमरिन की-सी तो दुनिया में न होगी चाहे ढूँढ़ लीजिये।

बशीर—अच्छा, कल सवेरे वकील के यहाँ चलेंगे। तुम लोग सुबह ही आ जाओ।

दोनों सलाम करके रुख़सत हुए। नवाब साहब इनको रुख़सत करके अपने एक दोस्त के यहाँ तशरीफ़ ले गये जो कि बाहर मुफ़स्सिल में थानेदार थे। उनसे सारा हाल कह सुनाया।

थानेदार—मनकूहा औरत है? वह औरत उन्हीं के साथ पहाड़ पर है और उसका मियाँ?

बशीर—वह बेचारा यहाँ तड़पता रहता है और परेशान है। हमारे पास अक्सर आता-जाता है।

थानेदार—मालूम होता है वह औरत ख़ूबसूरत है और आपकी भी उस पर नज़र है। ख़ैर। अच्छा, तो उसको यह सलाह दीजिये कि वह कल एक रपट थाने पर लिखवा दे कि उसकी मनकूहा बीबी को नवाब मुहम्मद अस्करी अपनी बेगम की मदद से मेरे घर से बनियत मुजरिमाना भगा ले गये हैं।

थानेदार साहब तो यह सलाह देकर रुख़सत हुए, इधर नवाब बशीरुद्दौला ने अपने एक पुराने दोस्त को जिनके साथ यह मकतब में पढ़े थे, गाड़ी भेजकर बुलवाया। यह दोस्त अब रेवेन्यू ऐजेण्टी का काम करते थे। इनसे नवाब साहब की बड़ी बेतकल्लुफ़ी, बड़ा याराना, बड़ी दोस्ती थी। इसी वजह से नवाब साहब ने उनसे सलाह लेने का इरादा किया।

रेवेन्यू ऐजेण्ट इनके यार थे ही, गाड़ी पहुँचते ही रवाना हो गये और आते ही गुल मचाना शुरू किया, "नवाब! ओ नवाब! अरे नवाब होतृत!" मिलते ही दो-दो चोंचें हो गयीं। फ़रमाने लगे, "हम रुख़सत होते हैं, साहब! तुम्हारे घर पर आयें और सन्नाटा पायें। बुलवाओ दो एक को। अब बन्दा तड़के तक जाने, सोने

और सोने देनेवाले को कुछ कहता है। क़िब्ला खाना भी यहीं खायँगे और सब बातें भी होंगी।

बशीर—माकूल, अच्छे आये। खाना भी खायेंगे, सब बातें भी होंगी, धरना भी देंगे, ऐसी-तैसी आपकी। मगर यह न पूछा कि बुलाया किस काम से था। खाने और घूरने की सूझी। इसके बाद नवाब बशीरुद्दौला ने पूरा हाल कह सुनाया और वकील और थानेदार की तरकीबें भी बता दीं।

रेवेन्यू एजेण्ट—मेरी राय में तो एक दरख़्वास्त साहब मैजिस्ट्रेट ज़िला की अदालत में दे दी जाय कि फलाँ औरत को नवाब मुहम्मद अस्करी साहब और उनकी बेगम गरज़ नाजायज़ के लिए भगा ले गये हैं और उसको बतौर नाजायज़ रोक रखा है। दरख़्वास्त गुजरते ही साहब मैजिस्ट्रेट जिला फ़ौरन पुलिस के नाम हुक्म जारी कर देंगे कि वह औरत अपने शौहर के हवाले कर दी जाय। इससे सहल लटका दूसरा हो ही नहीं सकता।

बशीर—मगर वह ज़लील तो न होंगे। हमारा तो मतलब सिर्फ़ यह है कि अस्करी ज़लील हों, बेगम अदालत में बुलवायी जायँ और कुमरिन उसके मियाँ को मिल जाय, बस।

एजेण्ट—अच्छा, फिर सहल तरकीब तो यही है। अगर कुमरिन की ख़्वाहिश और उसका इश्क भी है, तो इससे बेहतर तदबीर हो नहीं सकती। ग़ौर कर लें, जल्दी का काम शैतान का।

दूसरे दिन नवाब बशीरुद्दौला ने सलाह के लिए अपने पुराने दोस्त पुलिस इन्सपेक्टर शाहबाज़ख़ाँ को बुलवाया। उनके आने पर फ़रमाने लगे, आपकी इन्सपेक्टरी हमारे कब काम आयेगी? घर की इन्सपेक्टरी और हम जरा-जरा-सी बात को तरसें! आपकी इन्सपेक्टरी से हम को क्या?

खान—बन्दा किस क़ाबिल है! कोई काम मेरे लायक हो तो फरमाइये। मैं लल्लो-पत्तो करनेवाला आदमी नहीं हूँ। यह तो मैं नहीं कह सकता कि जान तक कुरबान कर दूँगा! यह तो झूठ होगा, मगर हाँ यह ज़रूर कहूँगा कि नौकरी जाय तो जूती की नोक पर है। मेरी खुशक़िस्मती कि मैं आपके किसी काम आ सकूँ। आप बे-तकल्लुफ फरमाइये कि मेरे सिपुर्द कौन खिदमत करेंगे हुजूर!

बशीर—अर्ज करता हूँ कि नवाब मुहम्मद अस्करी नाम वाले एक साहब एक चूड़ीवाली को, जो कि मन्कूहा औरत है, भगा ले गये हैं। वह बेचारा, जिसकी मन्कूहा बीवी कुमरिन है, रोता और सिर धुनता है। अब कोई ऐसी तदबीर सोचो खाँ साहब कि अस्करी और उनकी बेगम दोनों कैद हो जायँ और कुमरिन उसके मियाँ को मिल जाय।

खान—चूड़ीवाली मन्कूहा औरत थी और नवाब मुहम्मद अस्करी के साथ भाग भी गयी, फिर आपको क्या? आप पराये फटे में पाँव डालनेवाल कौन?

बशीर—भई, हमारी दिली ख्वाहिश है कि बेगम और नवाब दोनों ज़लील हों।

खान- हुजूर खुद नवाबज़ादे हैं। ताज्जुब है कि आपकी ऐसी ख्वाहिश है। अगर आपकी यही ख्वाहिश है तो नवाब और बेगम दोनों को कैद करा दीजिये। मगर खूब याद रखिये कि लखनऊ में आपका क़याम मुश्किल हो जायगा। यह जितने नवाबज़ादे और रईस हैं, सब आपकी बोटियाँ नोच-नोचकर और तिक्के-तिक्के करके चीलों को देंगे कि आपने एक रईसज़ादे की आबरू मिटा दी।

बशीर—अस्करी मरदूद का नाम न लो। वह हरकत उसने

की है कि जितनी भी दुश्मनी उसके साथ की जाय ठीक है।

खान—यही ना कि चूड़ीवाली को ले भागे। फिर यह तो आप रईसों की शान है और जौहर है। हुजूर कब इससे खाली हैं। अच्छा, भला किस-किस से हुजूर ने मश्विरा लिया और उन्होंने क्या-क्या कहा?

नवाब बशीरुद्दौला ने वकील अज़्मतउल्ला, थानेदार और रेवेन्यू ऐजेन्ट की राय कह सुनायी। शहबाज़खाँ थोड़ी देर सोचकर बोले—थानेदार की राय ठीक है। यह जुर्म काबिल दस्तनदाज़ी पुलिस है, न जमानत हो सकती है और न राजीनामा। इधर रिपोर्ट गुज़री, उधर पुलिस ने अपनी कार्यवाही शुरू की। पुलिसवालों को कुछ थोड़ा-बहुत चटा दीजियेगा। इंशाअल्लाह सब दुरुस्त हो जायगा। पुलिस सबको पकड़कर बड़ा घर दिखा देगी। हमारी तो यही राय है।

बशीर—रात की अकल उलटी। सुबह को फिर गौर कर लीजियेगा। ऐसा न हो कि चाल उल्टी पड़े। जल्दी की कोई ज़रूरत नहीं है। अच्छा, आपका बहुत वक्त बरबाद किया। माफ़ फरमाइयेगा। हम फिर आपसे मिलेंगे।

शहाबज़खाँ इन्सपेक्टर हाथ मिलाकर रुख़सत हुए।

[४६]

हुस्न गुलूसोज़

यहाँ तो हँड़िया पक रही थी कि नवाब मुहम्मद अस्करी को फाँसकर कैद करा दो, और उधर यह हाल था की किसी को इसका सान-गुमान भी न था कि लखनऊ में एक ज़ात शरीफ़ यह

काँटे बो रहे हैं। उनको तो मुसाहिबों की चख़ और खुश-गप्पियों से कहाँ फ़ुर्सत थी!

नैनीताल में गुलछर्रे उड़ाते और रँगरेलियाँ मनाते थे और नाज़ो और कुमरिन की चाँदी थी। पहिनने को ज़रबफ्त व अतलस व कमख़्वाब, नित नयी-नयी पोशाक, दिन भर में अठारह जोड़े बदलती थीं। कभी संदली रंग का दुशाला, कभी जामावार की रज़ाई, कभी रेशमी लिबास, कभी सादगी में फनन, कभी क़ीमती जेवर से आरास्ता, कभी स्कर्ट और गौन, कभी मर्दाना लिबास, चुस्त घुटन्ना और तीन कमर तोई का सुराहीदार दगला और नुक्केदार बाँकी टोपी, पाँव में टाट वाफ़ी बूट, मालूम होता था कोई गभरू खड़ा है। कभी भारी साड़ी बड़ी लागत और तैयारी की। इनके लिए चैन-ही-चैन था। लज़ीज खानों की फरमाइश तो मामूली बात थी। आज बी नाज़ो का जी चाहता है कि अनन्नास पुलाव खायें। कुमरिन ने पहाड़ी मुर्ग का क़ोरमा पकवाया है। बी मुग़लानी ने परवल का दुलम्मा सरकार के लिए तैयार कराया है। आज कुमरिन शामी कबाब खायेंगी। बी नाज़ो जान की ख़ातिर से बाँस की कोंपल का अचार और नौरतन चटनी मँगवायी गयी है। नैनीताल की झील में महाशेर मछली पकड़ी जाती है और ज़मीन में दफ़ना के बी कुमरिन के लिए पकवायी जाती है। शराबें आला क़िस्म की उनके लिए पटी पड़ी थीं और उसका सामान सब बेश क़ीमत। हर क़िस्म की शराब के सफ़ेद-सफ़ेद गिलास और अर्ग़-वानी जाम। सवारी के लिए गंगा-जमुनी हवादार और सुख-पाल और जिधर से सवारी निकल गयी, यह मालूम हुआ कि इत्र के क़राबे लुढ़काये गये हैं। हर हफ़्ते लखनऊ से इत्र और खुशबूदार तेल पारसल होकर आता था। गरज नवाब की बदौलत दोनों चैन करती थीं और शाहज़ादियों की तरह रहती थीं।

नवाब साहब नाज़ो और क़ुमरिन को विलायती नाच सिखलाने की फ़िक्र में थे, छुट्टन साहब को हारमोनियम बजाने का शौक़ चर्राया हुआ था और मुंशी महाराजबली मछली के शिकार का सामान ख़रीदने की फ़िक्र में थे, मगर मछली को क्या ख़बर थी कि पानी में शिस्त है? एक रोज महफ़िल गर्म थी कि ख़िदमतगार ने आकर कहा, "हुजूर, मुहम्मद जाफ़र साहब लखनऊ से आये हैं और आपके साढ़ू का ख़त लाये हैं।" सभी घबराकर कमरे से निकल आये। पूछा, "ख़ैर बाशद, तुम यहाँ कहाँ?"

"हुजूर, ज़रा कमर सीधी कर लूँ तो कहूँ।"

आग़ा—क्योंकर आना हुआ, भाई?

मुन्शी जी (बौखलाहट से)—इतना बता दो कि ख़ैरियत तो है?

जाफ़र—अभी तक तो ख़ैरियत ही है, मगर ख़ैर नज़र नहीं आती। ख़त से पूरा हाल मालूम हो जायगा। इतना सुनते ही सब के मुँह पर हवाइयाँ छूटने लगीं, चेहरों का रंग फ़क़ हो गया। नवाब साहब ने खत खोला। लिखा था—"बिरादर सलामत, मुहम्मद जाफ़र को तुम्हारे पास ख़त लेकर रवाना करता हूँ, ख़ुदा करे रेल मिल जाये। बन्दा खुद परेशान है। क़ुमरिन के मियाँ उस क़ादिर कमबख़्त ने थाने पर रिपोर्ट लिखा दी है कि नवाब मुहम्मद अस्करी अपने दोस्तों—आग़ा मुहम्मद अतहर, मुन्शी महाराजबली और अख़्तर की मदद से उसकी मन्कूहा औरत को पहाड़ पर भगा ले गये हैं। सुना है, कोई रईस इसकी जड़ में है। उसी ने क़िदरा को तैयार किया है और रुपया भी ख़र्चता है। मैंने थानेदार से बातों-बातों में पूछा था। उसने कहा कि इस जुर्म संगीन में सात बरस की सख्त क़ैद है। भाई साहब, यहाँ हम सब के होश उड़े हुए हैं, मगर ख़ुदा

की करीमी पर भरोसा है। वह बन्दा नवाज़ है। वकीलों से मश्विरा लो और नाज़ो और कुमरिन को कहीं भेज दो। आप वहाँ कील-काँटे से लैस हरदम होशियार रहिये। मुल्ज़िमों को रूपोश कर दीजिये, क्योंकि यहाँ से कोई सब-इन्स्पेक्टर तहक़ीक़ात के लिए ज़रूर रवाना होगा। बहुत होशियार रहिये और दोनों को अपने पास से अलग कर दीजिये, ताकि पुलिस अगर उनको ढूँढ़ भी निकाले, तो तुम पर तो आँच न आने पाये। ऐसे मौके पर घबराना और परेशान होना ठीक नहीं, तदबीर से काम लेना चाहिये। तार के ज़रिये खबर भेजता रहूँगा। —खाकसार रौनकजंग, लखनऊ।"

खत पढ़ते ही नवाब साहब के हाथ-पाँव फूल गये, सब खरमस्तियाँ भूल गये। महाराजबली थर-थर काँपने लगे। आग़ा का चेहरा पीला पड़ गया। छुट्टन साहब चुप। मम्मन के हाथ-पाँव सर्द हो गये। जमलू ने दुआ पढ़नी शुरू की। घर भर में मातम छा गया। नाज़ो और मग़लानी पर्दे के पास से खत सुन रही थीं। मुग़लानी के लाख-लाख मना करने पर भी नाज़ो ने कुमरिन से सब हाल कह सुनाया। सुनते ही कुमरिन का चेहरा पीला पड़ गया और एक मिनट भी न गुजरने पाया था कि ग़श आ गया। लखलखा सुँघाने पर जब होश आया तो हाथ-पाँव बर्फ से सर्द। थोड़ी ही देर में कँपकँपी चढ़ी, पलँग पर लिटाया, लिहाफ़ ओढ़ाया, उस पर रजाई डाली, उस पर दुशाला, उस पर तूस; मगर कँपकँपी बन्द न हुई।

नाज़ो की बुरी हालत थी। सोचती थी या अल्लाह, अब क्या होना है! मुश्कें कसी जायँगी, जेलखाना होगा, वहाँ चक्की पीसनी पड़ेगी। मर्द भी बहुत से होंगे, बे-इज्जत करेंगे-बे आबरू करेंगे, बड़ी रुस्वाई होगी। मनाती थी कि ज़मीन फट

जाय या पहाड़ टूट पड़े। दुआ माँगती थी कि किदरा को हैजा हो जाये, उसका जनाज़ा निकले। कुमरिन की हालत ने उसे और भी परेशान कर दिया था।

नवाब साहब इधर तो अपनी बदनामी के ख़्याल से परेशान थे उधर कुमरिन की बीमारी देखकर और भी हाथ-पाँव फूल गये। कभी नाज़ों को समझाते; कभी कुमरिन को। आँखों से आँसू जारी थे। मालिक की हालत देखकर नौकर भी परेशान थे और खुदा से दुआ माँगते थे कि यह बुरी घड़ी फिर न दिखाये।

महाराजबली बदहवास थे। उन्हें फ़िक्र थी कि कहीं तमाम उम्र की कमाई और बाप-दादों की जमा इस मुकदमे में वकीलों, अहलकारों और पुलिस की नजर न हो जाय। उनको यह फ़िक्र थी कि रकम खर्च करनी पड़ेगी। चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय। इनको फ़िक्र थी कि किसी तरह रुपया बचे। उन्होंने फौरन खिदमतगार को भेजकर बैरिस्टर साहब को बुलवाया। थोड़ी देर में बैरिस्टर साहब आये। देखा कि नवाब का चेहरा उतरा हुआ है और बहुत ही घबराये हुए हैं।

बैरिस्टर—क्यों ख़ैर तो है ?

छुट्टन—आज लखनऊ से नवाब रौनकजंग का आदमी ख़त लाया है। उसमें लिखा है कि कुमरिन के शौहर ने थाने पर रपट लिखायी है कि नवाब मुहम्मद अस्करी उसकी मन्कूहा बीबी को ब नियत हराम नैनीताल भगा ले गये हैं। उन्होंने यह भी लिखा है कि जुर्म संगीन है और इसकी सज़ा सात बरस की सख्त कैद है।

बैरिस्टर—सज़ा तो तब हो जब जुर्म साबित हो जाय और सबूत क्या दिल्लगी है। इसमें खाली जुर्माना भी हो सकता है। हाकिम की राय पर है।

नवाब—जुर्माना तो पचास हज़ार भी हो तो क्या है। मगर क़ैद का नाम सुनते ही रूह फ़ना होती है।

बैरिस्टर—एक बात और बता दूं, इसमें राजीनामा भी हो सकता है। किद्रा को दो-चार हज़ार देकर राज़ी कर दो।

छुट्टन—नवाब रौनकजंग ने लिखा है कि कोई नवाब साहब किद्रा के शरीक हुए हैं। यह सब काँटे उन्हीं के बोये हैं।

मम्मन—दो ही बातें हैं, खुदावन्द ! या तो कोई हुज़ूर का दुश्मन पैदा हो गया या कोई कुमरिन के चाहने-वालों में है।

आग़ा—हाँ, कुमरिन से पूछा जाय। कहिये कि साफ़-साफ़ बता दें शरमायें नहीं।

छुट्टन—आप भी आग़ा साहब कभी-कभी आँख बन्द करके बातें करते हैं। कुमरिन बेचारी का हाल देख चुके कि ग़श आ गया और अब जूड़ी में काँप रही हैं। यह मौका उनसे पूछने का कौन है ?

बैरिस्टर—क्या कुमरिन को ग़श आ गया ? अब क्या हाल है ? चलिये, वहीं चलकर बैठें। सब उठकर कोठी के अन्दर गये। देखा कि चारों तरफ़ कुहराम मचा था। नाज़ो अलग रो रही थी और कुमरिन पलँग पर लेटी काँप रही थी।

नवाब—क्या मुसीबत का वक्त है ? मैं सोचता हूँ कि कुमरिन का तो यह हाल है जब नौ-दस आदमी खिदमत को मौजूद हैं। थोड़ी देर में गिरफ़्तार हो जायँगी तो क्या होगा ?

बैरिस्टर—अरे भई, गिरफ़्तार नहीं हो सकतीं। यह जमानत का मुकद्दमा है। लाखों की जमानत तुम्हारी हो सकती है। सब्र से काम लीजिये; बदहवासी में तो मामला और भी बिगड़ जायगा।

नाज़ो—(चौंककर) बन्दगी ! क्यों हुजूर अब हमारा क्या हश्र होगा ? (बैरिस्टर के कदमों पर गिरकर) हुजूर, कोई वकील कर दीजिये। हुजूर, ऊपर हमारा अल्लाह और नीचे आप। अब इस वक्त आप ही का भरोसा है सरकार !

बैरिस्टर—हाँ-हाँ, क्या गजब करती हो। यहाँ से लन्दन तक लड़ूँगा। जान हाज़िर है।

नवाब—बड़ी तशफ़्फ़ी हुई आपके आने से। मैं समझा था कि बस अब वारंट आया और पुलिसवालों ने गिरफ्तार किया।

आग़ा—जिला लिया साहब ! इतने में कुमरिन कुछ कुल-बुलायी। आहिस्ता से पूछा, "कौन बोलता है ?"

नवाब साहब ने फ़र्श पर बैठकर तूस और दुशाला हटाया और लिहाफ़ उलटकर पूछा "जानी, अब कैसी हो ?"

कुमरिन—(आहिस्ता से) अब रोना भी नहीं आता।

नवाब—घबराओ नहीं कुमरिन जान, रोयें तुम्हारे दुश्मन।

कुमरिन—नहीं अब रोने तक की ताकत नहीं रही। अब क्या होगा जी, कैद हो जाँयगे ! (रोकर) नवाब, यह क्या हो गया ?

बैरिस्टर—(पास जाकर) बी कुमरिन जान, मिजाज कैसा है ?

कुमरिन—सरकार, कुछ न पूछिये। अब तो अल्लाह करे आँखें बन्द हो जायें। बस हुजूर ही लोगों का सहारा है। हम को बिन दामों की लौंडी समझिये। कैदखाने में कभी-कभी खबर लिया कीजियेगा। कहते-कहते आँसू भर आते हैं और धाड़ें मारकर रोने लगती है।

बैरिस्टर—अगर आपको कैद हो तो हम बैरिस्टरी का पेशा छोड़ दें। घबराओ नहीं। हम जिम्मा लेते हैं।

नाज़ो—बड़ी ढाड़स हुई हुजूर। और नवाब साहब को?

बैरिस्टर—इन पर अगर मुक़द्दमा साबित हो गया तो क़ैद या जुर्माना। मगर यक़ीन तो है कि जुर्माना ही हो।

कुमरिन—(रोकर) हे हे, फिर तो कुछ न हुआ। हमारी हर तरह ख़राबी है। हुजूर कोई तरकीब निकालिये। मैं लौंड़ी हो जाऊँ। उम्र भर लौंडी बनी रहूँ।

बैरिस्टर—मगर यह बताओ कि अगर नवाब भी बाल-बाल बच जायँ तो क्या इनाम दोगी?

कुमरिन बाजी को आपके सिपुर्द कर देंगे। (मुस्करा कर) बस।

कुमरिन के मुस्कराते ही सारा घर खिल उठा। मुग़लानी ने बलायें लीं और महरी बाहर अमले को इस बात की ख़बर देने दौड़ी गयी।

बैरिस्टर—तो अपनी बाजीजान को हमारे सिपुर्द कर दीजियेगा?

कुमरिन—बेशक, क़ौल दे चुके।

नवाब—भाईजान, पहले नाज़ोजान तो हामी भरें।

नाज़ो—हम राजी हैं, हमारा क्या नुक़सान है। महाराजबली बुढ़ऊ को लेके हम क्या करेंगे। यह अभी जवान गभरू हैं। गोरे-गोरे गाल, हाथ-पाँव अच्छे। लो हम राज़ी हो गये।

कुमरिन—नवाब, एक बात साफ़-साफ़ बता दो कि हम एक जगह रहें या अलग हो जायँ?

बैरिस्टर—तुमको नवाब साहब से कुछ दिन अलहदा तो ज़रूर रहना पड़ेगा। पुलिस के फ़रिश्ते खाँ को भी तुम्हारा पता न लगेगा।

नाज़ो—तो फिर अब बन्दोबस्त करो। जब दौड़ आ जायेगी तब फिर क्या होगा?

बैरिस्टर—ठीक है। नवाब साहब, अब आप एक काम कीजिये। अपने दोस्त को बुलवाइये जिनकी यह कोठी है। वह यारबाज़ आदमी है उससे बड़ा मतलब निकलेगा। उनसे एक मकान लीजिये। नाज़ो, कुमरिन. मुग़लानी वग़ैरा सब को उसमें भेज दीजिये और आप मजे से दनदनाइये। नवाब रौनक़ जंग को तार दे दीजिये कि जिस दिन इन्स्पेक्टर रवाना हो फ़ौरन तार दे दें, मगर इशारों में। एक आदमी काठगोदाम पर तैनात कीजिये कि ज़रा पुलिसवाले की टोह हो तो घोड़ा फेंकता हुआ दौड़ आये या तार दे दे। इन्स्पेक्टर कोठी पर आयेगा, आप मजे से बैठे रहियेगा। कैसी कुमरिन, कहाँ की नाज़., इधर-उधर तहक़ीक़ात करके अपना-सा मुँह लेकर चला जायेगा। इससे बेहतर तदबीर और क्या होगी? तुम ख़ामोश बैठे रहो, हम भुगत लेंगे। मगर उस रईस की मदद बग़ैर कुछ न होगा। उनके ज़रिये से यहाँ के पुलिसवालों को भी गाँठ लो।

नवाब—मम्मन, जाकर सेठजी को हमारी तरफ़ से सलाम दो और कहो कि हमको आपसे बड़ा ज़रूरी काम है। अगर फ़ुर्सत हो तो तकलीफ़ करके तशरीफ़ लाइये, वर्ना बन्दा खुद हाज़िर हो। काम बड़ी जल्दी का है।

थोड़ी देर में सेठजी तशरीफ़ लाये। उनको ड्राइंग रूम में बिठाया गया। इलायची, सुपारी से उनकी ख़ातिर की गयी।

नवाब—सेठजी साहब, मैंने तकलीफ़ दी है। इस वक्त मुझे आपसे एकान्त में एक ज़रूरी सलाह करनी है।

गुमाश्ता यह सुनकर उठने लगा तो छुट्टन साहब ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—सेठजी, अगर यह आपके विश्वास-पात्र हों तो क्या हर्ज है। सेठजी ने अपने गुमाश्ते की बड़ी तारीफ़ की।

छुट्टन—सेठजी, हम लोगों का यहाँ कोई अजीज़ रिश्तेदार

तो है नहीं, जो कुछ हैं अज़ीज़ रिश्तेदार, भाई-बन्द, दोस्त सब आप ही हैं। अगर आपके इस पहाड़ पर कोई मुसीबत हम पर पड़े, तो सिवाय आपके और किस से मदद लें, फ़रमाइये।

सेठजी—क्यों ख़ैरियत है? मुसीबत कैसी?

छुट्टन - शर्म आती है कहते हुए, सेठजी! हमारे दोस्त नवाब मुहम्मद अस्करी साहब जो आपके मेहमान हैं इनसे एक खता हो गयी है। लखनऊ में एक शख्स इनके पास एक जवान खूबसूरत औरत को लाया कि बिन ब्याही है और इसका कोई वारिस भी नहीं है। नवाब साहब ने जो उसको देखा तो हज़ार जान से आशिक़ हो गये। जवान आदमी तो हैं ही, उसको नौकर रख लिया।

सेठजी—खूब किया, हम भी यही करते, बल्कि हम तो पहाड़ पर उसको ले आते। किसी की ब्याहता नहीं तो क्या हर्ज है। तो क्या आप उस औरत को यहाँ बुलवाना चाहते हैं?

छुट्टन—हाँ चाहते तो हैं, मगर अब यह सुनने में आया कि उसका शौहर भी मौजूद है।

सेठजी—यह रोग है। मगर क्या किसी भलेमानस की लड़की है?

छुट्टन—अजी नहीं, चूड़ीवाली है।

सेठजी—बुलवा लीजिये।

छुट्टन—और जो उसके मियाँ ने वारण्ट जारी कर दिया?

सेठजी—आप बुलवायें तो सही।

छुट्टन—वह यहाँ नैनीताल में मौजूद है।

सेठजी—तो फिर चैन कीजिये और अगर कोई खौफ हो तो हमसे फरमाइये हम बन्दोबस्त कर देंगे। आपका इशारा भर काफ़ी है। मेरी जान तक हाज़िर है। आप मुझसे कुछ छुपाइयेगा नहीं।

छुट्टन—जनाब, आपसे छुपायेंगे तो क्या कोई बेवकूफ हैं। आपके भरोसे तो हम यहाँ पड़े हैं। सुना है कि उसका मियाँ मौजूद है, उसने थाने पर जाकर रपट लिखवायी है और वहाँ से वारण्ट जारी हुआ है। हम नहीं चाहते कि आपकी बदनामी हो कि आपकी कोठी में ऐसे बदमाश लोग आपके मेहमान होकर टिके हैं जिनके नाम ऐसे सख्त जुर्म में वारंट आया। तो अब अर्ज यह है कि कोई कोठी या मकान ऐसा तजवीज दीजिये कि जहाँ हम उस औरत को छुपा दें। इन्स्पेक्टर यहाँ आकर तलाशी लेगा, औरत का पता न मिलेगा, बस अपना-सा मुँह लेकर चला जायगा। हम आपका यह एहसान तमाम उम्र न भूलेंगे।

सेठजी—एक मकान नहीं दस। जान तक आपके काम आये तो हाजिर है। मैं अभी-अभी बन्दोबस्त किये देता हूँ, आप इत्मिनान रखें। (गुमाश्ते से) इसका बन्दोबस्त फ़ौरन करना चाहिए।

गुमाश्ता—आप नवाब साहब से बातें कीजिये और उन्हीं के पास बैठिये। मैं दो घण्टे के बाद आऊँगा इसके अन्दर-ही-अन्दर बन्दोबस्त हो जायगा।

छुट्टन—ऐसे ही कारिन्दों पर तो आक़ा अपनी जान तक कुर्बान कर देते हैं। इस वक्त जी बहुत .खुश हुआ।

नवाब—सेठजी, आप इस बारे में बड़े खुशनसीब हैं। ऐसे कारिन्दे क़िस्मतों से मिलते हैं। गुमाश्ता रुखसत हुआ और यहाँ गप्पें लड़ने लगीं। एक-एक करके सभी इकट्ठे हो गये। नाज़ो भी बुला ली गयी। सेठजी नाज़ो को देखकर बड़े खुश हुए। दो घण्टे बाद गुमाश्ता आया। नवाब साहब ने पूछा—कहिये, क्या बन्दोबस्त होता है ?

गुमाश्ता—हुजूर बन्दोबस्त होता है क्या मानी, एक इशारा काफ़ी था। इतनी देर में तो पलटन भर का बन्दोबस्त हो जाय।

एक औरत के लिए बन्दोबस्त करना कौन मुश्किल बात है। (सेठजी से) लाल कोठी के पासवाला बँगला ठीक किया है, उसमें सब सामान लैस है। दो नौकर मुक़र्रर कर दिये गये हैं। जिस वक्त जी चाहे, उस वक्त ले चलिये। नवाब साहब ने गुमाश्ते की मुस्तैदी की बड़ी तारीफ़ की। दूसरे दिन सवेरे जाना तय हुआ।

नवाब—सेठजी साहब, हम यह चाहते हैं कि एक होशियार आदमी काठगोदाम में बिठा दिया जाय कि अगर कोई पुलिस अफ़सर रेल से उतरे, तो वह फ़ौरन वहाँ से तार भेज दे। तार यहाँ से लिखा दिया जायगा।

गुमाश्ता—तो एक काम कीजिये हुज़ूर, दो आदमी तो हम अपने भेजते हैं और एक आदमी आप अपना भेजिये। तीन होशियार आदमी हों, यों मतलब निकल आये। रेल पर हमारा एक आदमी नौकर है। उससे भी मदद मिलेगी।

नवाब साहब ने मम्मन को भेजने की राय दी और वह एक सौ रुपये का नोट और पचास नक़द लेकर काठगोदाम रवाना हो गया। नवाब साहब ने सेठजी की बड़ी तारीफ़ की, शुक्रिया अदा किया और एहसान माना। सब इन्तज़ाम करके सेठजी अपने घर गये।

यहाँ से सेठजी इन्स्पेक्टर पुलिस नैनीताल के पास गये। वह उनका बे-दामों का गुलाम था। सारा हाल सुना दिया और मदद माँगी। इन्स्पेक्टर सेठजी के नमकख़्वारों में से थे ही मदद देने को राज़ी हो गये। दूसरे दिन सेठजी इन्स्पेक्टर साहब को लेकर नवाब साहब की कोठी पर गये और सबसे मुलाक़ात करायी। पहले तो पुलिस वाले को देखकर सबकी नानी मर गयी मगर जब सेठजी ने उनकी तारीफ़ की तो सबकी जान में जान आयी।

सेठजी—मैं इनको ले आया हूँ कि आपसे इनकी मुलाकात हो जाय। पुलिस में तो ऐसे अफ़सर पाइयेगा ही नहीं। हकूमत का ग़रूर तो छू ही नहीं गया है।

नवाब—हम पर तो एक मुसीबत पड़ी है जनाब इन्सेक्टर साहब।

इन्सपेक्टर—खुदा आपकी मुसीबत दूर करे, बड़ा रंज हुआ वल्लाह। मगर इंशा अल्लाह कुछ न होगा। देखिए, जब आपके यहाँ कोई वारंट लेकर आये तो आप साफ कह दीजियेगा कि हम किसी को न भगा लाये, न ले भागे, न उड़ा ले गये और न यह हमारी वजा है। यह हमारे किसी दुश्मन की साज़िश से वारंट जारी कराया गया है। हमको ख़बर नहीं कि यह कौन औरत है और कहाँ पर रहती थी। मकान हाज़िर है, आप एक-एक कोने को देखकर अपनी तसल्ली कर लीजिए।

इस सलाह-मश्विरे के बाद जब इन्स्पेक्टर साहब चलने लगे तो छुट्टन साहब ने दस अशर्फ़ियाँ उनकी नज़र कीं। इन्स्पेक्टर साहब ने थोड़ा आगा-पीछा करके ले ली और रुख़सत हुए।

शाम को नाज़ो वग़ैरह नयी कोठी में चली गयीं।

[४७]

तलाशी

तीन दिन बाद लखनऊ का कोतवाल इन्स्पेक्टर नैनीताल के साथ तलाशी लेने नवाब साहब की कोठी पर आया। यहाँ तो सधी-बधी बात थी ही। सभी मौजूद थे और शतरंज हो रही थी।

इन्स्पेक्टर—जनाब नवाब साहब, आप लखनऊ के कोत-

वाल हैं और यहाँ इस ग़रज़ से आये हैं कि अब मैं क्या अर्ज़ करूँ !

नवाब—फ़रमाइये-फ़रमाइये, आख़िर कुछ मालूम भी तो हो जनाब ?

कोतवाल—मैं पहिचानता नहीं हूँ। नवाब मुहम्मद अस्करी किनका नाम है, उनसे कुछ कहना है।

नवाब—फ़रमाइये, अस्करी बन्दे का नाम है।

कोतवाल—आप क़िद्रा से भी वाक़िफ़ हैं ? क़ादिर चूड़ी-वाला।

नवाब—क़ादिर चूड़ीवाला ! क़ादिर चूड़ीवाला कौन ?

कोतवाल—आप उससे वाक़िफ़ हैं या नहीं ?

नवाब—और कुछ पता उसका दीजिए। चूड़ीवाले से और मुझसे क्या सरोकार हज़रत ?

कोतवाल—असलियत यह है कि कोई मनिहार है क़िद्रा नाम का। उसकी जुरुआ को कोई जात शरीफ़ टाँच ले गये। सो उसने रपट लिखवा दी कि नवाब मुहम्मद अस्करी उसकी बीबी को पहाड़ पर भगा ले गये हैं।

नवाब—(बहुत हँसकर) वल्लाह ! छुट्टन साहब, ज़रा सुनो तो; शतरंज तो रहने दीजिये क़िब्ला।

छुट्टन—क्या-क्या हरामजादे लोग हैं !

नवाब—यह लतीफ़ा सुना आपने आग़ा साहब ? क़िद्रा कोई पैदा हुए हैं जिनकी बीबी को मैं भगा लाया हूँ, और ज़ात के मनिहार हैं।

आग़ा—लाहौल वला कूवत ! ऐसी आला ख़ान्दान औरत आपको कहाँ मिलती ! क्या-क्या हज़रत हैं ?

लंदनी—आख़िर यह हैं कौन साहब ?

नवाब—कोई हमारे मिहरबान पैदा हो गये होंगे। वल्लाह !

इस पाजीपने को तो देखो कि किदरा मनिहार की जुरुआ को मैं भगा के यहाँ ले आया हूँ। इस क़दर गुस्सा इस वक्त है कि अपनी बोटियाँ नोचने को जी चाहता है।

कोतवाल—मुझे खुद हैरत थी कि यह मामला क्या है? मगर वह तो थाने पर ढाढ़ोंढार रोता था 'हाय कुमरिन! हाय कुमरिन!' कह-कहकर और मुंशी महाराजबली की साज़िश बताता था।

आगा—जनाब, ज़रा यह तो फरमाइये यह कुमरिन कौन नेक बख्त हैं जिनका नाम आप दो बार ले चुके हैं।

कोतवाल—जी यह मुसम्मात कुमरिन उसी किदरा की औरत का नाम है। यह मुंसी महाराजबली कौन साहब हैं?

मुंशीजी—वह कल यहाँ से चले गये। जनाब, उनको कुत्ते ने काटा था तो ककराल गये हैं।

कोतवाल—खूब, हाँ, है दाल में काला-काला। अच्छा, अब सरकारी काम। तलाशी दिलवाइये। इसी कोठी में नवाब साहब रहते हैं न?

बैरिस्टर—तलाशी दिलवाइये क्या मानी। कोठी खुली हुई है, देख लीजिए। औरत कोई सुई नहीं है।

कोतवाल—(सिपाहियों से) इस कोठी में देख लो कोई औरत है कि नहीं और ललतुआ को बुला लो कि शिनाख्त करे। मुझे खुद अफ़सोस है कि ऐसे रईस के यहाँ मैं इस काम के लिए आया। मगर मजबूरी है।

नवाब—आपका इसमें क्या कसूर है, भला?

थोड़ी देर में सिपाही ने आ कर कहा—हुजूर यहाँ तो कहीं औरत है नहीं।

इन्सपेक्टर और कोतवाल रुख्सत हुए। इधर सबने मुंशीजी

की ले-दे शुरू की और सख्त शिकायत की कि उन्होंने अपना नाम क्यों छिपाया वगैरह ।

दिन छुपे नवाब साहब मय दोस्तों के कुमरिन की कोठी पर गये और यह सलाह ठहरी कि अब नैनीताल ठहरना बेकार है। लखनऊ चला जाय मगर नाज़ो और कुमरिन को साथ ले जाना खतरे से खाली न था। उनके लिए तजवीज़ की गई कि बैरिस्टर साहब उन दोनों को अल्मोड़ा ले जायँ और वहाँ से मुरादाबाद होते हुए नवाब छुट्टन के इलाके में पहुँचे और दोनों परियाँ कुछ दिन वहीं रहें ।

× × × ×

दूसरे दिन नवाब मुहम्मद अस्करी मय लाव-लश्कर काठगोदाम रवाना हुए। काठगोदाम पहुँचकर एक फर्स्ट क्लास में दाखिल हुए तो देखा कि दो अँगरेज़ों का सामान रखा हुआ है। दूसरे फ़र्स्ट क्लास में पहुँचे तो एक मिस और आया को पाया। तीसरे फ़र्स्ट क्लास में गये तो दो मिसें और एक साहब बहादुर, चौथे फ़र्स्ट क्लास में, जो इंजन के पास था उनको जगह मिली।

दूसरे दिन सबेरे लखनऊ पहुँचे। दोस्त अहबाब स्वागत को आये हुए थे। सबसे बग़लगीर हुए। मिलने, भेंटने के बाद अपनी-अपनी सवारियों पर सवार होकर अपने-अपने घर रवाना हुए। मुंशी महाराजबली की पुराने फैशन की बिगनैट (गाड़ी) आयी थी। वही सुरंग घोड़ा, वहीं चमार कोचमैन, फटे-फटे कपड़े पहिने हुए। आग़ा साहब का समन्दरस्याह जानू रान सवारी का घोड़ा था। अँगरेजी क़ीमती काठी, साईस वर्दी से लैस। यह सवार हुए तो हवा से बातें करते हुए चले। नवाब छुट्टन की पालकी गाड़ी आयी थी, जोड़ी जुती हुई, शर्गा याबू, बटेश्वर के मेले की ख़रीद। नवाब मुहम्मद अस्करी

साहब के ठाठ सबसे उजले थे। बैलर की जोड़ी हवा से बातें करती हुई, साईस शानदार वर्दी पहिने हुए, ज़र्क-बर्क।

नवाब मुहम्मद अस्करी सीधे घर न जाकर नवाब रौनक जंग के यहाँ पहुँचे। दोनों बड़ी मुहब्बत से मिले और इधर-उधर की बातें होने लगीं।

नवाब—हाल-चाल कह चलो भई। कुमरिन के मियाँ ने तो हिला दिया वल्लाह। तहलका डाल दिया।

रौनक—अजी लाहौल वला कूवत। भला यह भी आपको मालूम है कि यह सब काँटे किस बच्चा शैतान के बोये हुए हैं?

नवाब—कौन ज़ात शरीफ हैं यह, कौन मेरा दुश्मन पैदा हो गया? मैं सुनूँ तो, यह कौन बजुर्ग हैं? मुझे हैरत है कि मैंने किसका बाप मारा है, जो मेरे साथ इस क़दर बदी कर रहा है!

रौनक़—सँभल बैठिये, खूब सँभले हुए हैं ना? सुनिये, यह सारी कारिस्तानी और सब काँटे बोये हुए ख़ास वशीरुद्दौला (गाली) के हैं।

अख़्तर—अजी नहीं हुजूर! क्या कहते हैं आप!

नवाब—उफ़ वशीरुद्दौला और हमारी आबरू का चाहनेवाला! हमारा जानी दुश्मन! यक़ीन नहीं आता। मगर कहाँ तक न यक़ीन आये। जब तुम कहते ही हो, तो क्योंकर यक़ीन न आये? मगर वाह री दुनिया! बशीरुद्दौला और हमारा दुश्मन! अफ़सोस, हैरत है, वल्लाह हैरत है कि यह क्या सुना।

रौनक—इसमें क्या शक है भाई, हैरत क्यों न हो?

अख्तर—मेरी समझ में अब तक न आया।

रौनक—अब तो हम इस फ़िक्र में हैं कि उस (गाली) को

पिटवादें। इतने बे-भाव के जूते पड़ें कि खोपड़ी खरगंजी हो जाय। वशीरुद्दौला की तरफ़ तो कभी गुमान भी न था। सुनते ही होश उड़ गये, वल्लाह होश ठिकाने नहीं रहे।

इतने में चाय आई और नवाब साहब चाय पीकर रुख़सत हुए। मगर मन में बड़ी ख़ौफ़ और शर्म थी। कोठी में दाख़िल हुए तो फ़ौरन् घर में गये। महलख़ाने में दो मिनट टहलकर कहा, "यहाँ तो लोगों ने बड़ी-बड़ी अफ़वाहें मशहूर कर दीं। सब झूठ हैं, तुम लोग हरगिज़ न घबराओ। मैं तो इतना नादिम हूँ कि घर में सूरत न दिखाता, मगर सोचा कि शायद और ज्यादह परेशानी हो। दो-चार रोज़ में इन्शाअल्लाह सब साफ़ हो जायगा। मुफ़्त की बदनामी हुई।

बेगम बड़ी अक़्लमन्द और आला ख़ान्दान थीं। उन्होंने नवाब को देखकर मुस्करा दिया। नवाब साहब की साली उफ़्त-आरा बेगम ने कहा, चलो, जो हुआ सो हुआ। हमको यही क्या कम ख़ुशी है कि तुम सही-सलामत लौट आये। कलेजा दहल गया था। नवाब साहब तो समझे थे कि घर में जूतियाँ पड़ेंगी, बेगम मुँह चढ़ा के बैठेंगी, बात न करेंगी, उफ़्तआरा बेगम अलग ताने देंगी, मगर आये तो देखा कि वह उल्टा दिलासा देती हैं। बेगम जान-बूझकर मुस्कराने लगीं, ताकि नवाब झेंपें नहीं, साली ने भी कोई ताना नहीं दिया। नवाब साहब समझ गये कि इन दोनों ने आपस में सलाह कर ली है कि नवाब को ज्यादह ख़फ़ीफ़ न किया जाय। कहीं ऐसा न हो कि दिल को ठेस लगे। इसी लिए बेगम मुस्कराने लगीं और साली साहबा जान-बूझकर चुप हो रहीं। उफ़्तआरा बेगम ने नवाब से इसरार किया कि खाना भी जनानख़ाने में ही खायें। नवाब साहब ने फ़ौरन् मंजूर कर लिया और इत्मीनान से पलँग पर बैठकर पहाड़ों का हाल सुनाना शुरू किया।

[४८]

पुलिस की चालें

कोतवाल साहब जो नैनीताल से ख़ाक फाँकते, धूल उड़ाते लखनऊ में ख़ाली हाथ तशरीफ़ लाये तो इन्सपेक्टर साहब ने उनको बहुत आड़े-हाथों लिया, क्योंकि वह ललतुआ से वहाँ का पूरा हाल सुन चुके थे। इन्सपेक्टर चूँकि बशीरुद्दौला से गँठे हुए थे, इसलिए इस मामले में और भी ज्यादा दिलचस्पी ले रहे थे। बेचारे कोतवाल को तो खूब ही डाँटा, फिर नवाब बशीरुद्दौला से सलाह-मश्विरा करके लखनऊ में ही तहक़ीक़ात शुरू कर दी।

पहले उस मकान पर तशरीफ़ ले गये, जहाँ नवाब मुहम्मद अस्करी ने कुमरिन को ले जाकर रखा था। मालिक मकान ने बे लौस गवाही दी, बेग़मात या औरतों के मकान में टिकने से साफ़ इन्कार कर दिया। यह दाँव ख़ाली जाने पर दारोग़ाजी ने मकान के सामनेवाले बनिये को बुलाया।

"इस मकान में कोई नवाब इस बरस छः महीने के अन्दर-अन्दर आके टिके थे?"

बनिया—हाँ हज़ूर, टिके थे। उनके साथ जनाना भी था।

दारोग़ा—भला वह बेगम थी या बाज़ारू औरतें?

बनिया—हज़ूर अब ले (मुस्कराकर) अजी हज़ूर, घर-गिरहस्त तो नहीं थीं मुदा नवाब उन पर लट्टू थे।

दारोग़ा—तुम्हें यह कहाँ से मालूम हुआ?

बनिया—मामा-वामा जिन्स लेने आती थीं, सो वही कहा करती थीं।

दारोग़ा—नाम तो तुमको मालूम होगा?

बनिया—जी हाँ, हमारे पास लिखा है। (बही के पन्ने उलटकर) नाम क़मरुन्निसा बेगम।

दारोग़ा—तो तुमको यह शक है कि नवाब साहब कहीं से भगा लाये थे?

बनिया—सक (शक) नहीं हुजूर, एक महरी कहती थी।

दारोग़ा ने नाम पूछकर सिपाही को भेजकर महरी को बुलवाया। कोई तीस-बत्तीस बरस का सिन (उम्र), नख-शिख से दुरुस्त, प्यारी-प्यारी सूरत। चुस्त कुरती पहिने हुए आके दारोग़ाजी को झुककर सलाम किया और कहा, "सरकार ने लौंडी को काहे को याद किया है? मैं अभी-अभी खाना खाने बैठी थी कि एकाएकी सिपाही ने आवाज़ दी, बस कलेजा धक्-से रह गया कि या अल्लाह, ख़ैर कीजिये! बस दो निवाले भी नहीं खाने पायी थी कि हाथ खींच लिया और हाज़िर हुई। लौंडी के क़ाबिल जो काम हो फ़रमा दीजिये।"

दारोग़ा—घबराओ नहीं। हम सिर्फ़ इतना दरियाफ़्त करना चाहते हैं कि क्या तुम इस बड़े मकान में भी नौकर थी?

महरी—जी हाँ हुज़ूर!

दारोग़ा—इसमें कौन रहता था? कौन थीं? कहाँ की रहनेवाली थीं? नाम क्या था?

महरी—नाम तो इस समय याद नहीं आता, मगर रहनेवाली तो बोली-ठोली, बातचीत पोशाक से यहीं की मालूम होती थीं, आगू अल्लाह जाने।

दारोग़ा—फिर वहाँ से तुमने नौकरी छोड़ क्यों दी?

महरी—उनसे-हमसे बनती नहीं थी। मिजाज़ की ज़री कड़ी

है और हमसे किसू की आधी बात सुनने की बरदाश्त नहीं कि हम किसू की आधी बात सुनें।

दारोग़ा—वह यहाँ से कहाँ गयी ?

महरी—अल्लाह जाने मैं तो फिर झाँकी तक नहीं।

मतलब की बात न निकलते देखकर दारोग़ा ने बात बदल कर पूछा—अच्छा, उनके पास कोई मर्द भी आता था ?

महरी—उई, कोई मर्द क्या माने, वह तो ब्याहता हैं।

दारोग़ा—यह तुम्हें कहाँ से मालूम हुआ

महरी—हम नौकर ही जो थे हुज़ूर।

यहाँ दाल न गलती देखकर दारोग़ा जी रुख़सत होकर नवाब वशीरुद्दौला के घर पहुँचे। सारा हाल बयान किया। बनिये की गवाही अव्वल नम्बर की थी, ज़रा खुटका महरी की तरफ से था। सलाह हुई कि उसे नवाब बशीरुद्दौला की कोठी पर बुलाया जाए। फ़ौरन सिपाही को भेजकर महरी बुलवायी गयी। कोई घण्टा भर में महरी आयी। सफ़ेद जोड़ा पहिने हुए, बनी-ठनी। कमरे में आकर झुककर सलाम किया।

वशीरुद्दौला—हमारी नौकरी करोगी ?

महरी—ऐ हुज़ूर, हम लोगों का और काम ही क्या है ? कुछ खेती तो होती नहीं, पुलिस में नौकरी करने से रहे। हम तो महलखाने में नौकरी करते हैं ख़ुदावन्द। मर्दों में जो नौकरी करती हों उनसे कहिये।

दारोग़ा—अच्छा बी महरी, उस बड़े मकान में जो रहती थीं उनका कुल हाल जो-जो मालूम हो, बतला दो।

महरी—हुज़ूर, जिसका नमक खाया उसके घर का हाल लिखवाना नमकहरामी है। आयन्दा हुज़ूर भी मालिक हैं, जो हुक्म हो।

दारोग़ा—कैसा नमक और वह कोई शरीफ़ज़ादी तो हैं नहीं,

बाज़ारी औरतें हैं। उन्होंने हमारे एक दोस्त पर ज़िना (बलात्कार) का मुकदमा दायर किया है, तो हम यह साबित करना चाहते हैं कि वह वेसवा हैं और उनका यह पेशा ही है।

मेहरी—तो यह बात है। नवाब मुहम्मद अस्करी उनको भगा लाये थे। जात की मनिहारिन थी और क़ुमरिन उसका नाम था। जब वह इस घर से कहीं बाहर चली गयी तो हम नौकरी छोड़ चुके थे।

दारोग़ा जी यहाँ से चले तो सीधे कुमरिन की दादी के घर पहुँचे। पुलिस के जवानों को देखकर सारा मुहल्ला इकट्ठा हो गया। दारोग़ा जी और भी अकड़ गये। अकड़कर बुढ़िया से पूछा "तुम्हारी लड़की कुमरिन कहाँ है ?"

बुढ़िया—अल्ला जाने सूबेदार साहब ! क्या जाने कौन फुसला के ले गया और अब निकलने नहीं देता। रोते-रोते मेरी आँखें फूट गयीं।

दारोग़ा—तुम्हें किसी पर शक है, भला ?

बुढ़िया—उसकी ससुराल के पास एक लौंडा रहता है ललतुआ तमोली। उसी के दम-धागे में आकर कहीं चल दी।

दारोग़ा—ऐ बुढ़िया ! साफ़-साफ़ बता कि नवाब मुहम्मद अस्करी तुम्हारी लड़की को खुद भगा ले गये थे या तुमने खुद उनके सिपुर्द कर दी ?

बुढ़िया—क़ुमरिन बदचलन थी और उसका मियाँ आँख चुरा जाता था और उस मूँड़ीकाटे के यार-दोस्त कुमरिन के पास आते-जाते थे और किंदरा को भी खिलाते थे और यह ललतुआ भी रात-दिन घुसा रहता था। मुझे यकीन होता है कि या तो ललतुआ ने घर में छुपा रखी है, या इस किंदरा ने किसू के हाथ बेच डाली। हमारी बड़ी लड़की नाज़ो, एक नवाब हैं बशी-

रुद्दौला, उनके साथ निकल गयी है। हमने उसके मियाँ को बुलवाया है, वह बशीरुद्दौला की गत बनायेगा।

इतना कहकर बुढ़िया ने कोठरी से बाहर निकलकर रोना और चिल्लाना शुरू किया और दारोगा जी और सिपाहियों को हजारों ही गालियाँ दी। सारा मुहल्ला जमा हो गया। राह चलते ठहर गये। आगे दाल गलती न देखकर दारोगा जी अपने लश्कर के साथ रवाना हो गये। मैदान बुढ़िया के हाथ रहा।

अब गवाहों को पट्टी पढ़ाई जाने लगी। सबसे पहले बरफ़-वाले लौंडे फ़ज्ले को घेरा गया। वह जब हत्थे न चढ़ा तो उसे राह पर लाने का काम नवाब बशीरुद्दौला ने अपने ज़िम्मे लिया और दारोगा जी फ़र्ज़ी गवाह गढ़ने की तलाश में गये। पहिले स्टेशन पहुँचे। वहाँ पानीवाले पांडे को और एक लाला को, जो टोपी बेचते थे रुपये का लालच देकर गवाही के लिए पक्का कर लिया। कुमरिन के पड़ोस में रहनेवाली एक आया को भी गवाही के लिए पक्का किया।

[४९]

काश्मीरी पेंच

नवाब मुहम्मद अस्करी और छुट्टन साहब को भी घड़ी-घड़ी की खबरें मिलती रहती थीं। दारोगा जी का नवाब बशीरुद्दौला से गँठ जाने का हाल भी उनको मालूम था और यह भी सुन चुके थे कि झूठी गवाहियाँ गढ़ी जा रही हैं। बैरिस्टर साहब की सलाह से नवाब साहब ने नाज़ो और कुमरिन को अपने पास न रखकर एक अलग कोठी में बैरिस्टर साहब की निगरानी में टिकाया था। रोज़ ही वहाँ महफिल जमती थी।

एक दिन हस्ब मामूल महफ़िल जुड़ी हुई थी कि नवाब रौनक़जंग बहादुर और मियाँ मम्मन आये। नवाब रौनक़जंग को देखकर नाज़ो और कुमरिन बहुत झेंपीं। रौनक़जंग ने आते ही परचा जड़ा—वाह-वा, वाह, अच्छा गुल खिलाया। इधर नवाब साहब के साथ पहाड़ पर चल दीं और उधर क़िदरा को लिख भेजा कि थाने पर रिपोर्ट लिखवा दे। तुम्हारे तो काटे का मंतर नहीं है। नवाब के साथ अच्छा सलूक किया।

कुमरिन समझी कि इनसे किसी ने जाके यह जड़ दी कि कुमरिन और नाज़ो ही ने क़िदरा को सिखाया है कि तू नालिश कर दे, इससे उसके होश उड़ गये, सैकड़ों क़समें खाने लगी। मगर नाज़ो ने, जो कि कुमरिन से ज्यादह समझदार थी मुस्कराकर बड़ी प्यारी अदा के साथ कहा, "अच्छा, फिर क्या बुरा किया साहब ? पराई बहू-बेटियां को फुसला-फुसलाकर ले जाना और निकाल लेना कौन भलमन्सी की बात है ? हम क्या जानते थे कि इनकी नीयत खराब है।"

ऐसे ही हँसी-मज़ाक के बाद मुंशी महाराजबली से पुलिस रिपोर्ट की नक़ल सुनाने के लिए कहा गया। रिपोर्ट में था कि भगा ले जाना साबित होता है, मगर उम्र के बारे में गवाहों के बयानों में फ़र्क़ है। कुछ गवाह उसे तेरह बरस का बताते हैं, मगर पड़ोसियों की गवाही से उम्र अठारह साल की ठहरती है। लिहाजा यह मुक़द्दमा दफ़ा ४९७ और ४९८ का है और दस्तन्दाज़ी पुलिस के क़ाबिल नहीं। मुद्दई अदालत में दावा करे।

अस्करी—तो अब इस रिपोर्ट पर क्या होगा ?

बैरिस्टर—पुलिस सुपरिंटेंडेंट यह रिपोर्ट साहब सिटी

मैजिस्ट्रेट के पास भेज देंगे और साहब मुलाहज़ा शुद (Noted) लिखकर दस्तख़त कर देंगे।

महाराज—और फिर ?

बैरिस्टर—फिर क़ादिर को इख़्तयार होगा कि मुक़दमा दायर करे। उसकी तारीख़ पेशी मुक़र्रर होगी और आपको इत्तला दी जायगी।

इतने में बैरिस्टर साहब के बैरा ने बाहर से आवाज़ दी। मुहम्मद अस्करी, छुट्टन साहब और मुंशी महाराजबली गोल कमरे में गये, वहाँ मिर्ज़ा क़ादिर बग कश्मीरी, जो इनके इन्तज़ार में बैठे थे, उठ खड़े हुए। दुआ-सलाम हुई, गिलौरी दी गयी और बातें होने लगीं।

छुट्टन—आप जानते हैं, हमने क्यों आपको बुलाया है ?

क़ादिर—जी, ख़ूब जानता हूँ।

छुट्टन—फिर।

क़ादिर—फ़तह है।

छुट्टन—अच्छा, तो फिर जोड़-तोड़ चलो कुछ।

क़ादिर—सोचने की क्या ज़रूरत है, तोबा-तोबा ! अजी यों धर लिया जाय, यों चुटकी बजाते। मोतीचन्द साह, तहसीलदार मुंशी फ़ैज़उल्ला और नवाब अहमद शाह का सिटी मैजिस्ट्रेट से बड़ा याराना है। इन साहबान को सिखा-पढ़ाकर साहब सिटी मैजिस्ट्रेट के पास भेजिये कि यह जाकर बशीरुद्दौला की बड़ी ही शिकायत करें कि हुज़ूर अन्धेर हो रहा है, बहू-बेटियों को ज़बर्दस्ती घरों से पकड़वा बुलवाता है और बेइज़्ज़त करता है और पुलिसवालों को गाँठ लिया है।

अस्करी—इसका नतीजा क्या होगा ?

क़ादिर—नतीजा इसका यह होगा कि इन्स्पेक्टर और दारोग़ा दोनों को साहब बदल देंगे। इधर ये दोनों बदमाश बदले गये,

उधर बशीरुद्दौला फुट्टैल हो गया और किदरा को हमने अपनी तरफ फ ड़ लिया। फिर बशीरुद्दौला नाचकार पर तावड़तोड़ मुक़दमे दायर करा दूँगा। बस, अब आप कोई फ़िक्र न कीजिए। अब बन्दा रुखसत होता है, कल और आज आप इन तीनों रईसों को साहब के पास भिजवाइये कि वह धड़ल्ले से शिकायत जड़ें। गिलौरियाँ खाकर मिर्ज़ा क़ादिर बेग काश्मीरी रुखसत हुए।

पीर (सोमवार) के दिन चन्द सफ़ेद पोश रईस साहब की मुलाकात को गये। सबसे पहले साह मोतीचन्द साहब से मिले।

साहब—आपका मिज़ाज कैसा है, साहजी ?

साहजी—सरकार की बदौलत से।

साहब—शहर का क्या खबर है ?

साहजी—हुजूर, जब से यहाँ बशीरुद्दौला आये हैं तबसे भलेमानसों की नाक में दम है।

साहब—क्या बात ? कौन बशीरुद्दौला ?

साहजी—साहब, वह एक नवाब है, वह भलेमानसों की औरतों की बेइज्ज़ती करना चाहते हैं और भलेमानस की बहू-बेटी कब मंजूर करेगी। बस, उसके मर्द का दुश्मन हो जाता है।

साहब—(नोट-बुक पर नाम लिखकर), अच्छा हम देखेगा, वेल साहजी, हम आपसे फिर मिलेगा।

साहजी को रुख़सत करके साहब ने नवाब अहमदशाह को बुलाया। नवाब साहब चिक के पास जूता उतारकर अन्दर गये।

साहब—वेल, नवाब साहब, मिज़ाज शरीफ़ आपका ?

नवाब—शुक्र है आपका मिज़ाज अनवर।

साहब—वेल नवाब साहब, इस शहर में कोई नवाब बशीरुद्दौला है ? हमने बड़ी बुरी बात सुना है !

नवाब—उनकी न पूछिये साहब बहादुर, ऐसा दिक़ भलेमानसों को किया है उस शख्स ने कि मैं क्या अर्ज़ करूँ ।

साहब—वह कौन है और करता क्या है ?

नवाब—भलेमानसों और ख़ासकर रईसों का जानी दुश्मन है और झूठे मुकदमे बनाया करता है। बदमाशों से गँठा हुआ है और खुद झूठी गवाहियाँ जाके देता है।

साहब—बड़ा बुरा आदमी है।

नवाब—मगर आपको ख़ूब टोह लग गयी। ज़रूर इसका तदारुक कीजिये ।

साहब—वेल; हमको रत्ती-रत्ती हाल मालूम है बशीर का। ऐसा आदमी भलेमानस का दिक करनेवाला शहर में रहना ठीक नहीं ।

नवाब साहब रुख़सत हुए तो पेन्शन-याफ़्ता तहसीलदार फैजउल्ला की पुकार हुई। मिज़ाज-पुर्सी के बाद साहब ने पूछा, "आप तहसीलदार साहब, इसी शहर का क़दीम वाशिन्दा है ?"

तहसीलदार—जी हाँ, हुज़ूर ।

साहब—आप नवाब बशीरुद्दौला को जानता है कि वह कौन है ?

तहसीलदार—(लापरवाही से), हुज़ूर नौकरी में सारी उम्र इधर से उधर घूमता रहा। अभी कुछ ही दिनों से यहाँ आया हूँ, अच्छी तरह लोगों से वाकिफ़ नहीं; लेकिन, अगर हुज़ूर उसी वशीरुद्दौला को पूछते हैं जो यहाँ का खास रहनेवाला और कलकत्ते से वापिस आया है तो वह तो एक मशहूर बदमाश है। मुझे तो इनसे कभी वास्ता नहीं पड़ा, सुनी-सुनायी कहता

हूँ। और अगर कोई और वशीरुद्दौला हैं तो हुज़ूर मुझे नहीं मालूम।

तहसीलदार साहब तो रुखसत हुए और साहब सोचने लगे कि किस तरह जल्दी-से-जल्दी इस बदमाश से रिआया को आराम मिले।

शाम को साहब ने क्लब में पुलिस कप्तान कर्नल रौस से यह ज़िक्र किया और उन्हें हिदायत की कि वह जल्दी-से-जल्दी इस बदमाश की सरकोबी करें। दूसरे रोज़ कर्नल रौस ने अपने एक मौतबिर (विश्वास-पात्र) इन्सपेक्टर शहबाज़ख़ाँ और सब-इन्स्पेक्टर रामसिंह को बुलाया और सख्त ताकीद करके इस मामले की तहकीक़ात उनके सिपुर्द कर दी। दोनों ने जान लड़ा देने का वायदा किया। सब-इन्स्पेक्टर रामसिंह का मकान नवाब वशीरुद्दौला की कोठी के सामने ही था। उनको नवाब साहब का राई-रत्ती का हाल मालूम था, क़ब्र तक से वाक़िफ़ थे। नवाब बशीरुद्दौला की बदमाशी के बीसियों वाक़यात उनको मालूम थे।

वहाँ से रामसिंह घर आये और मुहल्ले के मशहूर गुण्डे शमसू को बुलवाया। मियाँ शमसू पक्के गुण्डे थे। इनसे कोई काम नहीं बचा था। जुआ इनके यहाँ होता था, चण्डू इनके यहाँ उड़ती थी, दलाली और कुटनापा यह करते थे और बुर्दा-फ़रोशी तो इनका ख़ास पेशा था ही। किसी की इज़्ज़त खराब कर देना, सरे बाज़ार जूते मार देना या पिटवा देना इनके बायें हाथ का खेल था। नवाब वशीरुद्दौला मियाँ शमसू से बीसियों काम ले चुके थे। वह उनकी क़ब्र तक से वाक़िफ़ था। मियाँ शमसू के आते ही रामसिंह ने सबको हटा दिया, पहिले तो डराया, धमकाया और फिर इनाम का लालच देकर अपनी तरफ़ फोड़ लिया। गुण्डे की गुण्डई बिना पुलिस की